THE BOOK WAS DRENCHED

UNIVERSAL
LIBRARY
OU_186437
UNIVERSAL
LIBRARY

सरल
स्वास्थ्य और योगासन
सचित्र

लेखकः—

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती.

प्रकाशकः—

पुस्तक मन्दिर मथुरा.

१९५३ } { मूल्य

प्रकाशक:—
पुस्तक मन्दिर,
मथुरा.

1958 Checked 1965

अगस्त १९५१ } सर्वाधिकार स्वरक्षित { मूल्य २)

Checked 1961

मुद्रक—
हरीहर मशीन प्रेस,
मथुरा।

सरल स्वास्थ्य योगासन की—

विषयानुक्रमणिका

विषय	पृष्ठ	विषय	पृष्ठ
प्राक्कथन	१	क्रियां और योगासन	१११
पञ्चतत्व	६	आसनों का विश्लेषण	११७
पुरुष-देह	१८	उल्टे खड़े होकर करने वाले आसन	१२४
स्त्री देह	२०	खड़े होकर करने वाले आसन	१३६
स्वास्थ्य के साधन	२३	बैठकर करने वाले आसन	१४६
मनुष्य जीवन की ४ अवस्थायें	३३	लेटकर करने वाले आसन	१७३
भोजन	४३	समस्त आसनों द्वारा शरीर को लाभ	१८५
प्राकृतिक सौन्दर्य	५०	क्लिष्ट आसन व उनकी क्रिया	१८७
दिनचर्या	५४	प्राणायामिक क्रियाओं के आसन	१८८
व्यायाम	५७	व्यायामिक क्रियाओं के आसन	१९५
मानसिक विकास	७६	हठ योगिक क्रियाओं के आसन	२००
भोग विलास	७६	आसनों से रोग चिकित्सा	२०५
रोगों की उत्पत्ति व उपचार	८३		
स्वास्थ्य और योग साधन	९०		
प्राणायाम	९१		
आसनों की आवश्यकता	९९		
आसन बनाम व्यायाम	१००		

चित्रों की अनुक्रमणिका

चित्र	पृष्ठ	चित्र	पृ.
मोटा, दुबला, स्वस्थ्य	१२१	मुक्त हस्त वृक्षासन	१३४
शीर्षासन	१२५	ऊर्ध्व पद्मासन	१३५
ऊर्ध्व सर्वांगासन	१२६	वातायनासन	१३६
सर्वांगासन	१३१	त्रिकोनासन	१३७
मत्स्यासन	१३२	पादहस्तासन	१३८

ताड़ासन	१४०
कोणासन	१४३
हस्तपादांगुष्ठासन	१४४
गरुणासन	१४५
उत्कटासन	१४५
पादांगुष्ठासन	१४७
मयूरासन	१४८
सिद्धासन	१५०
बकासन	१५१
जानुशिरासन	१५३
पद्मासन	१५४
बद्ध पद्मासन	१५६
चक्रासन	१५७
गर्भासन	१५८
गोमुखासन	१६१
द्विहस्तभुजासन	१६२
एकहस्त भुजासन	१६३
एकपाद शिरासन	१६४
द्विपाद शिरासन	१६५
मत्स्येन्द्रासन	१६५
कण्ठपीड़नासन	१६६
लोलासन	१६७
पश्चिमोत्तानासन	१६८
चतुर कोणासन	१७०
प्राणासन	१७०
आकर्ण धनुषासन	१७२
उत्थित पद्मासन	१७३
मत्स्यासन	१७५
सर्पासन	१७६
वृश्चिकासन	१७७
उष्ट्रासन	१७८
वज्रासन सुप्त वज्रासन	१८०
मयूरासन हंसासन	१८१
शलभासन	१८२
तोलांगुलासन	१८३
उत्तानपादासन	१८४
पवन मुक्तासन	१८५
योगिक	१८८
राजसी	१८९
सांध्यप्राण	१९०
मौना	१९१
मानसी	१९२
आध्यात्मिक	१९३
चक्रपाणि	१९४
लिंगादेशिक	१९५
सांख्यिक	१९६
साम्यक	१९७
श्यक्रिया	१९७
सूरा	१९८
पादमत्स्यक	१९९
भेखामक	२००
हठ साधक	२०१
कपालिक	२०२
वैतालिक	२०३
नाट्य [९ चित्र]	२०३

सरल

स्वास्थ्य और योगासन

(सचित्र)

प्राक्कथन

जिस तरह मनुष्य को अन्न, जल, और वायु की नितान्त आवश्यकता होती है इसी तरह मनुष्य के हृदय और शरीर की भी कुछ आवश्यकतायें हैं। अब हम पहिले शरीर की आवश्यकताओं का विश्लेषण करें तो उनकी तालिका इस प्रकार होगी।

१—रुधिर
२—वायु
३—चेतना
४—स्वच्छता
५—आरोग्यता

अब हम इन संज्ञाओं की व्याख्या करते सम सतीन बातों को अपने ध्यान में रखेंगे। प्रत्येक बात का ध्यान रखते हुये हम प्राकृतिक अप्राकृतिक तथा मनोवैज्ञानिक विषयों पर प्रकाश डालते हुये विचार विश्लेषण करते हुये इस बात पर विशेष प्रकाश डालेंगे कि इन सब का मनुष्य के शरीर पर क्या प्रभाव रहना है।

१. रुधिर—शरीर की नसों में रक्त बहता है। शुद्ध रक्त पतला होता है और उसका चलन धमनियों में अधिक तेजी से इसी कारण होता है कि उसकी शुद्धता के कारण स्नायुओं को पूर्ण शक्ति मिल सके और वह पुष्ट हो सकें। रुधिर का प्राकृतिक रूप पतला होता है और उसका कार्य शारीरिक पुष्टता के लिये अति आवश्यक है। रुधिर का अप्राकृतिक रूप गाढ़ा और मटमैले रंग का होता है इस कारण उसका बहाव धमनियों में कमजोर रहता है। शुद्ध रक्त के लिये मानसिक शक्ति की आवश्यकता हमेशा रहती है और उसकी पूर्ति उसी क्षण हो सकती है जब मनुष्य की मानसिक शक्ति का विकास भली तरह हो जाता है।

२. वायु—जिस तरह पेड़ों को जीवित रहने के लिये वायु की आवश्यकता होती है उसी तरह मनुष्य को भी वायु की आवश्यकता होती है। जिस तरह पेड़ वायु का उपभोग करता है उसी तरह मनुष्य भी वायु का उपभोग करता है। वह शुद्ध वायु को सांस द्वारा खींचकर अपने फेफड़ों की तथा अङ्गों की परिपूरकता की आवश्यकताओ की पूर्ति करता है। तथा दूषित वायु को फिर नाक द्वारा ही वापिस फेंक देता है। रक्त संचालन, रुधिर शुद्धि, स्नायु गठन, भोजन पाचन आदि कार्यों के लिये शुद्ध वायु की नितान्त आवश्यकता होती है।

३. चेतना—रुधिर की शुद्धता से वीर्य बनता है और वीर्य ही से शरीर में पुष्टता रहती है। शारीरिक पुष्टता मनुष्य का जीवन है और यह उसके उद्देश्य प्राप्ति के लिये महान आवश्यक है। वीर्य एक तरह से शरीर का राजा है क्योंकि इसकी पुष्टता पर ही शरीर की चेतना और अचेतना निर्भर है। चेतना से ही ज्ञान होता है और बुद्धि का विकास भी जीवन प्राप्त होने के समय ही से

मनुष्य को चेतना प्राप्त होती है और जब तक चेतना रहती है तब तक ही वह जीवित कहलाता है और जैसे ही उसकी चेतना विलुप्त हो जाती है वह मृतक हो जाता है और तब उसके शरीर का कोई महत्व नहीं रह जाता है।

४. **स्वच्छता**—मानव देह धारी ही नहीं वरन् प्रकृति की हर देन में स्वच्छता की मात्रा है। प्रकृति के ढङ्गों ही से पता लगता है कि स्वच्छता हर वस्तु के लिये नितान्त आवश्यक है। जैसे पेड़ में रोज़ नये पत्ते निकलते हैं और उसके पत्ते रोज़ कुछ न कुछ गिरते हैं। केवल वही पत्ते गिरते हैं जिनकी आवश्यकता पेड़ को नहीं होती या जो उसको अस्वच्छ करते हैं। वह पत्ते पृथ्वी पर गिरते हैं और पृथ्वी को अस्वच्छ बनाते हैं मगर नहीं पृथ्वी को भी स्वच्छ करने के लिये वायु उन्हें उड़ाकर नदी तीर पर ले जाती है जहाँ से वह सागर में जाते हैं मगर सागर भी उन्हें अपने गर्भ में स्थान नहीं देता वह उन्हें अपनी लहरों के द्वारा बाहर फेंकता है और इस तरह वह पानी तथा लहरों के आघात के कारण शीघ्र ही गल जाते हैं और अपना अस्तित्व गवां देते हैं। इसी तरह शरीर के लिये भी स्वच्छता का होना अति आवश्यक हैं। नहाना, तैल लगाना आदि ही केवल स्वच्छता के द्योतक नहीं है वरन् शरीर की अन्दरूनी सफाई का महत्व विशेष है। विषैली वायु, दूषित रुधिर अस्वस्थ स्नायु आदि सब शरीर के जघन्य शत्रु हैं। अतः इनकी शुद्धि की आवश्यकताओं की पूर्ति करते रहना मनुष्य का कर्त्तव्य है।

५. **आरोग्यता**—शरीर एक तरह की इमारत है। जिस प्रकार नई इमारत जब बनकर तैयार होती है तो सब को भली लगती है। मगर जैसे २ वह इमारत पुरानी होने लगती है तो वह कुछ सफाई मरम्मत वगैरह भी चाहती है। उसी तरह शरीर भी

देख-रेख चाहता है। अगर उनकी पूर्ण देख रेख की जाती है तो वह स्वस्थ्य रहता है। यदि असावधानी की जाती है तो धीरे २ रोग उसमें अपना घर बना लेते हैं। रोग जहाँ शरीर में एकबार घुसा कि वह शरीर पर अपना कब्जा कर लेता है और फिर धीरे २ अनेक रोगों को अपना मित्र बनाकर उस शरीर में प्रवेश करा देता है। रोगी का जीवन उस नौका की भाँति हो जाता है जिसमें अनेकों दरारें हो जाने के कारण सदैव पानी रिसा करता है और किसी भी क्षण अधिक पानी भर जाने के कारण नौका को डूबने का खतरा ही लगा रहता है। शरीर का पूर्ण सुख उसी समय उठाया जा सकता है जब शरीर में कोई रोग न हो और मनुष्य आरोग्य हो। प्रकृति हर वस्तु को अयोग्य पैदा करती है और जब तक ही उन्हें अपनी गोद में स्थान देती है तब तक वह आरोग्य रहते हैं। जहाँ वह रोग युक्त हुये वहीं वह स्वतः ही उसका नाश करती है। अतः आरोग्यता की आवश्यक्ता शरीर का अपना स्थान बनाये रखने के लिये नितान्त आवश्यक है।

जिस प्रकार शरीर को इन तमाम बातों की गहरी आवश्यकता है उसी तरह मनुष्य के हृदय को भी नीचे लिखी चीजों की बहुत अधिक जरूरत है—

१—पुष्ट शरीर

२—नियमित जीवन क्रम

१. पुष्ट शरीर—पुष्ट शरीर हृदय के लिये इस वास्ते अति आवश्यक है कि शरीर ही से हृदय की दृढ़ता और उसकी चलायमानता का आभास होता है। हृदय शरीर के अङ्गों का संचालन करता है और अङ्गों का संचालन उस समय ही अच्छी तरह हो सकता है जब कि शरीर निरोगी हो। उसका हर अङ्ग पुष्ट हो तथा अपने स्थान पर कार्य पूरा कर सकने की क्षमता रखता हो। उसका काम मोटर के इञ्जन में लगे हुये कारबेटर के समान होता

है। जिस तरह कारबैटर पैट्रौल का संचालन स्वयम् करते हुये इञ्जन को शक्ति प्रदान करता है उसी तरह हृदय भी रक्त फैंकने का कार्य अपने पास रखते हुये तमाम शरीर पर अधिपत्य रखता है अगर कोई आपके डन्डा मारने को हाथ बढ़ाये तो आँखें उसको देखेंगी और उसका सन्देशा हृदय को देंगी और हृदय अपने स्थान से ही आपके हाथों को आदेश देगा कि वह डन्डे को रोकें, सिर से कहेगा कि तुम नीचे होकर वार चुकाओ और पैरों को आदेश देगा कि चपलता से बचाव करते रहो यदि कुछ न होसके तो भाग खड़े होना। एक ही समय में एक पल भर में हृदय यह तमाम काम तब ही कर सकता है जब आपके अङ्ग पुष्ट हैं। यदि आँखों से कम दीखता है, हाथ पैरों को लकवा मार गया है सिर कंपकपाता है तो वह कुछ नहीं कर सकता। आपकी ज्ञानेन्द्री हृदय है और सारे अङ्ग उसके सहायक हैं। वह उस समय तक क्या करे जब तक उसके सहायक ही उसका साथ न दें।

इन अङ्गों के अलावा भी हृदय के दस केन्द्र हर अङ्ग पर है जिन्हें एक तरह के मीटर या स्वीच का सा काम करना पड़ता है। यह सब चक्र कहलाते हैं। इनमें चेतना होती है और उनका कार्य हृदय को सूचनायें देना ही है इनका विस्तृत उल्लेख हम अगले परिच्छेदों में करेंगे।

हृदय की संचालन गति के सन्तुलन के लिये शरीर का पूर्ण आरोग्य होना अति आवश्यक है।

२. नियमित जीवन क्रम—जीवन क्रम का भी विशेष असर शरीर पर पड़ता है। प्रकृति के नियमों के उचित पालन से शरीर पुष्ट तथा स्वास्थ्य रहता है और जब उसमें विकार होने लगते हैं तो वह रोगी हो जाता है और उसमें तरह २ के दोष होने लगते

हैं। सूर्योदय से पहले उठना, शौचादि से निवृत होकर स्नान ध्यान करके भोजन, उसके बाद परिश्रम, सूर्यास्त बेला मे अपने काम को समाप्त करके फिर शरीर को स्वच्छ करके भोजनादि से निवृत होकर थोड़ा सा टहलने के बाद सो जाना जीवन का नियमित क्रम है। सोलह घन्टे काम और आठ घन्टे आराम जीवन को दीर्घ करता है। मगर लोग इसका महत्त्व नहीं समझते। कुछ आराम अधिक करते हैं और काम कम; और कुछ काम अधिक करते हं और आराम कम। यह दोनों ही अवस्थायें अहितकर हैं। दिवस काम करने के लिये है और रात आराम के लिये। इसमें उलट-फेर कर देने से हृदय पर बुरा असर पड़ता है। और शारीरिक अङ्गों पर भी। नतीजा यह होता है कि हमारे शरीर का ह्रास होने लगता है।

योगाभ्यास का उद्देश्य.

शरीर की सुदृढ़ता तथा हृदय की स्थिरता प्राप्त करने के लिये योगाभ्यास की नितान्त आवश्यकता है। योग साधन से चेतना आती है और शरीर मे से समस्त रोगों का नाश होता है। शरीर समस्त व्याधियों से छुटकारा पाकर अपनी अलौकिक गति को प्राप्त होता है। मनुष्य को बल मिलता है, शरीर को पुष्टि प्राप्त होती है, हृदय को स्थिरता मिलती है और इन तमाम चीजों से जो वस्तु प्राप्त होती है उसे आनन्द कहते है और यही आनन्द वह अलौकिक पदार्थ है जिसकी कामना करते २ मानव अपना समस्त जीवन बिता देता है। एक बहुत पुरानी कहावत है—

प्रथम सुख निरोगी काया, द्वितीय सुख पल्ले में माया।
तृतीय सुख सुलक्षणी नारी, चतुर्थ सुख पुत्र आज्ञाकारी॥

अतः पुरातन काल ही से आरोग्यता का महत्त्व गहरा रहा है। योग साधन द्वारा हमारा यह मतलब पूरा हो जाता है।

योगाभ्यास के लिये साधना की आवश्यकता होती है। साधना ही द्वारा संसारके सारे पदार्थ प्राप्त होतेहै बिना साधना किये तो खाना तक नहीं मिलता। योगाभ्यास के लिये साधना जरूरी है क्योंकि जब तक यह साधना नहीं होती तब तक उसका यथार्थ आनन्द प्राप्त नहीं होता।

योगाभ्यास से शरीर को शुद्ध रक्त मिलता है, फेफड़ों में नवीन शक्ति का सञ्चार होता है। नाड़ियां स्वच्छ होती हैं, रोगों का नाश होता है, वीर्य बलवान होता है, हृदय को शक्ति प्राप्त होती है। इन्द्रियों को शक्तिशाली बनाने के लिये वृत्तियों को रोकना पड़ता है और वृत्तियों के रोकने से जीवन में नियमन प्राप्त होता है, और जीवन में नियमन प्राप्त होने से मनुष्य सुखी रहता है।

योगाभ्यास भी तीन तरह से होता है अतः उनको दृष्टि में रखते हुये तीन भागों में विभाजित है—

१—हठ योग

२—राज योग

३—चितामणि योग

पहले दो योग तो विशेष वर्गों के लिये ही सीमित हैं क्योंकि उनको साधारण मनुष्य गृहस्थ जीवन पालन करते हुये नहीं कर सकता। अन्तिम योग—चिन्तामणि योग ऐसा योग है जिसे हर मनुष्य चाहे जिस अवस्था में चाहे पालन कर सकता है। उसे इसके पालन के लिये किसी विशेष स्थान, सामान, खाने, पीने आदि की कोई व्यवस्था नहीं करनी पड़ेगी। उसके समय का अपहरण नहीं होगा और न उसके कार्य क्रम ही में कोई बाधा होगी।

योगाभ्यास करने के लिये मन और शरीर दोनों को चेतन रखते हुये आगे को बढ़ना चाहिये। इसकी साधना से मनुष्य

को आनन्द प्राप्त होता है। यह कोई रोजगार तो है नहीं जहाँ आज खरीदा और कल बेचा मुनाफा घर रहा। यह तो आनन्द की वस्तू है जिसका आनन्द एक दो दिन में नहीं आता। इसको प्राप्त करने के लिये साधना करते रहने की आवश्यकता है। जैसे २ साधना बढ़ती जायगी उसका आनन्द प्राप्त होता जायेगा। योगाभ्यास का मुख्य अङ्ग आसन हैं। आसन शारीरिक अवस्थाओं को कहते हैं। विविध अङ्ग जब एक विशेष तरीके ही से किसी लाभ विशेष के लिये उपयोग किये जाते हैं तो वह आसन कहलाते है।

प्राणायाम वह अपूर्व सौगात है जिसका काम शरीर को शुद्ध करना है। आसन तथा योग साधना के हर पहलू पर प्राणायाम कर पूरा असर होता है जिसका पूर्ण विवरण आगे किया जायेगा।

कहने को तो सीधे तौर पर यही कहना उपयुक्त होगा कि योग साधन से मनुष्य की शारीरिक और मानसिक सुखों की प्राप्ति होती है जिनके कारण वह दीर्घायु होता है और जीवन के लक्ष तक पहुंचने में समर्थ होता है।

योग और आसनों के सम्मिश्रण से योगासन का जन्म हुआ है अतः इनकी व्याख्या आवश्यक है। इनके गुणों को देखते हुये हर समझदार आदमी का कर्त्तव्य है कि वह उनका नियमित रूप से पालन करके जीवन–सुख को अवश्य उठायें।

—लेखक

स्वास्थ्य प्रकरण

प्रथम सर्ग

पंचतत्व

स्वास्थ्य सम्बन्धी जानकारी अति आवश्यक है अतः हमको इसकी पूर्ण जानकारी होनी चाहिये। तब ही हम योग साधन की ओर अपना पूर्ण ध्यान दे सकते हैं और उसका पूर्ण लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

मानव शरीर पांच तत्वों से बना है तथा हमें यह भी जानना चाहिये कि प्रकृति की हर वस्तु की रचना वह वस्तु जिसे हम छू सकें देख सकें, या जान सकें-इन्हीं पंच तत्वो द्वारा हुई हैं। इन पंचतत्वों के नाम हैं—

१—वायु

२—जल

३—अग्नि

४—आकाश

५—पृथ्वी

जिन वस्तुओं को हम नहीं देख सकते हैं उनमें इन तत्वों की कमी है। प्रकृति की कुछ ऐसी मशीन है जो इनके मिश्रित होते ही हमारे सामने एक पदार्थ पैदा कर देती है।

अब प्रश्न हो सकता है कि जब पांचों तत्व ही सब वस्तुओं में विद्यमान है तो संसार की सब चीजों का निर्माण एक सा क्यों नहीं ?

इसका उत्तर यह है कि इन पंचतत्वों का अनुपान अर्थात् मात्रा एक सी हर वस्तु में नहीं रहती। जिस प्रकार थोड़े नमक से सब्जी खाने में अच्छी लगती है और अधिक नमक से काली होकर खाने में अच्छी तो क्या मुंह में रखने लायक नहीं रहती उसी प्रकार संसार के विभिन्न पदार्थों में इन तत्वों की मात्रायें भी भिन्न हैं।

जड़ पदार्थों की बात छोड़कर जब हम चेतन पदार्थों की ओर आते हैं तो हमें समानता का आभास होता है। आदमी हो या जानवर, पशु या पक्षी सब के शरीर एक से ही होते हैं। कहने का मतलब यह नहीं कि उनकी बनावट एक सी होती है वरन उनके तत्व एक से ही होते हैं। उन सबके शरीर में रक्त होता है, माँस होता है, हड्डियाँ होती हैं, खाल होती हैं और बाल होते हैं।

इसका मतलब यह है कि हम सब चेतन जीवों की शरीरिक बनावट भिन्न है, परन्तु शरीर एक ही वस्तुओं के बने हैं।

मानव शरीर.

मनुष्य का शरीर एक हड्डियों का ढांचा है। इस पर खाल का खोल चढ़ा है और अन्दर हड्डियों को पुष्ट करने के लिये मांस भी हड्डियों से लपेट दिया गया है।

बनावट को गौर से देखा जाय तो मालुम होगा कि बहुत ही चतुराई के साथ विधाता ने शरीर को बनाया है। हर जगह जोड़ स्थिर दिये हैं ताकि काम काज में परेशानी न हो सके और साथ ही साथ उनकी रक्षा का प्रबन्ध कर दिया है।

मानव शरीर के ढांचे पर निगाह डालने से तथा उसे अच्छी तरह से जान सकने के लिये हमें उसके हर अङ्ग की पूरी जानकारी रख लेनी चाहिये।

मानव शरीर के मुख्य भाग जिन की जानकारी आवश्यक है निम्न है :—

सिर

शरीर के सबसे ऊपर के भाग को सिर कहते हैं। यह ऊपर से गोलाई लिए हुये होता है। इसके अन्दर आंख, मुंह और कान होते हैं। तीनों इन्द्रियों तथा नाक के संचालन के लिए पूर्ण व्यवस्था है। कहा जाता है कि यह सब मिलकर मनुष्य को चैतन्य बनाती है और इस तरह सिर ही में मस्तिष्क का केन्द्र भी होता है। मस्तिष्क शरीर का राजा है वही शरीर को सोचने, करने और न करने की सलाह देता है।

रीढ़

सिर का वजन रीढ़ की हड्डी के ऊपर वाले भाग पर सधा हुआ है। सिर को साधने के लिए गरदन बनाई गई है। गरदन एक तरह की गुफा है जिसमें होकर शरीर और सिर में आने जाने के लिए नलियाँ तथा नसें विद्यमान हैं। मुंह का खाना पेट तक पहुँचाने के लिए भी तो एक बड़ी नली की आवश्यकता थी। अतः वह नली भी गरदन ही से होकर आमाशय तक जाती है। बिना रीढ़ की हड्डी के मानव शरीर केवल मास का लोथड़ा ही होता। रीढ की हड्डी गरदन से लेकर गुदा तक जाती है।

हाथ

गरदन के पास से कन्धे बनते हैं और फिर हाथ की हड्डियां होती हैं और इसमें दो जोड़ होते हैं। पहला जोड़ तो कन्धे पर

होता है और दूसरा कोहनी का जोड़ होता है। कलाई और उँगलियों में भी जोड़ होते हैं।

सीना

जिस तरह शरीर के पिछले भाग को रीढ़ साधे रखती है उसी प्रकार अगले हिस्से को सीना साधता है। यह एक तरह से बक्स होता है क्योंकि इसके अन्दर ही दिल होता है और दिल से ही समस्त शरीर को रक्त का संचालन होता है। सांस द्वारा हवा शरीर में जाती है और फिर दिल के पास आकर वह सीने मे जमा होती है और अपनी तेजी से खून को शरीर के तमाम भाग में फेंकती है। यह एक तरह का केन्द्र है जहाँ से तमाम नसों मे खून का आना-जाना लगा रहता है।

आमाशय

मुंह से खाना नली द्वारा आमाशय तक पहुँचता है आमाशय उस खाने को पचाता है और जितना रक्त हो सकता है बनाता है। रक्त को तो वह दिल के पास फेंकता है और जो कचरा बच जाता है उसे गुदा में होकर निकाल देता है।

पैर

आमाशय के नीचे पैर होते हैं। हाथो की तरह पेर मे भी तीन हड्डियां होती हैं। पहली हड्डी आमाशय के पास, दूसरी जांघ, और तीसरी पिंडली तक होती है। इसमें भी दो जोड़ होते हैं। पहला जांघ के ऊपर व दूसरा घुटने के पास होता है। पैर का पञ्जा भी हिल डुल सकता है और पैरों की उँगलियों में भी कई जोड़ होते हैं।

यह हुई शरीर की बनावट और उसकी हड्डियों की ढांचे की बात।

संचालन

मानव शरीर भी एक मशीन की भांति है। उसके प्रत्येक अङ्ग की स्थिति इस तरह रखी गयी है कि हर अङ्ग अपना कार्य बिना किसी रुकावट के करता रहे। कान सुनते हैं, आँखें देखती हैं, जीभ स्वाद लेती है, दांत चबाते हैं, नाक सूंघती है, हाथ काम करते हैं, पेट खाना पचाता है, पैर चलते हैं। हर अङ्ग अपना कार्य अपने आप बिना किसी प्रेरणा के स्वयम् ही करता है।

उदाहरण के तौर पर लीजिये—जब मनुष्य सुबह सोकर उठता है तो उसका मुंह स्वतः ही फट जाता है और उसे जवाहीं आती है इसका मतलब है कि रात भर जो कुछ भी विषाक्त गैस उसके शरीर में इकट्ठा होगयी है वह बाहर निकल जाती है और जब वह जवाही लेकर अङ्ग तोड़ता है तो उसका आशय यह है कि उसके सारे अङ्गों के जोड़ अपने आप खुल जाते हैं और उनमें ग्रीस लगा जाता है ताकि स्थिर रहने के कारण जोड़ अपना कार्य पूर्ण करने में समर्थ हो जाते हैं।

उसे एकदम लघुशङ्का की हाजत होती है ताकि मूत्राशय में रात भर का रुका हुआ पानी एकदम साफ हो जाये, और मूत्रत्याग के साथ ही उसे पाखाने की आवश्यकता होती है क्योंकि रात भर पेट ने जितना भी अन्न पचाया होता है वह तो रुधिर के रूप में शरीर के अन्य भागों में चला जाता है और कचरा गुदा के मार्ग द्वारा बाहर जाने का उपक्रम करता है।

शौचादि की निवृति के बाद मनुष्य के मुंह का स्वाद बिगड़ जाता है और उसको दांत साफ करने की आवश्यकता होती है। तब शरीर में एक तरह की सरसराहट होती है और नहाने की

आवश्यकता महसूस होती है। नहाने के बाद भूख लगना स्वाभाविक है। खाने के बाद पानी की आवश्यकता है। तब आदमी काम चाहता है उसके हाथ, पैर, दिमाग, में उलझन होती है क्योंकि भोजन को पचाने के लिये परिश्रम चाहिए। बिना किसी कार्य के भी आदमी उलझा रहता है उसका मन शान्त नहीं रहता।

काम से आदमी थकता है उसका अङ्ग २ खुल जाता है तब उसे भोजन चाहिए और सन्ध्या के भोजन के बाद उसे टहलने की आवश्यकता होती है। वह घूमना चाहता है ताकि स्वस्थ वायु उसे प्राप्त हो सके। तब उसे निद्रा घेरती है क्योंकि नींद की प्राप्ति से ही उसके शरीर की स्फूर्ति फिर लौट आती है।

इस तरह हम देखते हैं कि मानव शरीर अपने आप अपने कार्य को पूरा करता रहता है।

हृदय

मानव शरीर में हृदय का अपना विशिष्ट स्थान है। यदि हृदय न हो तो उसमें चेतना ही न रहे। वह विलुप्त की भांति सब कुछ कर सकने योग्य होने पर भी कुछ कर सकने के योग्य नहीं रह सके। मगर हृदय को चेतना शक्ति में सहायता करने वाले १० चक्र भी हैं जो शरीर के हर अङ्ग पर हैं और वह स्वीच का काम करते हैं। इन चक्रों को हम निम्न प्रकार से कहते हैं—

१. भ्रमर गुहा—यह चक्र ललाट के उर्ध्व भाग में होता है। यहाँ ललाट की समस्त नाड़ियां आकर मिलती हैं और माथे के आस पास या मतिस्ष्क की समस्त सूचनायें यह हृदय को देता है। लिखते, पढ़ते, कसीदा कारी के समय, तथा अन्य उन सभी कार्यों के करते समय जहाँ आँखों और मस्तिष्क के कार्य की आवश्यकता होती है यही चक्र उस भार को वहन करता है और

जब यह थक जाता है तो सिर दर्द पैदा हो जाता है और तब कमजोर दिमाग़ में पैदा होने वाली अनेकों बीमारियां हो जाती हैं।

२. आज्ञा- दोनों भौंओं के मध्य में यह चक्र होता है। समस्त शरीर पर इसका अधिक प्रभाव होता है। आँखें शरीर के दो रोशनदान होती हैं जो कुछ वह करती हैं या देखती हैं उसका सन्देश सन चक्र को ही प्राप्त होता है और वहां से हृदय को तब उसका स्पष्टी करण होता है। हृदय जब ज्ञात करना चाहता है कि इस समय दिन है अथवा रात्रि तो यह कार्य इस चक्र का ही है कि वह नेत्रों को खुलने की आज्ञा दे।

३. सहस्रार—यह चक्र रसनाके लिए तालू के ऊपरी भाग में होता है। इसके द्वारा तमाम स्वादादि का पता लगता है। मुंह का स्वाद यह बनाये रहता है और निरन्तर लुआब बना २ कर शरीर को पाचन शक्ति के लिए दिया करता है। इसका मुख्य कार्य ही रसना की सहायता करना है।

४. अनहत—यह ठीक हृदय के पास ही होता है जिसे मन कहते हैं। हृदय के सारे व्यापार इसके ही परामर्श से नियमित होते हैं यह वह साधना अङ्ग है जो ऊँच, नीच, प्रेम, भक्ति, क्रोध, दर्या सौहद्रि आदि का फैसला करता है तथा जिसके लिए मनुष्य अक्सर कहा करता है कि इस कामको मेरा मन नहीं चाहता। यह वही मन है जो "जी" के नाम से भी विख्यात है।

५. विशुद्धि- हंसली की दोनों हड्डियों के बीच में जहाँ गला होता है हाथ के अँगूठे के बराबर की एक नसों की गोली सी होती है यही चक्र इस नाम से विख्यात है। इसका मुख्य काम स्वर का ज्ञान कराना है तथा बोलना भी है। जैसे ही बालक पैदा

होता है वह रोता है जब तक मरता है "राम-राम" कहता ही मरता है। अन्त करण वस्तु को कण्ठ स्वर द्वारा प्रकाश में लाने का कार्य इस चक्र का है।

६. **मनश**—यह आमाशय के ऊपर है। भोजन के पाचन से जो भी शक्ति शरीर को प्राप्त होती उसके संचय में इसका गहरा हाथ है। इसकी सहायता से ही आमाशय के सारे कार्य पूर्ण होते हैं और साथ ही इसका कार्य आमाशय की सूचनायें हृदय और मस्तिष्क तक पहुंचाना भी है। मनन शक्ति को प्रेरणा तथा सहायता इस कारण से मिलती है कि अन्न का, पाचन का, तथा भोजन का मस्तिष्क से गहरा सम्बन्ध है।

७. **सूर्य**—यह चक्र नाभि के ऊपर की तरफ दायीं ओर है। जब से जीव गर्भाशय में प्रवेश करता है और अपने शरीर का विकास प्रारम्भ करता है उस समय से उसे भोजन नाभि द्वारा नली से ही प्राप्त होता है। इसका सम्पर्क समस्त पेट आंतड़ियों, आमाशय आदि सब से है। इसका कार्य सदा से क्षुधा को घटाना बढ़ाना ही है।

८. **मणिपूरक**—यह ठीक नाभि पर ही है। इस लिए ऊपर के धड़ और नीचे की ओर के धड़ की व्यवस्थाओं को कायम रखे रहता है और उसमें समता भी रखता है। इसका कार्य शरीर में समता रखना अति आवश्यक कार्यों में से हैं। इसको चेतन रखने से मनुष्य की स्थिरता बढ़ती है वह दिव्य दृष्टि तक प्राप्त कर लेता है।

९. **स्वादिष्ठान**—यह मूलाधार के चार अँगुल ऊपर होता है। इसमें अति आवश्यक शक्ति होती है। इसकी सहायता से ही

मूत्रपात होता है तथा इसकी चेतना द्वारा ही मनुष्य विषयों को भोग सकता है। उसमें प्रेम करने का गुण प्राप्त हो जाता है और वह अपने जीवन को स्थिर कर सकने में समर्थ हो जाता है।

१० **मलाधार**—इस चक्र की स्थिति गुदा के पास होती है। यह आमाशय के द्वारा पचाये हुये भोजन के अवशेष को बाहर निकालता है, शुद्ध भोजन को रक्त बनाता है और शरीर को पुष्ट बनाता है। इस चक्र द्वारा ही वीर्य सुरक्षित रह पाता है। और जब भी वीर्य-पात करने की आवश्यकता प्रतीत होती है तब ही इस चक्र पर जोर डालना पड़ता है। इस चक्र की सहायता से ही हमारे जीवन की शृङ्खला चलती है और इसमें चेतना प्राप्त होजाने से ही मनुष्य दीर्घायु हो जाता है।

अपने इन दस चक्रों की सहायता से हृदय, शरीर पर पूर्ण अधिकार बनाये रखने में समर्थ होता है। हृदय से इन समस्त चक्रों का सम्बन्ध एक ही नाड़ी द्वारा है, जिसे ज्ञान नाड़ी या नब्ज भी कहते हैं। इस नाड़ी द्वारा हृदय अपनी गति का भाग इन चक्रों को ही आदान प्रदान करता रहता है और हृदय की गति ही से मनुष्य का जीवन रहता है। यदि हृदय अपना मुख्य कार्य अर्थात् रक्त को धमनियों द्वारा खींचना तथा फेंकना छोड़ दे तो शरीर कृश होकर एक दम शक्ति-हीन हो जाये।

हृदय के इस कार्य में वायु का गहरा हाथ होता है। क्योंकि वायु द्वारा ही रक्त की सफाई होती है और हृदय में उसे खींचने तथा फेंकने की शक्ति रहती है। फुफ्फुस का कार्य बिना वायु की सहायता के नहीं हो सकता। इस कारण योगाभ्यास में प्राणायाम पर विशेष जोर दिया गया है, ताकि अधिक से अधिक तादाद में शुद्ध वायु का आदान प्रदान होकर हृदय की वायु सम्बन्धी सारी आवश्यकताओं की पूर्ति होसके।

प्राणायाम किये बिना योग साधन नहीं किया जा सकता और इसके करने से शरीर के समस्त अङ्गों को चेतना मिलती है और इन चेतनाओं का उल्लेख दूसरे प्रकरण "योगाभ्यास" में किया जायेगा।

दूसरा सर्ग

पुरुष देह

ऊपर वाले सर्ग में तो केवल शारीरिक ढांचे का जिक्र किया गया है। प्रकृति ने नर और मादा के देह में कुछ फर्क अवश्य रखा है। और इस फर्क के लिये उसने मांस पेशियों से कार्य लिया है। पहले ही बताया जा चुका है कि अस्थि-पिंजर तो केवल एक ढाँचा है और उसे शक्ल देने के लिये माँस पेशियों की जरूरत होती है। पुरुष और औरत के शरीर में माँस पेशियों का ही अन्तर होता है।

खास अन्तर के विषय हैं-

सीना

पुरुष का पूरा सीना उभरा हुआ होता है। पुरुष को पौरुषवान् कहा गया है। उसे महनत करनी पड़ती है और वह जीवन संघर्ष के लिये मेहनत करता भी है। मेहनत करते समय उसे अधिक सांस की आवश्यकता होती है। अतः उसकी पसलियाँ कुछ उभरी हुई रहती हैं और सांस भरने वाली थैलियाँ भी बढ़ जाती हैं।

इन तमाम कारणों से उसका सीना पूरी तरह से उभरा रहता है और यही पुरुष का एक सौंदर्य भी है। कहा जाता है चौड़ा सीना पुरुषार्थ का द्योतक है।

पेट

पुरुष को काम अधिक करना पड़ता है । जो कुछ भी वह खाता है वह आमाशय में शीघ्र ही पच जाता है। उसका रक्त बन कर शीघ्र ही सारे शरीर में दौड़ने लगता है। इस लिये उसके पेट का पता तक नहीं चलता। उसका सीना आगे को उभरा रहता है और पेट अन्दर की तरफ दबा रहता है।

कूल्हा

आदमी का सारा हिस्सा सुडौल रहता है। जाँघें कसरत करने के कारण अगर नहीं तो परिश्रम के कारण कसी रहती हैं । उसे चलना पड़ता है और वह मेहनत भी करता है इसी कारण उसकी जाँघें कड़ी रहती है और कूल्हा, कमर सब पतली ही समानावस्था में रहती हैं।

लिंग

स्त्री और पुरुष की गुदा तो समान स्थान पर होती है पर अन्तर मूत्रेन्द्री में अवश्य होता है। आमाशय के नीचे और रीढ़ की हड्डी के सबसे निचले भाग में मूत्रेन्द्री का स्थान होता है । शरीर में जितना भी पानी होता है वह मूत्रेन्द्री के द्वारा ही बाहर निकला करता है।

पुरुष की मूत्रेन्द्री को लिंग कहते हैं। मूत्र नली आगे जाकर नसों के एक गुच्छे की शक्ल धारण कर लेती है। इस नली के नीचे दो अन्डाकार नसों की गोलियाँ सीं होती हैं, इन्हें ही अण्डकोष कहा जाता है।

जब भी मूत्र आकर अण्डकोषों के ऊपर वाली थैलियों में भर जाता है, तो नसें फड़कने लगती हैं और फिर लम्बी नली जिसे लिंग कहते हैं उससे बाहर निकलने लगता है।

लिंग के भी तीन भाग होते हैं—

पहले भाग को जड़ कहते हैं। अन्दर की मूत्र वाली थैलियो

के पास ही से दो नसें निकल कर लिग के अन्दर जाती हैं। एक नस तो लिंग के अगले भाग तक जाती है।

तना दूसरा भाग है। लिग के बीचों बीच एक नली होती है। नली का मुँह सबसे आगे होता है और इसी में से होकर मूत्र निकलता है और भोग-विलास के समय वीर्य भी इसी नली द्वारा निकलना है।

सबसे अगले भाग को सुपारी कहते हैं। लिंग का यह भाग कटे हुए सुपारी के अद्ध की तरह होता है। इसके बीचों बीच में एक छेद होता है और इसी छेद से वीर्य तथा मूत्र निकलता है। सुपारी की अन्दर की खाल नरम होती है और खाल के अन्दर वाली नसें बहुत ही चैतन्य होती हैं। जरा सी सिहरन से ही वह सतर्क हो जाती हैं।

पुरुष की इस भिन्नता को स्त्री के शरीर में नहीं पाया जाता है। वैसे तो दोनों शरीर एक से हैं और अगर अन्तर है तो केवल इन दशाओं में ही।

तीसरा सर्ग

स्त्री देह

पुरुष देह और स्त्री देह में नीचे लिखी भिन्नतायें होती हैं—

छाती

पुरुष के अग्र भाग को सीना कहते हैं और औरतों के अग्रिम भाग को छाती कहा जाता है। औरत की छाती समतल होती है। मगर उसके दोनों ओर उपर वाली पसलियों के नीचे थैलियाँ होती

है, जिनमें बालक के लिये दूध भरा रहता है। इन दूध की थैलियों के ऊपर मांस बढ़ जाता है और नसों का खिंचाव बना कर मांस की दो गैंदों का सा आकार हो जाता है।

इन गैंदाकारों को स्तन कहा जाता है। कोई २ इन्हें छातियाँ भी कहते हैं। इनके अन्दर नसें होती है। यह नसें रक्त को मथती हैं और उनमें से दूध निकालकर लाती हैं जिसे बालक पीता है। अधिक स्तैमाल होने के कारण नसें शिथिल हो जाती हैं और उनकी घटने बढ़ने वाली शक्ति मारी जाती है। छातियां नीचे की तरफ ढल जाती हैं।

छातियों के ऊपर भाग निपिल होते हैं। इनकी शक्ल बुँडी की तरह की होती है और इनके निचले भाग स्याही लिये हुये होते हैं। निपिलों में बीचों बीच छेद होता है और इसी छेद में होकर दूध निकलता है।

नसों के ऊपर होने के कारण निपिल में अधिक चैतन्यता होती है। तथा नसों से बनी होने के कारण छातियां भी चैतन्य होती हैं। जरा सी सिहरन से उनकी नसें काम करने लगती हैं, और नसों की हरकत के कारण कामदेव की भी जागृति होती है।

पेट

पुरुष का पेट सीने के देखते हुये अन्दर की तरफ दबा हुआ रहता है पर स्त्री के पेट की यह बात नहीं। वैसे तो वह साधारणतया दबा ही रहता है पर उसकी दशा गुब्बारे की तरह होती है।

गर्भाधान के समय बालक की बढ़ोत्तरी के साथ ही साथ पेट आगे की तरफ बढ़ने लगता है और जब बालक पैदा हो जाता है तो अपने आप दब जाता है। पर आगे चलकर इस बढ़ने वाली खाल की शक्ति मारी जाती है। उसकी खाल लटक जाती है। इस प्रकार पेट कुछ आगे की तरफ सदा के लिये ही बढ़ जाता है।

आमाशय के नीचे—
(गर्भाशय)

आमाशय के नीचे स्त्री के गर्भाशय होता है। स्त्री की बांयी तरफ गर्भाशय होता है। इसमें एक थैली होती है। वीर्य और रज जब बीज के रूप में जाकर थैली में रुक जाता है तो गर्भ ठहर जाता है। जैसे २ बच्चा बढ़ता है उसी तरह थैली भी बढ़ती है और पेट भी बढ़ने लगता है। गर्भाशय के बढ़ने के कारण ही कूल्हे अधिक बड़े होते हैं ताकि जब गर्भाशय बढ़ने लगे तो उसकी रक्षा की जा सके।

आप किसी भी स्त्री के कूल्हे पर जरा गौर से नजर डालेंगे तो आपको ज्ञात होगा कि उसके कूल्हे अन्य शरीर की अपेक्षा अधिक बढ़े हुये प्रतीत होंगे। इसका केवल यही कारण है।

भग

जिस प्रकार पुरुष के लिंग होता है उसी प्रकार स्त्री की मूत्रेन्द्री को भग कहते हैं। रीढ़ की हड्डी के निचले भाग में जहाँ पर कि मूत्र आकर इकट्ठा होता है उसी थैली के पास एक छेद सा होता है। पुरुष का तो नसों का बढ़ाव आगे की तरफ होता है पर स्त्री की नसों का झुकाव अन्दर होता है। छिद्र में होकर ही मूत्र बाहर निकलता है।

मूत्र छिद्र के नीचे की ओर एक और छिद्र होता है इस छिद्र से स्त्री भोग करती है। इसमें भी मूत्रेन्द्री की तरह एक नली होती है। मगर इस नली का अन्त गर्भाशय की थैली के पास होता है।

जब स्त्री भोग करती है तो पुरुष अपना लिंग उसके इसी छिद्र में डालता है। देखने में तो यह छिद्र छोटा होता है पर उसकी गहरायी आठ या नौ इञ्च तक होती है।

छिद्र की खाल घटने और बढ़ने की शक्ति रखती है। जब भोग करते समय लिंग प्रवेश करना चाहता है तो छिद्र बढ जाता

है और फिर बाद में ज्यों का त्यों हो जाता है। अधिक भोग के कारण छिद्र की खाल का यह घटाव बढ़ाव की शक्ति मारी जाती है और फिर वह घट बढ़ नहीं सकती। बच्चा भी इसी छिद्र से होकर निकलता है।

जिस प्रकार पुरुष के अण्डकोष होते हैं उस प्रकार ही स्त्री को मूत्रेन्द्री के ऊपर की तरफ एक खाल का टुकड़ा होता है। इसे रच्छुन कहते हैं। यह जरा सी रगड़ से ही सिहर उठता है। इसमें नसों का असर रहता है और क्योंकि नसों का सम्बन्ध सारे शरीर से है इसी कारण इसकी सिहरन से ही स्त्री अधिक कामवती हो जाती है।

स्त्री और पुरुष देह की इन विभिन्नताओं को देखते हुये हम यह कह सकते हैं कि इनके शरीर में जो भी विभिन्नता है वह केवल मांस पेशियों के कारण ही है तथा प्रकृति ने हर बात का ख्याल करते हुये इस प्रकार की भिन्नताओं को रखा है।

चौथा सर्ग

स्वास्थ्य के साधन

स्वास्थ्य के साधन जानने से पहिले हमें यह जान लेना चाहिये कि हमारे शरीर के विभिन्न भागों के क्या काम हैं और यह किस तरह अपना काम पूरा करते हुए हमारे शरीर को स्वस्थ रखने का कार्य पूर्ण करते हैं।

दिमाग

दिमाग या मस्तिष्क तमाम इन्द्रियों का केन्द्र है। यह उस

बिजली घर की भांति है जिसके पास से बिजली तमाम शरीर में दौड़ती है। यह शरीर की तमाम नसों का प्रधान केन्द्र है। पहले मस्तिष्क के पास चेतना होती है और फिर मस्तिष्क की हिदायत पर ही सम्बन्धित इन्द्री अपना कार्य पूरा करती है।

फेंफड़े

फेंफड़े खून को साफ करने वाले फिल्टर हैं। वह हवा को बाहर से खींचते हैं। उससे आक्सीजन लेते हैं और उसके अन्दर से खराब हवा को नाक द्वारा ही बाहर फेंक देते है। आक्सीजन से ही रक्त साफ होता है।

फेफड़ों के बाहर पसलियाँ भी रहती हैं। यह हड्डियों के कई जोड़ से बनते हैं और सीने या छाती के दोनों ओर होते हैं। वह लोग जो अधिक सांस खींचने का कार्य करते है उनके फेंफड़े आगे की ओर बढ़ जाते है।

आमाशय

आमाशय एक तरह की थैली होती है। मुंह की नली से होकर खाना इसमें आता है और फिर खून की गरमी से वह पचता है। खाना पचाने के लिये इसमें एक तरह का रस होता है। आमाशय के नीचे ही एक और छोटी थैली होती है। इसे पित्त कहते हैं।

पित्त में कड़वा रस रहता है। यह रस रक्त की क्रियाओं से ही बनता है और शीघ्र ही खाना पचाने का कार्य करता है। अक्सर जब आमाशय काम करते २ थक जाता है या किसी अन्य कारणों से उसका काम शिथिल पड़ जाता है तो कभी २ मुंह में एक तरह का कड़ुआपन सा आने लगता है यही पित्त है।

मूत्रवाहकेन्द्री

शरीर को वायु और पानी की आवश्यकता हर समय पड़ती

है। अतः पानी पीकर पानी अन्दर पहुंचाया जाता है। मुंह की नली से होकर ही पानी अन्दर जाता है।

पानी के कई काम होते हैं। पहले तो उसका काम होता है मुंह की नली को रखना। खाना खाते समय वह मुंह की लार से थोड़ा सा पतला तो अवश्य हो जाता है पर मुंह की नली के अन्दर जाते समय अपना कुछ न कुछ अंश अवश्य ही दांत, जीभ, हलक और मुंह की नाली में छोड़ता जाता है। खाना तमाम स्थानों में अगर लगा रह जाय, तो उससे अनेकों खराबी उत्पन्न हो जाती हैं। अतः पानी इन तमाम स्थानों को साफ करता हुआ खाने को आमाशय तक पहुंचाता है।

दूसरी बात यह कि शरीर भी रेल के अञ्जन या मोटर के अञ्जन की तरह ही है। इसमें रक्त के दौड़ने से गर्मी पैदा होती है। और इसकी पैदा हुई गर्मी से शरीर मे एक तरह की बिजली तभी बन सकती है जब कि गर्मी के साथ पानी का अंश मिले। जिस तरह अञ्जन में पानी की आवश्यकता है उसी प्रकार मोटर में पानी अवश्य चाहिये। पानी शरीर के अन्दर की गति को चलाने के लिये बहुत आवश्यक है।

तीसरी बात यह कि आक्सीजन अकेली बिना पानी के नहीं रह सकती। हवा जब अन्दर आती है तो उसे नमी चाहिए ताकि वह शरीर में रह सके। जब उसे नमी मिलती है तब ही वह टिक पाती है।

रीढ़ की हड्डी के नीचे एक मूत्राशय की थैली होती है। इसमें ही पानी स्तैमाल होने के बाद भर जाता है। जब पानी का काम पूरा हो चुकता है और उसका तत्व निकल जाता है वह बेकार हो जाता है। बेकार पानी को बिना बाहर निकाले काम नहीं चलता।

ऐसी दशा में खराब पानी मूत्राशय में भरता रहता है और जब वह थैली पूर्ण होती है तो वह मूत्रेन्द्रियों द्वारा बाहर निकलता

है, यह उस खराब पानी की तरह होता है जिस तरह अञ्जन भी बहुत गर्म पानी को बाहर फेंक देता है।

जांघ

जांघों और पिंडुलियों पर ही शरीर का सारा बोझा रहता है। मानव शरीर के ऊपरी भाग में काफी बोझा होता है अतः उसे साधने के लिये भी मजबूत खम्भे चाहिये। जांघ एक तरह का मजबूत खम्भा ही होता है और वही शरीर का सारा बोझ सम्भालती है।

जांघों में नसों की अपेक्षा मास अधिक होता है मगर इसमें जो भी नसें होती है वह बहुत ही चैतन्य होती हैं। उस पर जरा सी सिहरन होने ही से शरीर की तमाम नसें भड़कने लगती हैं और इसी प्रकार योग की इच्छा बलबलाने लगती है।

पिंडुलियाँ

जाघों के नीचे घुटने और घुटनों के नीचे पिंडुलियां होती हैं यद्यपि पिंडुलियां देखने में बहुत ही पतली होती हैं पर उनका काम बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। यह तमाम शरीर को साधकर उसको चलाने फिराने में मदद देती हैं। मजबूती के लिये प्रकृतिने यह हड्डी बहुत मजबूत और शरीरकी तमाम हड्डियोंसे अच्छी बनाई है।

पञ्जा

हाथ के अन्तिम भाग को जिसमें उँगलियाँ होती है उसे भी कलाई के नीचे से ही पञ्जा कहते हैं। पंजे में हथेली, अगूठा और चार उँगलियाँ होती हैं। उँगलियाँ शरीर का सारा काम करती हैं, और उनमें मुड़ने, खुलने, और बन्द होने की सारी ताकत होती है।

पैर के निचले भाग को पञ्जा कहते हैं। टखनों से लम्बाकार शक्ल लिये हुये होता है। हाथ के पंजे की तरह इसके भी तीन

ही भाग होते हैं। एड़ी, तना और उँगलियां। ऐड़ी और पञ्जा शरीर के सारे वजन को साधता है। तना एक मोटी हड्डी का होता है और उसकी जरूरत सबसे अधिक होती है। अगर तना मजबूत न होता तो हम अपना शारीरिक भार कभी भी नहीं साध सकते।

वैसे तो शरीर में बहुत सी और चीजें बाकी हैं पर उनका उल्लेख हम उनके विषयों के साथ ही करेंगे। कान, नाक, दाँत बाल, मांस पेशियां तथा अन्य का भी शरीरिक साधनों से विशेष सम्बन्ध है।

अब हमारे सामने प्रश्न है कि स्वास्थ्य की किस तरह रक्षा की जा सकती है और किस प्रकार शरीर को अधिक पुष्ट और स्वस्थ्य बनाया जा सकता है? इस प्रश्न के वैसे तो कई उत्तर हो सकते है। हर आदमी हर तरह से इनको सोचता है और उन पर अमल करता है। पर हमे तो उन साधनों के विषय में सोचना है जिनकी योजना प्रकृति ने स्वयं की है।

मुख्यतः वह है:—

१—प्राकृतिक रहन सहन
२—आचार विचार
३—पुष्ट होने के साधन

१—प्राकृतिक रहन सहन

शरीर को वलिष्ठ बनाने के लिये हमें प्रकृति के अनुकूल ही चलना चाहिये। प्रकृति के विपरीत चलने से हमारा शरीर दुर्बल होने लगता है। उसकी शक्ति कम होती जाती है और एक दिन ऐसा आता है कि उसका ह्रास सदा के लिये हो जाता है।

पंच-तत्व सदा प्रकृति में विद्यमान रहते हैं। इनकी पूर्ती प्रकृति ही से की जा सकती है। धीरे २ पंच तत्वों का ह्रास होता जाता है। अतः हमें यही कोशिश करनी चाहिये कि शरीर के तत्व बढ़ते ही रहें इससे पहले कि उनका पूर्ण ह्रास हो उनका परिणाम कायम रहे और वह कभी समाप्त न होने पाये। पंच तत्व की कमी केवल प्राकृतिक ढङ्ग पर चलने से ही पूरी हो सकती है। शरीर में स्वतः ही एक ऐसी ताकत होती है कि वह अपने लिये तत्व स्वयं ही खींच लेता है। अतः हमें अपने रहन सहन को कृत्रिम नहीं वरन् प्राकृतिक ढङ्ग पर चलाना चाहिये।

आज कल लोग प्रकृति से द्वन्द करते हैं। यही कारण है कि वह शीघ्र ही मर जाते हैं। प्राकृतिक ढङ्ग पर चलते समय ध्यान देने के लिये नीचे दी हुयी बातें हैं:-

उठना

रात्रि के चार पहर होते हैं। रात के चौथे पहर के अन्त होने से पहले ही उठना चाहिये। जब आकाश में तारे हों और अन्धकार शेष हो तब ही उठना चाहिये। ब्रह्म मुहूर्त में उठने से प्रकृति तमाम तत्व जो शरीर में कम हो जाते हैं मानव शरीर में भर देती है। इस समय की वायु में आक्सीजन होता है। आक्सीजन रक्त को साफ करता है और इस तरह रक्त के साफ हो जाने से शरीर में फुर्ती आ जाती है।

शौच

खाट से उठते ही शौच जाना चाहिये। सोते समय आमाशय अपना काम करता रहता है। नींद के कारण तमाम इन्द्रियां सुस्त रहती हैं इसलिये आमाशय को अपना काम करने का पूरा मौका मिल जाता है और वह इस समय का लाभ उठा कर तमाम शक्ति से पेट के अन्दर के खाने को अच्छी तरह पचा डालता है। जब मनुष्य सोकर उठता है उसे शौच को जाना चाहिये। खाने के

पचने के कारण मैदे से गन्दगी बाहर निकल जाना बहुत ही आवश्यक है।

दान्तुन

आमाशय का सम्बध मुँह की नली से है। आमाशय खाना पचाता है तो उसके अबखारे अवश्य ही उठते हैं। उससे पैदा हुयी गैसों का नली में जाना स्वभाविक है। ऐसी दशा में वह अबखारे मुँह तक भी पहुंच जाते है। इसी कारण से वह दांतों को भी नुकसान दे सकते हैं। सोने के बाद मुँह में एक तरह का कड़वाहटपन होता है अतः इसे भी तुरन्त ही साफ कर देना चाहिये।

टहलना या वायुसेवन

शरीर को शुद्ध वायु की बहुत जरूरत रहती है। अतः उसे इसका मिलना बहुत जरूरी है। शहर में या मकानों के अन्दर तो शुद्ध वायु का मिलना बहुत ही मुश्किल है। ऐसी दशा में शुद्ध वायु को लेने के लिये खुली हवा में जाना बहुत जरूरी है। अतः सूर्य निकलने से पहले टहलना बहुत ही लाभदायक है। शुद्ध वायु बाग या नदी के किनारे ही मिल सकती है। अच्छा तो यही है कि हरयाली में टहला जाये। पेड़ प्रायः काल आक्सीजन को बहुत तेजी से फेंकते हैं। टहल कर नहाना लाभदायक है।

आराम

प्रातः का खाना दोपहरी से पहले ही खा लेना चाहिये। दो पहर में खाना खाकर थोड़ा सा आराम कर लेना बहुत ही अच्छा है। खाना खाकर एक ही दम काम पर चला जाना नुकसान दायक होता है।

सन्ध्या क्रम

सन्ध्या को काम से फुर्सत पाकर हाथ पैर धोने चाहिये और

अगर हो सके तो नहा डालना चाहिये। हाथ पैर धोने या नहाने से दिन भर की थकान उतर जाती है। शाम को खाना खाकर फिर घूमना चाहिये। रात को खाना खाकर एक दम सो जाना बहुत बुरा है और इससे बहुत सी बीमारियां भी होने का डर रहता है।

निद्रा

चाहे कुछ भी हो रात्रि के प्रथम पहर में अवश्य ही सोजाना चाहिये। सोने के लिये दस बजे का समय बहुत उपयुक्त है। सोते समय दरवाजे और खिड़कियों को खुला रखना चाहिये ताकि स्वच्छ वायु अन्दर आ सके और कमरे का वातावरण स्वच्छ रख सके।

नींद के लिये छः घंटे बहुत काफी हैं। अगर आदमी अपनी दिन चर्य्या को प्राकृतिक नियमों पर चलाये तो उसका शरीर बहुत ही फुर्तीला रहेगा और उसे आलस्य तो कभी हो ही नहीं सकता। नींद तो आलसी आदमियों को अधिक आती है।

ऊपर लिखी हुई दिन चर्य्या प्राकृतिक ढगों पर है। हमारा तो दावा है कि अगर इस तरह से आदमी अपनी जीवन बांध ले तो वह कभी रोगी हो ही नहीं सकता है।

स्वास्थ्य के लिये आवश्यकीय

जिस तरह निद्रा से भोजन द्वारा प्राप्त शक्ति तथा दिन चर्य्या की थकित चेतना की कमी पूर्ण होती है उसी तरह योग-साधन द्वारा हमारी चेतना की कमी की पूर्ति होती है। शरीर के अंगों के लिये अन्नादि पदार्थ जितने आवश्यक हैं उतने ही आवश्यक आसन भी उसे चेतना देने के लिये हैं। योग के वेसे तो आठ अंग हैं उन्हीं आठ अंगों में से दो अंग अति महत्वपूर्ण हैं। इन अंगों को हमः—

१—आसन

२—प्राणायाम

कहते हैं। इन दोनों की आवश्यकता बहुत होती है और साथ ही साथ इन दोनों का कार्य भी साथ चलता है। आसनों के लिए प्राणायाम की आवश्यकता होती है और प्राणायाम साधन के लिए आसन की आवश्यकता होती है।

१. **आसन**—से शरीर को शक्ति मिलती है और शक्ति से शरीर पुष्ट होता है पुष्ट शरीर से जीवन का क्रम बढ़ता है और उसकी आयु की वृद्धि होती है।

२. **प्राणायाम**—से शरीर में वायु का प्रवेश होता है और वह बाहर निकलती है। शुद्ध वायु से रुधिर बनता है तथा उसमें शुद्धता आती है। आसनों द्वारा शरीर को शुद्ध रक्त की आवश्यकता होती है और उसको प्राणायाम द्वारा ही शुद्ध रक्त प्राप्त हो सकता है।

इन दोनों योगिक क्रियाओं से मनुष्य के स्वास्थ्य पर जो प्रभाव होते हैं वह तो शरीर की स्थिरता के लिए आवश्यक हैं। मगर इनसे मनुष्य को मानसिक तथा बौद्धिक जो चेतना प्राप्त होती है वह भी कम महत्व की नहीं है।

मनुष्य को जीवन यापन के लिए शक्ति, वल, बुद्धि, विचार, व्यवहार, उद्योग प्रियता आदि शक्तियों की आवश्यकता होती है। यह शक्ति संसार के किसी भी भोज्य पदार्थ से प्राप्त नहीं की जा सकती। यह एक दूसरे पर निर्भर है और इन सब का केन्द्रीकरण चेतना से होता है। चेतना प्राणायाम और आसनों की देन है अतः मनुष्य को भोजन की आवश्यकता है उससे अधिक योग की है क्योंकि भोजन से ही अङ्गों को शक्ति मिलती है। इस शक्ति का जन्म चेतना से होता है। अगर हम इनका विश्लेषण करें तो वह इस प्रकार होगा—

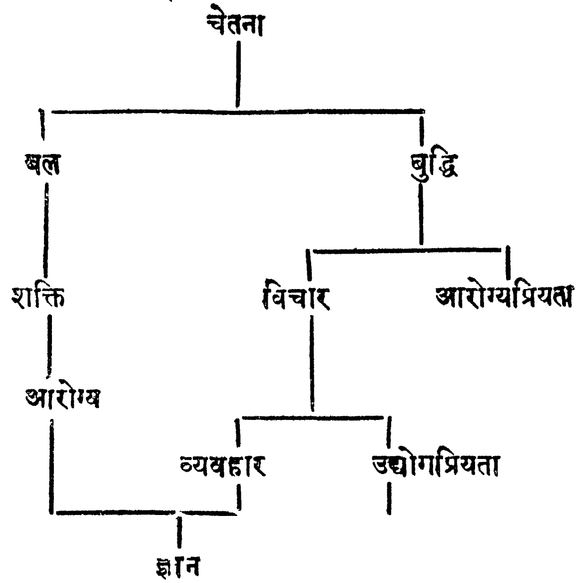

इसके द्वारा हम यह समझ सकते हैं कि जीवन यापन में जिन चीजों की नितान्त आवश्यकता हे उसे हम तभी प्राप्त कर सकते हैं जब हमारे पास चेतना हो। चेतना शरीर के अङ्गों के मन्थन द्वारा प्राप्त होती है। और इसकी प्राप्ति के लिए योग-साधन की जरूरत ही नहीं वरन् गहरी आवश्यकता है।

इसलिए स्वास्थ्य-प्राप्ति करने के लिए योगाभ्यास की बहुत जरूरत होती है। यह अटल विश्वास के साथ कहा जा सकता है कि जब तक योग साधना नहीं की जायगी तब तक पर्याप्त मात्रा में इन कमियों को पूरा नहीं किया जा सकेगा।

पांचवा सर्ग

जीवन क्रम

अवस्था के अनुसार मानव जीवन के चार विभाग होते हैं।

१—बाल काल
२—ब्रह्मचर्य
३—गृहस्थ
४—वानप्रस्थ

बाल काल में बालक के अंगों का विकास होता है। उसके अङ्ग बनते हैं और अङ्ग बनकर पूर्ण होते हैं। प्रकृति बालक की स्वयम् ही देख भाल करती है। जिन घरों में बालक को प्रारम्भ ही से कृत्रिम जीवन का आदी बना दिया जाता है केवल उन्हीं को प्रकृति नुकसान पहुंचाती है। अन्यथा प्रकृति का नियंत्रण बहुत ही विशाल है।

ब्रह्मचर्य आश्रम जीवन का वह वर्ग है जहाँ बाल काल समाप्त होता है और वह युवा होकर ग्रहस्थाश्रम की ओर बढ़ने की कोशिश करता है। ब्रह्मचर्य की महिमा बहुत अपूर्व है। यह तो मानव जीवन का स्वर्ण-युग कहा गया है। मनुष्य इसी समय में अपने को बना सकता है। वह इस वर्ग में जो कुछ भी कर लेता है वही ठोसकार्य है।

शरीर का राजा वीर्य वह पैट्रोल है जिससे शरीर की मशीन चलती है। वीर्य-वान होना ही पुरुष के लिये सबसे बड़ा कार्य है। वीर्य वान का मतलब पौरुषी से है। पहले तो हमें समझ लेना ब्रह्मचर्य क्या है?

ब्रह्मचर्य का वर्णन एक या दो बातों परही निर्भर नहीं है इसका तथ्य तो हमें कई समानान्तर बातों को दृष्टि-कोण में रख कर जांचने से मिल सकता है। इसलिये हमें ब्रह्मचर्य का तथ्य जानने के लिये नीचे लिखी बातों को जान लेना चाहिये–

१–प्रकृति के नियमों का पूर्ण रूप से पालन करते हुये शरीर की रक्षा करना ही ब्रह्मचर्य की एक परिचालना है। प्रकृति संसार में सर्वोपरि है। इसके साथ मिलकर चलने ही में मनुष्य का कल्याण है। लड़कर चलने में तो कोई भी आज तक न तो प्रकृति से जीत ही सका है और न जीत ही सकता है। अतः जैसे ही बालकाल की अवस्था समाप्त होती है तो मनुष्य को चाहिये कि वह प्रकृति के बनाये हुये नियमों पर ही अपने जीवन को चलाने की चेष्टा करे।

२–यह अवस्था बहुत ही चंचल होती है। बालक ना समझ होता है। जब वह बड़ा होकर ब्रह्मचर्याश्रम में प्रवेश करता है तो उसके सामने सांसारिक वस्तुयें नये रूप में आती है। संसार का प्रलो-भन बड़ा छलना होता है। जरा डगमगाने से गिर जाने का पूर्ण खतरा हो सकता है। ऐसी दशा में बहुत ही समझ बूझ कर कदम उठाने की जरूरत है। संगत का विचार रखना चाहिये। बालक को तो स्वयं बोध नहीं होता इसलिए जब वह इस अवस्था पर आये तो उसके बड़ों का फर्ज है कि वह उसके सामने संसार के उन तमाम अवगुणों का बखान करदें जिसे कि हानि हो सकती है।

३—वीर्य का कार्य बहुत ही महत्व पूर्ण है। जिस प्रकार मोटर को चलाने के लिये पैट्रोल की जरूरत होती है उसी प्रकार शरीर को भी चलाने के लिये वीर्य की बहुत जरूरत होती है। जैसे ही पैट्रोल समाप्त होकर मोटर रुक जाती है उसी प्रकार वीर्य के समाप्त होते ही मनुष्य का शरीर भी एक दम व्यर्थ होजाता है और वह मृत्यु के निकट जा पहुचता है। वीर्य एक अमूल्य निधि है।

वीर्य क्या है ?

वीर्य शरीर का रस है। जो कुछ भी आदमी खाता है उससे रक्त बनता है। रक्त शरीर की फुर्ती तथा जिन्दगी रखने में सहायता करता है। वीर्य रक्त से बनता है।

यों समझिए कि जिस तरह गाय जो कुछ भी खाती है उससे उसका रक्त बनता है और रक्त से दूध बनता है दूध को दुह लिया जाता है दूध ऐसे प्राकृतिक ढङ्गसे बनता है कि वह मानव शरीरके लिए बहुत ही लाभदायक होता है। मक्खन भी दूध से ही बनाया जाता है। मक्खन भी दूध की तरह उपयोगी होता है।

मक्खन वैसे तो दूध का अंश है। मगर कहना यों चाहिए कि मक्खन दूध का सत्त है। दूध में भी दो पदार्थ होते हैं। पहला पानी और दूसरी चिकनाई। मक्खन को हम चिकनाई कह सकते हैं। क्योंकि बिना पानी की तरह हुयें दूध गाय के पेट से नहीं निकलता था इस लिये कुदरत ने उसमें पानी का अंश अधिक मिलाया। मक्खन को अलग करने पर हम दूध का तत्व खींच लेते हैं। जो पानी रह जाता है वह बेकार है। इसी प्रकार वीर्य भी शरीर के रक्त का मक्खन है। जब वीर्य खींच लिया जाता है तो रक्त बेकार रह जाता है।

बालक पन में प्रकृति वीर्य को बनाने का स्वयं ही सञ्चालन करती रहती है। ब्रह्मचर्या आश्रम तक वीर्य बढ़ जाता है और उसकी गर्मी भी अधिक बढ़ने लगती है। बालक पन के बाद ही जवानी आती है। वीर्य रक्त में पर्याप्त मात्रा में पैदा हो जाता।

वीर्य का बनना तो हम बता ही चुके हैं। जो कुछ भी हम खाते हैं पहले उसका रक्त बनता है और उस रक्त से वीर्य बनता है। डाक्टरों ने अनुमान लगाया है कि हमारी एक महीने की खुराक से लगभग दो तोले वीर्य बनता है। इस दो तोले वीर्य को अगर हम आसानी से बरबाद कर डालें तो

इसका मतलब है कि हमने जो कुछ भी महीने भर में खाया था वह बेकार होगया। अतः हमें वीर्य की रक्षा करनी ही चाहिये।

४—ब्रह्मचारी का वीर्य शुद्ध होता है। क्योंकि उसका रक्त दोष रहित होता है। अतः उस रक्त से बनने वाला वीर्य भी दोष रहित ही होना चाहिये। शुद्ध वीर्य की बहुत ही सरल सी पहचान होती है। शुद्ध वीर्य को जानने के लिए हमें नीचे लिखी बाते देखनी चाहिए तथा उनका पूर्ण ध्यान रखना चाहिए—

(अ) उसका रंग बिलकुल सफेद होता है।

(ब) उसमें शुद्ध शहद की सी खुशबू आती है।

(स) वह दही की तरह गाढ़ा होता है।

(क) खुर्दबीन लगाकर देखने से उसमें लम्बी पूंछ वाले बहुत से कीड़े रेंगते हुए दिखाई देंगे।

(ख) जमीन पर गिरते ही जम जायगा।

ब्रह्मचारी का वीर्य ऊपर दी हुई पहचान की तरह का होता है। इसी कारण ब्रह्मचर्य पालन करने से चहरे पर चमक, शरीर में बल व फुर्ती और मुख पर तेज रहता है।

५—जीवन नियमो के हिसाब से ब्रह्मचर्य आश्रम में ही विद्या ग्रहण करनी चाहिए। क्योंकि ब्रह्मचर्यावस्था में वीर्य यथार्थ शक्ति में शरीर के अन्दर रहता है। इसी कारण पठन पाठन नियम पूर्वक हो सकता है तथा स्मरण-शक्ति भी बहुत प्रबल रहती है। ब्रह्मचारी की बुद्धि तीक्ष्ण रहती है और वह जटिल से जटिल विषय बहुत ही आसानी से पढ़ लेता है। वह दिल लगाकर मेहनत करके अपनी विद्योपार्जन करने की क्षमता रखता है। वीर्य ही के कारण वह फुर्तीला भी रहता है।

६—ब्रह्मचर्यावस्था में शरीर की बनावट सुडौल होती है। इस अवस्था में जो कुछ भी किया जाता है, वही लाभदायक

है। मामूली सी भी कसरत या और कोई वर्जिश शरीर को सुडौल बना सकती है। बाल काल में तो शरीर बन कर तैयार होता है और ब्रह्मचर्य में वह सुडौल बनता है।

७—ब्रह्मचारी को अपना दिमाग साफ रखना चाहिए। उसका विचार कलुषित नहीं होना चाहिए। जो कुछ भी वह सोचे, समझे या करे वह सार-गर्भित होना चाहिए। उसके दिमाग में कभी गन्दे विचारों का प्रवेश तक नहीं होना चाहिए। स्त्री-गमन, वैश्या-गमन, जुआ, व्यभिचार, शराब, नशे-बाजी आदि बुरे व्यसन हैं। ब्रह्मचारी को इनके पास भी नहीं आना चाहिए और न कभी ऐसे लोगों की सह्नत ही बैठना चाहिये जो लोग इन कर्मों के आदी हों या फेर में हों। उसके सामने तो बड़े २ आदर्श होने चाहिए। जो कुछ भी वह सोचे या करे वही उसको शान्तिदायक होना चाहिए।

८—पैदा होने से अठारह वर्ष तक तो बाल-काल ही रहता है। अठारह वर्ष की अवस्था से ब्रह्मचर्य शुरू होता है और वह २६ वर्ष की अवस्था तक रहता है। ब्रह्मचर्य की अवस्था बहुत ही कठिन होती है। इस समय जिसने तसल्ली के साथ काम लिया उसका आगामी जीवन बहुत ही सुन्दर और सुव्यवस्थित हो जाता है। अतः इस जीवन से बहुत ही सावधानी के साथ पैर उठाना चाहिए।

९—भोग गृहस्थाश्रम की वस्तु है। एक आश्रम से दूसरे आश्रम में फाँदने की जल्दी नहीं करनी चाहिए। भोग की इच्छा ब्रह्मचारी के पास भी नहीं आनी चाहिए।

१०—ब्रह्मचारी का भोजन बहुत ही सादा होना चाहिए। उसको फल, फूल, शाग, भाजी का विशेष सेवन करना चाहिए। मांस, मदिरा, प्याज, लहसुन, मिर्चे, खटाई आदि वस्तुएं तामसी हैं। इनके सेवन से वीर्य-निष्ठा को धक्का लगता है। अतः इसको पास भी नहीं आने देना चाहिए। दूध, घी का स्तैमाल भी नियमित ही होना चाहिए। अधिक ताकत देने वाली चीजों का सेवन भी ब्रह्मचारी के लिये निषेध है।

११—उसकी निन्द्रा स्वान की तरह होनी चाहिए। अर्थात् उसे नींद कम आती हो और जब भी वह सोता हो चौकन्ना सोता हो तथा कम देर में ही वह अपनी नींद पूरा कर लेने का अभ्यासी होना चाहिए। अधिक निद्रा तो भोगी को आती है।

ब्रह्मचर्य व्रत के पालन की जिम्मेदारी मां बाप पर ही नहीं होती। इसकी जिम्मेदारी तो परिवार के हर प्राणी पर होनी चाहिए। बालक ना समझ होता है। उसे तो जिस रास्ते पर भी चलाया जायेगा वह उसी पर आँख बन्द करके चलने लगेगा, चाहे वह उसके लिए अच्छा हो या बुरा। अतः बालक के प्रत्येक सगे सम्बन्धी का फर्ज़ है कि वह उसकी देख भाल रखे। माँ, बाप, भाई को चाहिए कि वह उसे अच्छे रास्ते की तरफ ही चलने मे मदद करें तथा जब कभी बुरे रास्ते की तरफ जाता हुआ दिखाई दे तो शीघ्र ही रोकदें।

ब्रम्हचर्य आश्रम में प्रवेश करने पर बालक के माँ बाप को नीचे लिखी बातों पर ध्यान देना चाहिए :—

१. उसकी संगत—हर समय देखना चाहिए कि वह जिन लोगों में बैठता है वह बुरी सङ्गत के लोग तो नहीं हैं। बुरी सङ्गत के लोग तरह तरह के लोभ दिखा कर इन नौजवानों को अपनी तरफ खींचते हैं। जुआ, शराब, वेश्या—गमन, गुदा—मैथुन आदि दुर्गुण बुरी सङ्गत के कारण ही पड़ते हैं।

२. झुकाव—युवा का झुकाव हर समय देखते रहने की आवश्यकता है, ब्रम्हचर्य आश्रम पालन करते समय तो युवा के सामने केवल दो ही आकर्षण होने चाहिये। पहला तो विद्याध्यन और दूसरा खेल कूद। विद्याध्यन और खेल कूद के अलावा अगर उसका झुकाव किसी अन्य ओर जाता प्रतीत हो तो उसका कारण मालुम करना चाहिए तथा उसका उपाय करना चाहिए।

उसे स्त्रियों में मिलने का अवसर कम देना चाहिए। बाहर की स्त्रियों से तो उसे सदा ही दूर रखना चाहिए। घर की स्त्रियों

को भी सचेत रहना चाहिए कि वह उसके सामने कोई ऐसी बातें न कहे या कोई अश्लील मजाक न करे। ज्ञान की खोज की यही अवस्था होती है। तनिक सा सहारा पाते ही वह इस ओर भी बढ़ कर ज्ञान प्राप्त करने की चेष्टा कर सकता है।

३. मानसिक विकास—ब्रम्हचर्य से रहने वाले युवा का मानसिक विकास नित्य ही बढ़ता है। ऐसी दशा में अगर कभी उसकी विकास शक्ति में कोई गोलमाल नजर आये तो उसकी खोज करके पूरा पता लगाना चाहिए कि ऐसी कमजोरी क्योंकर आसकी।

विना किसी तरह की कोई क्षति पहुंचे कभी विकास की शक्ति में कमी नहीं हो सकती है। वार्य का पतन जब तक नहीं होता तब तक मानसिक विकास होता ही रहता है। और मानसिक विकास का पतन होते ही समझ लेना चाहिए कि ब्रम्हचर्यावस्था में ही युवा वीर्य-पतन के रोगों में जाकर फँस गया है।

४. गठन—ब्रम्हचर्य व्रत का निरंतर पालन करते हुए कभी भी शारीरिक गठन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। दिन प्रति दिन चेहरे पर तेज आता है। शरीर के अङ्ग प्रत्यङ्ग पुष्ट होते रहते हैं और मिजाज शीतल रहता है। जब भी मिजाज में चिड़चिड़ापन गठन में रोक चेहरे की कान्ति ढलती हुई दिखाई दे, फौरन ही उसके कारण जानने की चेष्टा करनी चाहिए। कारण जानकर उपयुक्त प्रबन्ध भी कर देना ही श्रेय कर है।

इन तमाम बातों का ही तथ्य ब्रम्हचर्य में शामिल है। हमारा तो दावा है कि अगर बालकों को युवावस्था में पदार्पण करते ही ब्रम्हचर्य व्रत की ओर लेजाने से बालक अवश्य ही तेजस्वी होगा।

संसार के तमाम काम शक्ति पर ही निर्भर हैं। शक्ति वीर्य ही है। वीर्य की रक्षा केवल ब्रम्हचर्य व्रत पालन करने से ही

सकती है अतः ब्रह्मचर्य का महत्त्व मानव जीवन में बहुत ही महत्वपूर्ण है।

आदमी तो क्या जानवर तक भी ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। जब तब बछड़ा सांड़ नहीं हो जाता वह गाय से दूर ही रहता है किसी भी जलचर, बनचर, पशु, पक्षी को ले लीजिये और उसके जीवन पर निगाह डालकर देखें तो आपको ज्ञात होगा कि प्रकृति का ऐसा नियम है कि वह भी स्वत ही ब्रह्मचर्य व्रत पालन करते हैं।

गृहस्थ—मनुष्य जीवन ह्मचर्य काल के उपरान्त गृहस्थ जीवन शुरू होता है। गृहस्थावस्था उस समय आरम्भ होती जब मनुष्य अपने ब्रह्मचर्य जीवन का नियम पूर्वक पालन कर लेता है और अपने ब्रह्मचर्य जीवन में अपनी जीविको पार्जन की क्षमता प्राप्त करके वह वैवाहिक बन्धन में आबद्ध हो जाता है। गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते ही उसके कन्धों पर कई बोझ आ जाते हैं।

१. **जीविकोपार्जन**—अब तक तो उसका भार उसके माता पिता पर रहता था मगर विवाह हो जाने के बाद उस पर अपनी गृहस्थी का बोझ आ जाता है। उसे अपने भरण पोषण के अलावा अब अपनी पत्नि के लिये भी भोजनादि की व्यवस्था करनी पड़ती है। गृहस्थ धर्म मे अनेकों जिम्मेदारियां होती हैं और वह सब उसके कन्धों पर आ जाती हैं। कहने का आशय यह है कि धनोपार्जन का भार उसके ऊपर आ जाता है ताकि वह अपने परिश्रम से माये हुए ढङ्ग पर ही अपनी गृहस्थी का पालन कर सके।

२. **पारिवारिक समस्यायें**—परिवारका एक सदस्य होनेके कारण उसके कन्धों पर परिवार की उन्नति का बोझ होता है। उसके माता पिता अब वृद्धावस्था को प्राप्त कर चुकते हैं। और परिवार की उन्नति में अब कुछ नहीं कर सकते। ऐसी अवस्था में

अब उसे परिवार की उन्नति का भी ध्यान रहता है और वह जो कुछ भी कर सकता है उसे करने में नहीं चूकता है। बहुत सी समस्यायें धन से तथा बहुत व्यवहार से सुलझानी पड़ती है।

३. सामाजिक कर्त्तव्य—गृहस्थ जीवन में प्रवेश करते ही मनुष्य समाज का एक कर्मठ सदस्य हो जाता है अतः अब उसको सामाजिक कर्त्तव्यों का भी ध्यान रखना अति आवश्यक होता है। उसको समाज के नियमों का पालन करना होता है और इन नियमों के पालन में उसे कभी २ कड़ी मुसीबतों का भी सामना करना पड़ता है मगर इन्हें पूरा करना ही पड़ता है। सामाजिक समस्यायें सुलझाने के लिए उसे कभी धन, कभी विचार, कभी व्यवहार से काम लेना पड़ता है। इन समस्याओं के सुलझाने के लिए उसे मानसिक उद्योग करने पड़ते हैं और उन उद्योगों में उसके शरीर की शक्ति का भी ह्रास होता है। उसकी शक्ति नष्ट होती है। उसको थकान आती है।

४. उत्थान चिन्तन—इन तमाम कार्यों के साथ ही उसके सामने अपने उत्थान की भी समस्याओं का भार होता है। हर प्राणी अपने जीवन मे उच्च से उच्च लक्ष्य प्राप्ति की कामना करता है और वह लक्ष्य तब ही प्राप्त हो सकता है जब वह अपने उत्थान के लिए पूर्ण चिन्तन करले और उस पर अमल करके उसको कार्य रूप में परिणित करें।

इन तमाम बोझों के कारण मनुष्यों की शक्तियों का ह्रास होता है। शक्ति नाश होने के कारण उसे थकान होती है और थकान आने पर उसे नवीन स्फुर्ति तथा चेतना की आवश्यकता होती है। इसके साथ ही साथ पत्नि के साथ सन्तान प्राप्ति के हेतु सहवास करने के कारण उसके वीर्य का भी नाश होता है। अतः इन तमाम कारणों से उसके शरीर को नवीन शक्ति की आवश्यकता होती है। नवीन शक्ति का सञ्चार नियमित भोजन तथा योगासन द्वारा ही प्राप्त हो सकता हैं। ऐसी दशा में गृहस्थ जीवन पालन करते हुये उसे स्वास्थ्य का भी विचार आवश्यक है।

वान प्रस्थ–गृहस्थ जीवन के उपरान्त वानप्रस्थ आश्रम प्रारम्भ होता है। जब मनुष्य अपनी सन्तान को इस योग्य बना देता है कि उसकी सन्तान पारिवारिक जीवन का बोझ उठा सके तो वह परमार्थ में रत हो जाता है। जीवन के उसके अपने अनुभव होते हैं। उन अनुभवों का लाभ वह दूसरों को देना चाहता है। ऐसी दशा में वह परिवार को छोड़ देता है और एकान्त में जाकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहता है। संसार के कोलाहल से वह ऊब उठता है और अपने जीवन में वह परम पिता परमेश्वर की अस्तित्वता में भी विश्वास करने लगता है। वह मोक्ष चाहता है, अपने जीवन के अनुभवों द्वारा जो भी बातें ज्ञात होती हैं वह दूसरों के लाभार्थ उनका प्रचार करना चाहता है। वह नवीन बातों का प्रयोग करना चाहता है और यह सब उसी समय काया देखे उसकी इच्छानुसार उसे वानप्रस्थावस्था ही में प्राप्त होता है।

इस समय तक परिश्रम, भोग-विलास आदि के कारण उस का शरीर कृश हो जाता है, वह अपने शरीर की रक्षा किए बिना अपने सङ्कल्पों में सफल नहीं हो सकता। अतः उसे इस अवस्था में भी योगासनों की आवश्यकता होती है ताकि उसका स्वास्थ्य ठीक रह सके और वह अपने कार्यों में पूर्ण संलग्नता के साथ लगा रह सके।

कहने का आशय यह है कि मनुष्य के जीवन की कोई भी घड़ी ऐसी नहीं जब उसे स्वास्थ्य की आवश्यकता न हो और अपने स्वास्थ्य को अच्छी तरह पालन पोषण के लिए उसे कुछ न कुछ करना ही चाहिए। स्वास्थ्य प्राप्ति के लिए योगासनों के सिवाय अन्य कोई भी उपयुक्त मार्ग नहीं है। इन योगासनों द्वारा ही वह अपने जीवन के सुख को अनुभव करता हुआ अपने जीवन ध्येय की प्राप्ति कर सकता है।

छटवाँ सर्ग

भोजन

मानव शरीर को चलाने के लिये भी पुष्टी की आवश्यकता है। शरीर के लिये पुष्टि अगर प्राप्त हो सकती है तो वह केवल भोजन से पहिले ही कहा जा चुका है कि भोजन से रक्त बनता है। अतः भोजन का स्थान शरीर को चलता फिरता रखने में सबसे अग्रिम है।

भोजन का मतलब केवल खाद्य से नहीं है। जो कुछ भी मुख में होकर आमाशय तक पहुंचता है वह सब ही भोजन है। खाना, पीना, धूम्रपान आदि सभी भोजन ही में शामिल हैं।

भारतवर्ष में भोजन पर कम ध्यान दिया जाता है। इसके भी कई कारण हैं।

मुख्यत यह हैं :—

१—गरीबी—अधिकाँश जो गरीब हैं। यह कृषि-प्रधान देश तो अवश्य है पर यहां जमींदारी का सिलसिला इतना गम्भीर है कि खेतिहर लोगों को भर पेट भोजन भी नहीं मिल पाता। उनको कर्ज लगान, जमींदार को नजराने, रीति रिवाज से ही फुर्सत नहीं होती। अतः वह इन तमाम बातों को पूरा करने के लिये भोजन ही में कमी करता है। जब भी जरा रुपये पैसे की दिक्कत हुई तभी खाने पीने में कमी कर दी।

२—अशिक्षा—अधिकतर लोग अपढ़ हैं। वह यह नहीं समझ पाते कि शरीर के लिये भोजन का सबसे अधिक महत्व है।

अगर शरीर ही ठीक नहीं रह पायेगा तो पैसा कैसे पैदा हो सकेगा। कोई अन्य काम वह कर नहीं सकते। खेतिहर लोगो को छः महीने बेकार ही रहना पड़ता है

३–कृत्रिमता—जो लोग कुछ पढ़ लिखकर समझदार हैं वह अपनी आदतों से लाचार हैं। उनके जीवन में दिखावे की आदत आगयी हैं। वह अपने जीवन को गलत रास्ते पर ले जा रहे हैं। उन्हें बेकारी और अधिक हो जाने के कारण खाने पहनने में कमी करने की आदत सी पड़ गयी है। वह खाने के बिना रह सकेंगे पर बिना साबुन के नहाये नहीं रह सकते।

४–बाजारी हालत–हर खाने पीने की चीज मे मिलावा का कुछ रिवाज सो होगया है। आटा मिलेगा तो उसमें सेलखड़ी मिली होगी हल्दी में राम रज, मिर्च मे गेरू, घी में तेल या चर्बी दूध में पानी इत्यादि। खाने पीने की चीजों की हालत तो बे तरह बिगड़ी हुई है शुद्धता का तो नाम ही नाम है। कोई भी चीज ऐसी नहीं मिल सकती जो किसी तरह का स्वास्थ्य लाभ करे। जो भी मिलेगी वह बजाय लाभ के नुकसान पहुंचाने वाली ही होगी।

इस विषय में सरकार सुस्त है व्यापारी अपना नफा देखते हैं। अधिकतर मानव समाज का कुछ न कुछ हाथ रहता है। अतः वह लोग अपने २ नफे मे अन्धे रहने के कारण इस बात की चिन्ता तक नहीं करते कि उनके तनिक से लाभ के पीछे समाज का समाज गर्त में गिर रहा है।

५—आलस्य—लोगों में आलस्य भी बढ़ गया है। वह हर बात के लिये आलस्य करने लगे हैं। चक्की पीसना गाय पालना, मट्ठा चलाना, साग भाजी की फुलवारी लगाना आदि उनकी निगाह में बेकार की सी बातें हैं। वह यह नहीं जानते कि यदि इनमें से वह किसी काम को रुचि पूर्वक करे तो वहीं उनके जीवन में एक सार्थकता ला सकेगा। सोच विचार तो दुनियां भर का करेंगे मगर

उस कार्य को कभी हाथ नहीं लगायेंगे जिससे उनका लाभ निकल सके।

इन तमाम बातोंके अलावा भारतियोंकी एक खास आदत यह भी है कि अगर कन्जूसी करना शुरू करेंगे तो पहले खाने में ही कमी करेंगे। औसत दर्जे के आदमी को ही मिसाल के तौर पर लेकर देखें तो पता चलेगा कि—

१–सुबह का खाना—रोटी चावल, एक दाल, चटनी और रात की बासी तरकारी, घी थोड़ा २ और अगर और कमी की तो बनस्पति।

२–शाम का खाना—रोटी या चावल, एक दाल और एक तरकारी या दो तरकारियां। परोठे हुये तो बनस्पतिसे या रोटी तो थोड़ासा घी।

यही औसत दर्जे के आदमी का खाना है।

(खेतिहरों का खाना)

शाम व सुबह का खाना–रोटी, चटनी या दाल साग में से एक, थोड़ा सा मट्ठा यही आमतौर से खेतिहरों का खाना है।

हमारे देश में औसत दर्जे के और खेतिहर ही ज्यादा हैं। धनी बहुत कम हैं। अतः उनका तो जिक्र सुनना ही बेकार है। जो खाना ऊपर लिखा गया है अगर शरीर की पुष्टता के हिसाब से देखा जाय तो बिलकुल ही अपर्याप्त है।

शारीरिक पुष्टता के लिये कम से कम खाना होना चाहिये—

सुबह

रोटी या चावल, दाल, एक हरी तरकारी, घी, दही या मट्ठा

शाम

रोटी या चावल, दाल, हरी तरकारी, पृथ्वी की तरकारी (आलू इत्यादि) घी, दूध, (रात को सोते समय)

ऊपर दी हुई तालिका के हिसाब से प्रत्येक आदमी को कम

से कम यह चीजें तो मिलनीं ही चाहिये। घी, दूध दही तरकारी यह तीनों चीजें शक्ति को बढ़ाने वाली होती है। जितना अधिक इन चीजों का प्रयोग किया जायगा उतनी ही शक्ति बढ़ेगी। अतः जहां तक हो सके इनका प्रयोग अधिक ही करना चाहिये।

खाने में अधिकतर नीचे लिखी वस्तुओं की अधिकता होनी चाहिये—

(१) गेहूँ, चना, जौ आदि ताकत देने वाले अनाज हैं। चावल में शक्ति कम होती है। अतः जहाँ तक हो सके चावल का स्तेमाल कम ही करना चाहिये।

(२) हरी तरकारियां—पालक, बथुआ, शलजम, मूली, गाजर सोया, चौलाई मटर, प्याज, लौकी, भिन्डी आदि हरी तरिकारियों में शक्ति वर्धक पदार्थ होते हैं। कहा जाता है कि हरी तरकारी को अगर कच्चा ही खाया जाय तो सर्वोत्ताम है। मगर कच्चा तो नहीं, खा सकने की कौन कहे लोग पकाकर खाने में भी अपने ऊपर अहसान सा समझते हैं। हरी तरकारी में तत्वों की विशेषता होती है। अतः शरीर को जिस तत्व की भी जरूरत होती है वह आसानी से उसे मिल जाता है।

(३) घी, तेल बिना शरीर में चिकनाई की कमी रह जाती है। जिस तरह मशीन को स्थिर रखने के लिये ग्रीस की जरूरत पड़ती है उसी तरह शरीर को फुर्तीला रखने के लिये भी चिकनाई की बहुत जरूरत होती है।

आज कल के समय में घी का शुद्ध मिल जाना तो भगवान को पा लेना है। अगर घी शुद्ध नहीं मिल सकता तो सरसों का कड़ुआ तेल ही स्तेमाल करना चाहिये। जो भी चीज स्तैमाल की जाय वह शुद्ध होनी चाहिये। चिकनाई से हड्डी बढ़ती है और मजबूत भी होती है।

(४) दूध व पानी बहुत ही जरूरी है। काम करने में शक्ति का बहुत ह्रास होता है। ऐसी दशा में खाने की शक्ति बनते २

बहुत दिन लगते हैं। दूध तो एक तरह का पेट्रौल होता है। इधर पेट में पहुँचा और उधर उसका खून बना और शक्ति आना प्रारम्भ हुई। अतः हर आदमी को थोड़ा दूध जरूर पीना चाहिये। मगर हमारे यहाँ तो अजीब हालत है। जिस मजदूर को महनत के बाद दूध पीना है वह दूध के बजाय शराब पीना अच्छा समझता हे।

(५) पृथ्वी में पेदा हुई तरकारी में शक्ति तो होती है पर पाचन के लिये बड़ी गरिष्ठ होती है। आलू, अरबी, जिमीकन्द, रताल्लु सबका यही हाल है। इनका सेवन कम करना चाहिये।

(६) अण्डा, मछली, मुर्गी, गोश्त इत्यादि वस्तुयें तामस होती हैं। अण्डा और मछली अधिक लाभकारी हैं। अण्डे की जहाँ तक हो जर्दी ही कच्ची खानी चाहिये। मछली में हड्डी को ताकतवर बनाने के लिये फासफोरस होता है अतः अण्डा मछली का स्तैमाल लाभदायक है। गोश्त गरिष्ट होता है। अगर वह अच्छी तरह नहीं पचाता तो महान हानिकारक सिद्ध होता है।

(७) चाय को स्तैमाल केवल नम्र जलवायु वाले क्षेत्रों में ही लाभदायक है। मगर चाय का कुछ ऐसा प्रचार हुआ है कि लोगों को इसकी कुछ ऐसी आदत पड़ गई है कि माफिक हो या न हो वह पीयेंगे अवश्य चाय भी भांग गांजे, चरस की तरह का हलका नशा है। जिन लोगों के मुंह चाय लग जाती है फिर वह बड़ी मुश्किल से छूटती है। इसलिये पहले तो चाय की आदत ही नहीं डालनी चाहिये और अगर चाय पीने का बहुत ही शौक है तो उसमें दूध अधिक डालना चाहिये। मक्खन वगैरह के बिना तो हरगिज भी चाय न पीनी चाहिये।

८—खाने के साथ कोई खट्टी चीज जरूर खानी चाहिये। और शायद इसी लिये भारत में चटनी का रिवाज बहुत था। और है। मगर आजकल की चटनी लाभदायक होने के बजाय हानिकारक

ही होती है। धनिया पोदीना की तो कौन कहे खाली खटाई ही पीस कर स्तेमाल की जाती है। चटनी में धनिया या पोदीना, नीबू का रस खटाई के लिए और अदरक का होना जरूरी है।

खाने पीने के तरीकों को अगर हम लोगों ने नहीं बदला तो यह तय है कि हमारी आने वाली संतान को हमारे ही कारणों से अनेक दुःख उठाने पड़ेगे। अतः हमारा धर्म है कि हमें खाने पीने पर सबसे अधिक ध्यान देना चाहिये। जो लोग भोजन पर ध्यान नहीं देते वह अपनी मौत को शीघ्र बुलावा देते है।

फलों के विषय में तो हम लोगों की धारणा है कि वे केवल बीमारी में ही स्तेमाल किये जाने चाहिये। यह बड़ा गलत सा उसूल है। फल हमारे खाने का बहुत ही जरूरी अङ्ग है। फलों के तमाम तत्व अपने प्राकृतिक रूप में रहते है और उनके सेवन से वह तत्व शीघ्र ही शरीर में जाकर उसकी कमी को पूरा करते हैं।

खाने के बाद फल जरूर खाने चाहिये। फल खाने से खाना शीघ्र ही पचता है। जो कुछ भी खाना दांतों मे रहजाता है वह तुरन्त ही फलों के खाने से साफ हो जाता है।

सब फल अधिक लाभदायक होते हैं। कुछ लोग केवल अंगूर, सेव, अनार को ही फल समझते हैं। नहीं आम अमरूद, बेर, नाशपाती, नारङ्गी भी फल हैं। यह फल तो बहुत काफी सस्ते होते हैं मगर हम इनको ठीक स्तेमाल नहीं करते। अगर इनका ठीक २ स्तेमाल किया जाय तो ये बहुत ही उपयोगी साबित होंगे।

सूखे फल जैसे किशमिश, अखरोट, छुआरा, काजू, बादाम चिलगोजा पिस्ता आदि बहुत ही लाभकारी हैं। जाड़ों में अगर सूखे फलों का नित्य सुबह स्तेमाल किया जाय तो शरीर में शक्ति बढ़ती है। दूध में छुआरा डाल कर गरम करके पीने से अधिक लाभ होता है।

मुश्किल तो यहहै कि हम सब कुछ जानते हुये भी अपनी

आदतों से मजबूर हैं। जानते सब कुछ हैं पर जब काम में लाने का समय आता है तो दूर हट जाते हैं।

खाने पीने में कंजूसी करने का मतलब मौत को निमन्त्रण देना है। मेरा मतलब यह नहीं कि जो कुछ भी आमदनी हो वह सब खा पीकर ही उड़ा दी जाय। नहीं, वरन कहना तो यह है कि जो कुछ भी हम खायें पीये वह पुष्टिकारक होना चाहिये। सस्ती कीमत पर भी स्वास्थ्यकर चीजों को खरीद कर स्तैमाल किया जा सकता हैं।

भोजन की शक्ति ही से संसार के प्राणी जिन्दा रहते हैं अतः हमें अपने भोजन पर बहुत काफी ध्यान देना चाहिये।

इन तमाम बातों के साथ ही साथ भोजन की स्वच्छता को भी नहीं भूल जाना चाहिये। भोजन का पकाना भी एक कला है। यह कभी नहीं समझना चाहिये कि अच्छा खाना वह चाहे लापरवाही से भी क्यों न पकाया जाय सदा अच्छा ही रहेगा।

पकाने में अगर सावधानी से काम नहीं लिया गया तो आप विश्वास रखें कि अच्छे से अच्छा भी खाना विष होजायेगा। मिसाल की तौर पर दूध ही को लें।

दूध में शरीर को बढाने वाले, शक्ति को देने वाले सभी तत्व है। अधिक लाभ उठाने के लिये तो दूध को कच्चा उसी समय पी लेना चाहिये जैसे ही दुहा गया हो। अगर उसे गर्म ही किया जाय तो केवल उसे एक ही उबाल के बाद पी लेना चाहिये। यह नहीं कि जब सेर का पाव भर ही दूध रह जाय तब पिया जाय। काफी औटा हुआ दूध बजाय लाभ करने के हानि करता है। वह भारी हो जाता है। गरिष्ठ हो जाता है। आमाशय में जाकर जम जाता है। और फिर तरह तरह की बुराइयां पैदा करता हैं।

जिन बर्तनों में खाना बनाया जाये वह भी स्वच्छ होने चाहिये जिस स्थान पर खाना बनाने का प्रबन्ध हो वह भी साफ होना चाहिये

खाना बनाते समय अधिक आग न जलाई जाय। तेज आग पर हर वस्तु के तत्वों का नाश हो जाता है।

ऐसी दशा में हर बात का ध्यान बहुत ही लाभदायक है। भोजन और भजन हमेशा एकान्त में स्वच्छता से होना चाहिये।

सातवाँ सर्ग

प्राकृतिक सौन्दर्य

आजकल सौन्दर्य रह ही नहीं गया है। सौन्दय तो प्रकृति की देन है। वही इसकी निर्माता है और वही इसे बनाये रखने में सहायक भी। बिना प्रकृति के सहारे सौन्दर्य आ नहीं सकता। कृत्रिम उपायों से बनाया हुआ सौन्दर्य भी कोई सौन्दर्य है? पाउडर मुंह को सफेद तो कर देता है मगर उतनी ही देर तक सफल रहता है जब तक पसीना नहीं आता। पसीना आते ही कलई की तरह उतर जाता है। लाल रङ्ग के गुलाबी गाल हमेशा के लिए नहीं रहते। वह तो उस समय तक रहते हैं जब तक मुंह धो नहीं लिया जाता।

अतः सौन्दर्य के लिये भी प्रकृति के सहारे की आवश्यकता है।

सिर

लम्बे लम्बे काले बाल स्त्रियों के लिये सौंदर्य है। बाल काले और लम्बे उसी समय तक रहते हैं जब तक उन्हें प्राकृतिक भोजन मिलता है। दिमाग की ताकत ही से बाल बढ़ते हैं और घने रहते हैं।

काली रसभरी आँखों के लिये हरियाली की आवश्यकता है। अगर आँखें हरी वस्तुओं पर अधिक पड़ती हैं तो उनमें एक तरह की मादकता रहती है, ज्योति बढ़ती है और सुन्दर प्रतीत होती है।

गालों की लाली के लिये शरीर में शक्ति चाहिये। शारीरिक शक्ति ही से तो रक्त तेजी से दौड़ता है और तेजी से दौड़ने वाला रक्त ही गालों की लाली को बनाये रखता है।

मुखड़ा पाउडर से तो कभी सुन्दर नहीं लगता। उसका रङ्ग कैसा भी हो। इसका तो कोई ख्याल नहीं होना चाहिए? सुन्दरता के लिये तो नितान्त आवश्यक है, वह चमक जो प्रकृति देती है। काले से काले चहरे भी बड़े भले प्रतीत होते हैं। उसका एकमात्र कारण है शारीरिक शक्ति। निरमल जल से ही आँख, मुह को धोते रहना चाहिये। इस तरह धोते रहने के कारण वह प्रकृति से सौन्दर्य पा सकता है। केवल हमारा कार्य तो उसकी सफाई रखना है। बाकी काम कुदरत का है।

हाथ और कन्धे

हाथों का भी एक विशेष आकर्षण होता है। लम्बे २ हाथ और शक्तिशाली भुजायें अपना विशेष स्थान रखती हैं। भुजाओं के मासल भरे होने चाहिये। पुरुष की तो भुजायें ही विशेष सौन्दर्य है। ऐसा प्रतीत होना चाहिये, मानो कुए से चरस खींचने वाली रस्सियाँ लपेट कर ही भुजाये बनाई गई है। कलाई की हड्डी चौड़ी होनी चाहिये। काम के कारण मनुष्य की उङ्गलियाँ कुछ मोटी हो जाती हैं और स्त्री की पतली उँगलियाँ ही सौन्दर्य होती हैं।

नाखूनों पर लाली लगाने से लाभ नहीं होता। सौन्दर्य तो वह है कि जब खून की लाली नाखूनों में चमके और लाल-लाल प्रतीत हो।

कन्धों में भी सुन्दरता है। दोनों कन्धे सीधे हों और जब आदमी चले तो उनका उठाव समान हो। कन्धों से ही चाल आती

हैं और चाल में जो मादकता होती है, वह कन्धों की समानता का ही प्रभाव है। कन्धे कोटों में रुई की गद्दियां लगाने से तो नहीं भले लग सकेंगे। उन्हें तो अच्छा सुन्दर बनाने के लिये व्यायाम ही करना पड़ेगा।

सीना

पुरुष का सीना चौड़ा होना चाहिये और उसका फुलाव आगे की तरफ होना चाहिये। सीने का झुकाव आगे की तरफ होना चाहिये। सीने को झुकाने के लिये कोई उपाय भी तो कारगर नहीं हो सकता। इसके लिये तो सांस खींच-खींच कर पसलियों, फेफड़ो को बढ़ाना पड़ेगा। लम्बी सांस तो व्यायाम ही में ली जाती है। दौड़-भाग, खेल-कूद ही से तो सांसों का नियन्त्रण होता है और सीना बढ़ता है।

स्त्री की छाती भी अपना महत्व रखती है। बहुत छोटी और बहुत ऊँची भी असुन्दरता का चिन्ह है। कुछ तो गोलाकार अर्द्ध-चन्द्र की शक्ल में होनी ही चाहिये। हवा के झोकों से तो उन्हें आगे खींच कर सुडोल नहीं रखा जाता। महनत करके ही वह सुडोल होती हैं। उनका घर का काम जैसे चक्की पीसना, पानी खींचना आदि ही उन्हे यह सुन्दरता दे सकता है।

पेट

पेट आगे की तरफ बढ़ा न होना चाहिये। वह तो ऊँचाई में सीने से पीछे ही होना चाहिय। पेट को आगे बढ़ने से रोका भी जा सकता है। व्यायाम उसका एकमात्र उपाय है। बिना व्यायाम किये तो पेट जरूर ही आगे बढ़ेगा। जब उसमें भोजन का बोझ रहता है, तो वह क्यों न बढ़े।

कमर

पतली कमर प्राकृतिक सौन्दर्य है। निकम्मे रहने से कमर

पतली नहीं रहती। कमर मोटी होती है। कमर पतली तभी रह सकती है जब शरीर की सारी इन्द्रियां अपना २ काम ठीक तरह करती रहें। बदन में फुर्ती पतली कमर ही से होती है।

फुर्ती लाने और बनाये रखने के लिये ही तो व्यायाम है। स्त्रियों को नाचने की शिक्षा देने का एकमात्र कारण यही है कि वह नाचने के साथ ही व्यायाम करती रहें। नाचने में बहुत काफी व्यायाम हो जाता है। अंग अंग पर पूरा जोर पड़ता है और तमाम नसें सुचारु रूप से काम करती रहती हैं। हाकी, कबड्डी खेलों का मतलब भी तो फुर्ती लाने ही से है।

जांघें

जांघें शरीर के खम्भ हैं। शरीर इन्हीं के सहारे टिका रहता है। इन्हीं के बल पर चलता है और हिलता-डुलता भी है। जांघों पर मांस का सबसे अधिक अंश रहता है। मांस शरीर से थुपा हुआ तो अच्छा नहीं लग सकता। मांस में जब तक नसों के बल नहीं होते, उतार-चढ़ाव नहीं होते वह कभी भला नहीं लग सकता।

जांघों को सुंदर बनाने के लिये व्यायाम ही उत्तम है। सेठ लोग जो दिनभर बैठे रहते हैं, उनकी जांघें वैसे सबसे अधिक मोटी होती हैं पर वह मुटापा तो सौंदर्य नहीं कहा जा सकता। जांघों के बल पर ही शरीर सीधा रहता है। चलने में मस्ती रहती है। अतः उन्हें बलशाली भी तो बनना ही चाहिये। बल व्यायाम से मिलता है।

आजकल के लोगों को देखा जाय तो वह सौंदर्य-सौंदर्य तो पुकारते हैं मगर उसकी परिभाषा नहीं जानते। बम्बई की ऊँची अट्टालिकाओं में तो सौंदर्य नहीं मिल सकता। सच्चा सौंदर्य तो जोखई ग्राम की कण्डे थापने वाली के पास ही है। वह चाहे कैसे भी रहे, मगर प्राकृतिक उसूलों पर चलती हैं और प्रकृति उसे पुरस्कार

खाना भी विष है। जब वह गलने सड़ने लगता है तो तीक्ष्ण विष हो जाता है। अतः दांतों की सफाई भी बहुत जरूरत है। मुंह नली से उठी हुई नसें जो दांतों से टकराकर उनमें अपना खराब असर छोड़ गई हैं तथा भोजन का शेष जो दांतों में जम गया है उन्हें निकालने के लिये उनकी सफाई करनी चाहिये।

दांतों की सफाई हजारों प्रकार से की जा सकती है। मगर दांतों को नीम की दांतुन से साफ करना बहुत लाभदायक है नीम बबूल, पीपर में एक तरह का गोंद होता है। दांतों में एक लुआब बनता है और उसका यह लुआब कण्ठ की नली को साफ करता है, दांतों के मैल को साफ करके मसूड़ों को शक्ति देता है। मुंह में एक तरह का विशेष रस बनता रहता है और इस रस की आवश्यकता शरीर को हर समय रहती है। क्योंकि इससे आमाशय में खाना पचता है, रुधिर की सफाई में इसका उपयोग होता है। जो मनुष्य दांत नहीं मांजते उनके मुंह में हमेशा विषाक्त लुआब रहता है। पेट में भोजन द्वारा जितना भी विष होता है तथा विषैली वायु जो भी सांस द्वारा बाहर फेंकी जाती है उसका कुछ न कुछ अंश मुंह में भी पहुंच जाता है क्योंकि सांस नाडी और मुख नाड़ी का आवागमन मार्ग पास ही पास है अतःबाहर निकलने वाले वायुका जो भी अंश मुख में जाता है उसमें मुख का लुआव विषैला हो जाता है और वह विष शरीर में यदि प्रवेश कर जाता है तो उसका परिणाम भयानक होता है। अपनी जानकारी के लिये अगर आप जानना चाहे कि आपके शरीर में कितना विष है तो रात को सोते समय एक चावल दांतों में रख लेने दीजिये और प्रातः जब आप सोकर उठें तो रात भर मुंह में रखे हुये चावल को एक चिड़िया के आगे डाल दें। बस चावल के खाते ही चिड़िया मर जायेगी। इस तरह आपको स्वयम् ही ज्ञात हो जायगा कि आपके शरीर में विष है और वह विष रात्रि में निद्रा के समय आपके दांतों और मुंह में

इस कारण आ जाता है कि जहाँ से आसानी से बाहर फेंका जा सके। इस कारण दांतों की सफाई अति आवश्यक है।

दांतुन के बाद कुल्ला अति आवश्यक है। कुल्ला करने से मुंह के लुआब को बाहर किया जाता है और दांतुन करने से मुंह मे जो रेशे रह जाते हैं उनको कुल्ला बाहर फेंक देता है। जीभ की सफाई भी कुल्ले से हो जाती है और साथ ही गरारें करने से सांस नली तथा मुंह से खाना ले जाने वाली नली को भी नमी मिलती है। नसें अपनी प्राकृतिक अवस्था में रहती है। और वह रुकने के कारण फटने नहीं लगती हैं।

मालिश

नहाने से पहले मालिश करना आवश्यक है क्योंकि मालिश करने से शरीर के स्नायुओ को तेल मिलता है और शरीर के प्रत्येक रोम का मुख खुल जाता है ताकि वह शरीर में रहने वाले पसीने को बाहर फेंक सके व वायु को प्रवेश करा सके। हमारे शरीर मे रोम खिड़कियो का काम करते है। जिस तरह मकान को हवा और गर्मी पहुँचाने के लिये खिड़कियां और झरोखों की आवश्यकता हाती है उसी तरह रोम भी शरीर की सहायता करते है। रोम क्योंकि खुले रहते हैं अतः उन्हे साफ करना जरूरी है। दिन भर खुले रहने के कारण गर्द गुबार उनमें भर जाता है और मालिश द्वारा उनका कूड़ा-कर्कट ऊपर आ जाता है और मैल स्नान के कारण साफ हो जाता है।

व्यायाम

संसार में हर चीज अकेली बेकार सी रहती है। वह अपूर्ण ही रहती है। एक का नांता दूसरी से जरूर लगा रहता है। इसी प्रकार केवल खाने अर्थात् भोजन से ही काम नहीं चलता। भोजन के बाद व्यायाम की जरूरत महसूस होती है। भोजन का भी यथेष्ट

लाभ तब ही उठाया जा सकता है जब उसको अच्छी तरह पचा लिया जाय।

भोजन का काम तो स्वतः ही पचना है पर फिर भी उसके लिये कुछ न कुछ क्रिया की आवश्यकता होती है। जो घरों में आलस्य के साथ पड़े रहते हैं उनका भोजन पच तो जाता है पर उसका फल नहीं निकलता। प्रमाण के लिये लाला लोगों को ले लीजिये। यह भोजन तो नियम पूर्वक करते हैं मगर यह कोई व्यायाम नहीं करते और न वह कोई महनत का काम ही करते हैं। अतः उनका वह भोजन जिसे वह शारीरिक शक्ति के लिये खाते हैं उनके लिये एक दुख का कारण वन जाता है। उनका पेट आगे को निकलता है। हाथ पैरों में अजीब शिथिलता आ जाती है और वह महनत नहीं कर सकते।

शारीरिक शक्ति के साथ ही साथ शरीर की गठन भी एक बेज़ोड़ वस्तु है। अच्छा कसा हुआ शरीर वहुत ही अच्छा लगता है एक पुरानी कहावत यहाँ बिलकुल मौजू बैठती है—

—: लाख नर गहना, रज लगाकर रहना :—

अर्थात् अगर शरीर की बनावट सुडौल है तो वह लाख गहनों से भी अधिक भला प्रतीत होता है। शारीरिक गठन एक बहुत ही सुन्दर वस्तु है। सुन्दरता का महत्व भी शरीर की गठन पर बहुत काफी असर रखता है।

जो मजा अपने चौड़े सीने, बिशाल भुजाओं, कसे हुये शरीर को देखने में आता है वह उल्लेख नहीं किया जा सकता। अपनी शक्ति और शारीरिक गठन में सुडौल शेर जब मांद से निकलकर बन की ओर अपनी मदमाती चाल से चलता है। तो उस समय जङ्गल का सुन्दर से सुन्दर जानवर शरमा कर मुँह नीचे लटका लेता है।

शरीर में जब शक्ति आयेगी और गठन सुडौल होगी तो साथ ही साथ दोनों का आगमन होगा। यह दोनों चीजें व्यायाम से ही आ सकती हैं। व्यायाम शरीर की रगें खोलता है, भोजन का

पूर्ण स्तैमाल करता है शक्ति का सञ्चार करता है और शरीर को सुडौल बनाता है।

व्यायाम भी कई प्रकार के होते हैं। भोजन को पचा कर शरीर को सुडौल और शक्तिशाली जो भी क्रिया बनाती है वह सब व्यायाम हैं।

उल्लेखनीय व्यायाम हैं —

१—कसरत
२—डम्बिल
३—कुश्ती
४—सैन्डो की कलायें
५—हिन्दुस्तानी खेल
६—अंग्रेजी खेल
७—घरेलू कार्य
८—टहलना
९—तथा दौड़ व अन्य फुटकर

अब हम इन तमाम कसरतों के पूर्ण महत्व बतायेंगे।

कसरत

भारत में बहुत ही पुराने समय से कसरत की प्रथा चली आ रही है। कहा तो यह जाता है कि आर्यों ने ही इनको प्रारम्भ किया था। व्यायाम की क्रिया को आर्यों ने तथा उनसे भी पहले रहने वाली जातों ने अपने जीवन का एक महत्वपूर्ण अङ्ग बना रखा था।

भारत की महत्वपूर्ण कसरत दण्ड और बैठक हैं। यह दोनों कसरत कई हजार वर्ष पुरानी हैं। और क्योंकि यह इतनी सरल हैं यह बहुत ही दिनों से ज्यों की त्यों चली आरही हैं। इन कसरतों से लाभ भी बहुत ही है।

दण्ड लगाना

दण्ड लगाने की रीति बहुत सरल है।

१—दोनों हाथों को जमीन पर या दो ईंटों पर टिका लेना चाहिये।

२—शरीर को झुका लेना चाहिये और पैरों को मिला लेना चाहिये।

अब शक्ल घोड़े की सी हो जायगी।

३—दोनों हाथों को इस तरह रखो कि बीच में से सीना आसानी से निकल जावे और दोनों कोहनियां सीने के पास ही रहें।

४—पहले पैरों को बिलकुल कड़ा रखना चाहिये।

५—दण्ड लगाने से पहले सारे शरीर को कड़ा करलो।

६—अब एकबार शरीर को थोड़ा पीछे की तरफ खींचकर और फिर बाद में पैरों को हल्का २ सहारा देकर गरदन और सीने को अधिक से अधिक दोनों कोहनियों के बीच से निकालते हुये जमीन के बराबर आगे ले जाना चाहिये।

७—आगे ले जाकर फिर धीरे २ उसे वापिस उसी दशा में लगाना चाहिये।

८—शरीर आगे ले जाते समय से सांस भरना शुरू करना चाहिये और जब पीछे वापिस लाने की कोशिश शुरू की जाय तब ही उसे छोड़ना चाहिये। सांस को नाक से ही लेना तथा निकालना चाहिये।

दण्ड की रीति तीन चार बार करने से स्वतः ही आ जाती है। इसका सीखना और करना कोई मुश्किल नहीं है। इसके गुण भी बहुत लाभकारी हैं—

१—सीना चौड़ा होता है।

२—भुजदण्डों के मास बढ़ते हैं।

३—पैरों में शक्ति आती है. और सुडौल होते हैं।

४—कमर मजबूत होती है।

५—तमाम नसों पर बराबर बजन पड़ता है और सब अपना कार्य ठीक ठीक करने लगती हैं।

धीरे २ दन्डों की कई किस्में हो गई। ऐक हाथ से भी दन्ड लगाये जाते हैं। एक हाथ और एक पैर से भी दन्ड लगाये जाते हैं। चक्कर खाकर भी दन्ड लगाये जाते हैं इत्यादि २

बैठक लगाना

बैठक सबसे सीधी कसरत है।

१—दोनों पैरों को बराबर मिला लेना चाहिये।

२—सारे बदन को कड़ा रखना चाहिये।

३—पहले ऐड़ी को थोड़ा पीछे खसका कर पन्जों पर जोर करके बैठना चाहिये और फिर धीरे २ उठना चाहिये।

४—बैठते वक्त नाक से सांस लेनी चाहिये और उठते समय भी नाक से निकालनी चाहिये।

बैठक लगाने से जाँघें सुडौल बनती हैं। पैरों में दम आती है। पेट की सारी नसें ठीक हो जाती हैं। अमाशय को पुष्टि मिलती है। बैठक लगाना सबसे सरल कसरत है।

मुग्दर

भारत मे मुगदर फिराना भी एक प्राचीन कसरत रही है। पहले जमाने में लड़ाई तलवारों से होती थी। तलबार जितनी ही भारी होती थी उतनी ही कारगर होती थी। तलवार चलाने के लिये हाथों में बल तथा शरीर में फुरती की भी जरूरत होती थी।

मुगदर काठके बने हुये गोलाकार लम्बे होते है। इनमें पकड़ने के लिये एक हत्थी होती है। इसको पकड़कर चलाने के लिये ताकत की आवश्यकता होती है।

१—शरीर को अच्छी तरह कड़ा रखना चाहिये।

२—दोनों पैरों को मिला लेना चाहिये।

३—दोनो हाथों में मुगदरों को उठाकर ऊपर की तरफ उनका पिछवाड़ा करके पकड़ लेना चाहिये।

४–कलाई पर जोर देकर सिर के आगे से हाथ निकाल कर पीछे पीठ की तरफ ले आना चाहिये। और फिर उसको ज्यों का त्यों ही खडा रखना चाहिये।

५–जब कुछ अभ्यास हो जाय तो दोनों हाथों को साथ २ ही चलाना चाहिये।

मुगदर चलाने से सीना चौडा होता है भुजाओं के मासल ठीक बने रहते हैं। शरीर की समस्त इन्द्रियां खुल जाती हैं। शरीर में फुरती आती है।

डम्बिल

आजकल बिदेशी सभ्यता का बहुत प्रचार है। अतः लोगों ने विदेशी व्यायाम प्रणाली को अधिक पसन्द किया है। डम्बिल विदेशों की एक व्यायाम प्रणाली है। इसके लिये खास वस्तुओं की आवश्यकता होती है। अतः यह कुछ खर्च करने के बाद ही आरम्भ की जा सकती है।

डम्बिल भी मुगदरों की तरह के होते हैं। मगर यह उनसे बहुत हल्के होते हैं। अतः इनको चलाने में ताकत कम लगती है और शारीरिक व्यायाम के लिये अधिक हाथ चलाने पड़ते हैं।

डम्बिलों को फिराने से तो शुरूआत की जाती है। ताकि कलाई में ताकत हो जाय और नियमित रूप से व्यायाम करने का अभ्यास हो जावे।

डम्बिलों में अभ्यस्त हो जाने के बाद स्प्रिङ्ग डम्बिलों की जरूरत महसूस होती है। स्प्रिङ्ग डम्बिल अधिक ताकत चाहते हैं। दो मुठ लोहे के होते हैं और उनकी बनावट इस तरह की होती है कि वह सहज ही हाथ में पकड़े जा सके। दोनों हाथों में उनको पकड़ा जाता है। मूठों के बीच में स्प्रिङ्ग होती है।

प्रत्येक हाथ में एक मूठा कस कर पकड़ लिया जाता है और ताकत लगा कर उसे दबा दिया जाता है ताकि मूठे की स्प्रिङ्ग न खुल

सकें। फिर उनको जोर से दबाकर हाथों को ऊपर नीचे ले जाया जाता है। क्योंकि हमेशा यही डर रहता है कि अगर जरा भी हाथ का पञ्जा ढीला पड़ा तो फौरन ही स्प्रिङ्ग का वेग बढ़ जायगा और मूठा खुल जायगा अतः कलाई पर जोर रखना पड़ता है। हाथ में मूठों को जोर से पकड़े ही पकड़े हाथों को हिलाकर और तरह २ के हाथ निकालकर कसरत की जाती है।

इस कसरत से शरीर में जो ताकत बढ़ती है वह तो है ही मगर कलाई और पञ्जे की ताकत विशेष रूप से बढ़ती है। इन स्थानों को शक्तिशाली बनाने के लिये भुजाओं मे ताकत चाहिये। अतः स्वतः ही मांसल शक्तिशाली होकर सुडौल बन जाते हैं।

रबड़ की गोलाकार डोर को फैलाना, स्प्रिङ्गों को खींचकर बड़ा करना, कड़ों को रस्सी के सहारे ऊँचाई से लटकाना और फिर उनमें हाथ डालकर कसरतें करना आदि भी इसी कसरत में शामिल है। यह तमाम कसरतें बड़ी ही कीमती हैं और अधिक स्थान चाहती हैं।

कुश्ती

संसार में सबसे अधिक व्यायाम सम्बन्धी महत्व अगर एक मत होकर किसी व्यायाम प्रणाली ने पाया है तो वह कुश्ती है। कुश्ती बहुत ही प्राचीन समय से प्रचलित है।

आपस में जब दो आदमियों को अपनी ताकतें अजमाकर यह पता लगाने की जरूरत महसूस होती है कि इनमें अधिक शक्तिवान कौन है तो कुश्ती लड़कर ही उसका फैसला कर लिया जाता है। शारीरिक शक्ति का और कोई माप नहीं दो शक्तियोंको माप करने के लिये कुश्ती लड़ी जाती है।

शक्ति का संचय भी कुश्ती से होता है। जब दो बराबर की शक्तियां एक दूसरे से गुथतीं हैं तो आपस में एक दूसरे को हराने के

लिये संघर्ष होता है। अतः शरीर का सारा बल एकत्रित करके उसे अपने प्रतिद्वन्दी को हराने में लगाने की चेष्टा की जाती है।

इस तरह शरीर के हर अङ्ग पर कुछ न कुछ भार तो पड़ता ही है। उस भारके पड़ने से अङ्गोंमें शक्ति आती है। कुश्तीसे लाभ–

(१) फुरती कुश्ती का मूल है। जब तक कुश्ती का लड़ने वाला बहुत फुर्तीला नहीं है वह चाहे कितना भी बलशाली क्यों न हो जीत नहीं सकता।

(२) शरीर के हर भाग पर समान जोर पड़ता है। कुश्ती लड़ते समय शरीर की समस्त इन्द्रियों को चौकन्ना रहना होता है। अतः तमाम शारीरिक इन्द्रियाँ ठीक काम करती रहती हैं।

(३) पृथ्वी तत्वों में अधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय पद्धति में कुश्ती अखाड़े में होती है। अखाड़ा पृथ्वी पर बना होता है। अतः कुश्ती लड़ते समय जो भी मिट्टी शरीर में लगती है वह बहुत ही लाभदायक होती है और शरीर की गठन सुडौल बनाने में मदद करती है।

(४) नाक ही से साँस ली जा सकती है। मुँह खोलना सम्भव नहीं है अतः नाक की शक्ति बढ़ती है और शरीर को पूरी शक्ति (आक्सीजन) मिल पाती है।

(५) विदेशी लोग कुश्ती गद्दों पर लड़ते हैं। यह अच्छा नहीं। कुश्ती तो पृथ्वी पर ही होनी चाहिये।

आज नहीं हजारों वर्ष पहले तो कुश्ती का बहुत महत्व था। आपस के झगड़े कुश्ती से ही तय कर दिये जाते थे। आर्यों में विवाह अवसर पर कुश्ती कराई जाती थी। जो विजयी होता था वही रूपवती स्त्री का पति बनने का अधिकारी हो सकता था।

सैन्डों की कलायें

विदेशी व्यायाम विशेषज्ञ सैन्डो ने अपनी एक व्यायाम पद्धति निकाली है। उसका विश्वास है और उसे अजमाकर भी सिद्ध कर

दिया है कि साधारण मनुष्य के लिये सांस द्वारा हाथ पांव हिलाकर व्यायाम कराया जा सकता है।

वह सांस को अधिक महत्व देता है। उसका तत्वज्ञान भी ठीक ही है। वायु तो संसार में वैसे ही सब तत्वों से प्रबल है। और जब शरीर में स्वतः ही वायु का आवागमन रहता है। तो क्यों न उसका ही लाभ उठाया जाय। सांस को शरीर ही में रोककर इन्द्रियों को चलाने फिराने से शरीर को शक्तिशाली बनाया जा सकता है और उसकी गठन को भी सुधारा जा सकता है।

उसकी चार व्यायाम कलाये बहुत प्रचलित हैं—

भुजबली

(१) सारे शरीर को कड़ा करके ऐड़ी मिलाकर खड़ा होना चाहिये।

(२) दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर उन्हें बिलकुल कन्धे की सीधे में रख कर फैलाना चाहिये।

(३) नाक से धीरे २ सांस लेना प्रारम्भ करके धीरे-धीरे समेटना चाहिये ताकि मुट्ठियां आकर कन्धे से मिल जांय और फिर सिर के ऊपर उठाना चाहिये। और सिर को भी सीधा हो जाना चाहिये। जब हाथ सीधे हो जांय तब धीरे २ शरीर में जमा की हुई सांस को निकालना प्रारम्भ करना चाहिये और जिस तरह हाथों को ले जाया गया था अपने स्थान पर वापिस ले आना चाहिय।

इस कला से हाथों की ताकत बढ़ेगी। सीना चौड़ा होगा। मांसल सुडौल होगे। शरीर में फुर्ती आयेगी। शिर की इन्द्रियां भी चेतन्य होंगी। पैरों में भी दम आयेगी और जांघें सुडौल होगी। शरीर कड़ा रहने के कारण पेट और पीठ को भी लाभ होगा।

कलाई की कला

(१) जिस तरह पिछली व्यायाम कला के लिये खड़ा हुआ है इसी तरह इसके लिये भी खड़े होना है।

(२) दोनों हाथों को सीधा कर उँगलियों को फैला दो।

(३) फिर धीरे-धीरे सांस खींचो और उँगलियों को आधा मोड़कर तमाम ताकत कलाई पर लगाओ और फिर उन्हें पहले की तरह कन्धों के पास लाओ और फिर ऊपर ले जाकर सीधा करके धीरे-धीरे सांस उतारते हुये अपनी जगह ले जाकर छोड़ दो।

मेधराज

(१) दोनों हाथों की मुट्ठियां बाँध लो।

(२) शरीर को कड़ा करलो।

(३) पहले हाथों को ऊपर ले जाओ, सांस खींच लो। बाद में धीरे २ कमर को आगे की तरफ झुकाकर हाथों को नीचे की तरफ बदन के साथ-साथ लाओ। पैर के अगूठों को छूने की कोशिश करो।

(४) जब सांस फूलने लगे तो फिर धीरे २ शरीर को सीधा करते रहो और धीरे २ नाक से सांस भी निकालते रहो।

इस व्यायाम से सारे शरीर की इन्द्रियों पर जोर पड़ता है।

पैराय

(१) सारे शरीर को कड़ा करलो।

(२) हाथों को कमर पर रख लो।

(३) पहले एक पांव को आगे बढ़ाकर हवा में ही झूलने दो। जमीन पर न टिकने पावे। फिर बादमें दूसरे पैर को आगे बढ़ाओ और फिर दोनों पैरों को बारी २ से दांये-बांये निकालो।

(४) अब जल्दी जल्दी व्यायाम करने की आदत डालो।

(५) व्यायाम करते समय लम्बा-लम्बी सांसे लेनी चाहिये और नाक से लेकर नाक ही से निकालनी चाहिये। मुंह से सांस लेना या निकालना हानिकारक होता है।

हिन्दुस्तानी खेल

आज तक जितने भी खेल हैं वह सब व्यायाम के लिये ही

है। और उसी दृष्टिकोण से बनाये गए हैं। भारतीय खेलों में बहुत ही उपयोगिता है और वह संसार के सारे खेलों से सस्ते हैं।

कबड्डी

१—कबड्डी का खेल सरल है। जितने भी लोग खेलें वह दो हिस्सों में बराबर २ बट आते है।

२—रैतीली पृथ्वी पर एक लकीर खींच ली जाती है, इसे फाला कहते है। फाले के दोनो ओर दल हो जाते हैं, फाला हद है।

३—पहले एक लड़का गुनगुनाता आता हुआ फाला पार करके दूसरे दल की सीमा मे जाता है। वहाँ वह अपनी सांस रहते हुए अगर किसी को छू ले और फाले पर आ जाय तो दूसरे दल का वह आदमी जो छू गया है बेकार हो जाता है।

इसी तरह खेल चलता रहता है। असल में इस खेल के अन्दर जितना भी मन बहलाव रखा गया है उसके पीछे कुछ न कुछ व्यायाम अवश्य है। सांस को साधे रहना सबसे बड़ा व्यायाम है। दौड़, आपस में गुत्था—गुत्थी इत्यादि भी व्यायाम ही हैं।

गिल्ली—डण्डा

लकडी का एक सीधा डन्डा जो लगभग आधा गज लम्बा होता है। एक लकड़ी की गिल्ली जो आध फुट या कम होती है उसके दोनों ओर नोंक होती है ताकि वह चाहे जहाँ भी क्यों न पड़े उसके दोनों तरफ के सिरे पृथ्वी से उठे रहेगे और जरा सी चोट से ही वह उछल जाती है।

पहले गिल्ली को पृथ्वी पर रख डन्डे के जोर से दूर फेंका जाता है और दूसरा दल उसके लपकने की कोशिश करता है। जब गिल्ली दल द्वारा नहीं लपकी जाती तो उसे फेंकने वाला उछाल २ कर तीन बार मार कर दूर फेकता है। इस तरह खेल चलता है।

हाथों की ताकत, भाग दौड़ के लिए यह खेल भी एक अच्छा खासा व्यायाम हो जाता है।

विदेशी खेल

विदेशी खेल विदेशी राज्य के साथ ही साथ भारत में आए थे। उन्होंने धीरे २ अपनी जड़ें जमाली हैं, और अब वह बहुत प्रचलित होगए हैं। दूसरी बात यह भी है कि संसार भर में योरुप का अधिपत्य कई सौ वर्षों से चला आ रहा है, अतः उनकी कला संस्कृति का विकास संसार का एक महत्वपूर्ण अङ्ग बन चुका है। आजकल यह खेल संसार भर मे प्रसिद्ध होगए हैं।

हाकी

ग्यारह २ खिलाड़ियों के दल बनाए जाते हैं। फिर उनके अन्त में दोनों ओर दो खम्बे गाढ़कर गोल बनाते हैं। लगभग चार फीट की हाकियों से गेंद को मारा जाता है। इसी तरह खेल चलाता है।

भाग, दौड़, तत्परता, फुर्ती सबकी आवश्यकता इस खेल मे होती हैं। यह तमाम चीजें व्यायाम है।

फुटबाल

चमड़े के खोल में रबड़ की एक गुब्बारे ऐसी ट्यूब रखी जाती है और हवा भर कर चमड़े के खोल को अच्छी तरह फुला लेते हैं। इसमें भी तमाम खेल हाकी की तरह से होता है। अन्तर केवल इतना ही है कि गेंद हाकी से नहीं पैरों से मारी जाती है। सिर का भी कभी २ स्तेमाल हो जाता है।

इस खेल से भी हाथ पैर और सिर में ताकत आती है।

वैसे तो टैनिस, बडमिनट, पिंगपोंग, पोलो, रगबी, वगैरह बहुत से खेल हैं। इन तमाम खेलों का मतलब भी तो केवल व्यायाम ही से है। शारीरिक गठन और शक्ति को खेलों से प्राप्त किया जाता है।

७ घरेलू कार्य

विदेशों में तो औरतें खेलों में पूरा हिस्सा लेती हैं, मगर भारत में अभी यह बात नहीं है। अतः भारत के लोगों ने औरतों के व्यायाम का प्रबन्ध घरेलू कार्यों ही में सिखा दिया है। असल मे देखा जाय तो अब भी गाँवों मे औरते हृष्ट-पुष्ट और शक्तिशाली रहती हैं। उसका कारण है कि वह लोग व्यायाम घरेलू कार्यों ही मे कर लेती हैं।

पानी खींचना

कुए से पानी खींचना कोई सरल काम नहीं है। इसे खींचने के लिये ताकत-फुर्ती दोनों की जरूरत होती है। कुऐ से पानी खींचने में हाथों, कमर, पैरों पर काफी जोर पड़ता है और वे इस व्यायाम के कारण शक्तिशाली हो जाती हैं।

चक्की चलाना

चक्की चलाना हर एक के बस की बात नहीं है। उसमें काफी ताकत लगती है। चक्की चलाने से हाथों मे शक्ति आती है। शरीर का हर अंग खुल जाता है। शरीर फुर्तीला हो जाता है और कहा जाता है कि कोई रोग निकट नहीं आने पाता। रोग निकट आये तो कैसे ? चक्की चलाने में काफी व्यायाम जो हो जाता है।

बागवानी

औरतों के व्यायाम की बात लिखी। मगर कुछ आदमी भी ऐसे है जो और किसी तरह से व्यायाम कर लेते है। बागवानी भी एक तरह का व्यायाम है। इसमें भी मिट्टी खोदनी पड़ती है। पानी देना होता है। पौधों की देखभाल करनी पड़ती। इन सब कामों मे भी अच्छी खासी महनत हो जाती है। अतः इसी तरह से व्यायाम का शोक पूरा हो जाता है। शरीर मे ताकत आती है और फुर्ती रहती है।

८ टहलना.

कुछ लोग ऐसे हैं जो कोई व्यायाम नहीं कर सकते । बूढ़े लोगों से व्यायाम नहीं हो सकता । ऐसी दशा में उनकी तन्दुरुस्ती कैसे ठीक रह सकती है । अतः टहलने की पृथा निकाली गई ।

टहलना भी एक तरह का व्यायाम है । टहलना बहुत ही लाभदायक सिद्ध हो सकता है, बशर्ते कि कायदे से किया जाय ।

१–सूर्य निकलने से पहले ही टहलना चाहिये ।

२–कम से कम एक मील टहलना चाहिये ।

३–हरियाली के स्थानों पर टहलना चाहिये ।

४–अगर होसके तो नंगे पैरों घास पर टहलना चाहिये ।

५–सूर्य निकलने से पहले ही टहल कर लौट आना चाहिये ।

६–टहलते समय नाक ही से सांस लेनी चाहिये । जहाँ तक होसके बातें न की जांय तो अच्छा है ।

७–अधिक कपड़े पहन कर टहलने जाना बेकार है ।

टहलने से शरीर में फुर्ती रहती है और तमाम इन्द्रियां ठीक रहती हैं । इसका मुख्य कारण यह है कि प्रातःकाल की हवा बहुत लाभदायक होती है । इस वायु का सेवन निरंतर करते रहने से मनुष्य के शरीर को नयी शक्ति मिलती रहती है ।

९ अन्य फुटकर व्यायाम तथा दौड़.

सीधे खड़े हो जाओ । छाती आगे की ओर निकली रहे और कंधे पीछे को झुके रहे । अब हाथ की मुट्ठियों को बांधो और हाथों को कोहनियों से मोड़कर बगलों के सामने छाती की ओर ले जाओ और बाऐं पैर को उठाकर इतना ऊपर ले जाओ मानों उसकी एडी नितम्ब को छूने जा रही हो । अब बाऐं पैर को जमीन की ओर ले जाते हुए छत्तीस इञ्च के फाँसले पर रखो और दाहिने पैर को ऊँचा उठाकर बाऐं पैर की क्रिया को करो । इस प्रकार दौड़ना आरंभ कर

दो। दौड़ते हुए तेजी मत करो, बल्कि ऊपर बताई हुई क्रिया को ठीक-ठीक अनुसरण करो। हाथों को पीछे की ओर खूब खींचे रहो, यहाँ तक कि हाथों की मुट्ठियाँ बगलों के सामने आ जाय। दौड़ने का अभ्यास करते हुए गहरी और लम्बी सांसें खींचो और उनको कुछ रोकते हुए धीरे-धीरे छोड़ने का अभ्यास करो।

व्यायाम की प्रत्येक अवस्था मे अपने मनको एकाग्र करो और उनसे होने वाले लाभों अनुभव करो।

।।सन

वैसे तो व्यायाम के अन्य भी तरीके हैं और हो सकते हैं। मगर उन सबमें आसनों का स्थान अति उच्च है और उनके द्वारा समस्त कसरतों का कार्य पूर्ण हो जाता है। उनका असर सम्पूर्ण शरीर पर पड़ता है, जिसके कारण स्नायु पुष्ट होते हैं। रक्त, बल, वीर्य की वृद्धि होती है और मानसिक शक्ति को चेतना मिलती है। नर्व.न शक्ति के सञ्चार से आयु बढ़ती है और शरीर का विकास होता है।

आरोग्य शरीर से जो कुछ भी अधिकाधिक आनन्द प्राप्त हो सकते हैं वह सब आनन्द प्राप्त होते हैं और स्फूर्ति से जीवन का ढांचा एक दम बदल जाता है। उसकी परिश्रम करने की सामर्थ बढ़ती है और सामर्थ बढ़ने के कारण उसके हृदय में एक ऐसी उमंग आती है जिससे वह हमेशा अथक परिश्रम के लिये तत्पर रहता है

आसनों के लाभ अनेक हैं और उनका उपयोग भी विभिन्न तरह से होता है। जो भी रोग किसी कारण शरीर में प्रवेश करने का साहस करते हैं, आसन करने के कारण उनका नाश हो जाता है। आसन जीवन में आनन्द तो देते हैं, मगर साथ ही वह रोगों का भी नाश करते हैं। योगासनों की जीवन की गति पर अमिट छाप होती है। उन सबका उल्लेख यथा स्थान पर किया जायेगा।

स्नान

जल से समस्त प्रकार के मैलों की सफाई होती है । शरीर पर मैलों का प्रभाव भी होता है । मालिश करने से वह मैल अलग हो जाते हैं और साफ जल से स्नान किया जाता है, तब वह मालिश द्वारा निकला हुआ मैल स्नान से साफ हो जाता है। स्नान के लिये जल की आवश्यकता होती है, जल को भी कई तरह से प्रयोग किया जाता है। मुख्यतः निम्न प्रकार से जल का प्रयोग किया जाता है:—

१—ताजा पानी ।
२—शीतल जल ।
३—उष्ण जल ।

१. ताजा पानी—कुए से पानी हाल खींच कर स्नान के लिये काम मे लाया जाता है, उसे ताजे पानी का स्नान कहते हैं । नदी, कूए, तालाब, बावड़ी आदि के पानी को ताजी पानी कहा जाता है। क्योंकि इनका पानी स्रोत से निकलता है और जो पानी पृथ्वी के गर्भ से निकलता है, वह ताजी कहलाता है। क्योंकि पृथ्वी के गर्भ में उष्णता है और समयानुसार शीतलता भी। आप देखेंगे कि कुओं का पानी जाड़ों में गर्म और गर्मी मे ठंडा होता है। इन ऋतुओं में इसी तापक्रम के जल की आवश्यकता होती है। इस वास्ते ताजे पानी का स्नान प्राकृतिक नियमानुकूल है।

२. शीतल जल—पहाड़ों से निकलने वाली नदियों में जमी हुई बर्फ से होकर पानी आता है, इस कारण वह शीतल होता है। इस पानी से गर्मी में स्नान लाभदायक होता है। कुछ लोग रात को घड़ों में पानी भर कर रखते हैं और प्रातः उन घड़ों के पानी से स्नान करते हैं। इस शीतल जल के स्नान से उनको एक तरह की शन्ति प्राप्त होती है तथा मौसम के हिसाब से उसकी आवश्यकता भी होती है।

गर्मी में शरीर का तापक्रम बढ़ा होता है। मौसम का असर शरीर पर पड़ता है। गर्म मौसम में शरीर के अन्दर का रक्त गर्म हो जाता है। क्योंकि उसमें जल की आवश्यकता होती है। पञ्च तत्वों में जल भी एक तत्व है। अतः जब इस मौसम में जल तत्व का ह्रास होने लगता है तब शरीर के अन्दर की जरूरतों को पूरा करने के लिये तथा शरीर के तापक्रम को घटाने के लिये शीतल जल का स्नान किया जाता है।

३. उष्ण जल—जल अग्नि तथा सूर्य ताप की संसर्गता से उष्ण हो जाता है अतः ग्रीष्म-काल में इसकी आवश्यकता प्रतीत होती है। क्योंकि प्राकृतिक तापमान शीत होने के कारण शरीर के अन्दर तथा बाहरी हिस्सों पर असर हो जाता है और उनको उष्ण करने के लिये उष्ण जल का प्रयोग किया जाता है।

उष्ण जल के स्नान से चर्म को उष्णता मिलती है जिसके कारण शरीर में स्फुर्ति का सञ्चार होता है। स्फुर्ति से जीवन में चेतना आती है और चेतना से शरीर सजग होता है। अब प्रश्न यह उठता है कि स्नान किस जल से किया जाय? इसका एकमात्र उत्तर है कि जिस तरह की जलवायु में मनुष्य का निवास हो उसी के उपयुक्त जल से स्नान किया जाय तो शरीर के लिये लाभकारी हैं। शीत और नम देशों में उष्ण जल का स्नान श्रेयस्कर है। गर्मी में शीतल और वर्षा में ताजी पानी लाभकारी है। अगर किसी एक परिपाटी पर ही चलना है तो सर्वोत्तम स्नान ताजी पानी का है क्योंकि इससे प्राकृतिक नियम का पालन होता है और ताजा पानी प्राकृतिक होता है।

भोजन

स्नान के बाद भोजन इसलिये आवश्यक है क्योंकि कसरत आदि के बाद शरीर थक जाता है और स्नान के कारण अङ्गों की

शिथिलता दूर हो जाती है, उनमें चेतना आती है। चेतना से शरीर के समस्त अङ्गों को भोजन की आवश्यकता होती है तथा उस समय मनुष्य अपनी जीवन नौका को चलाने के हेतु परिश्रम करने भी जाता है अतः वह भोजन से फारिग होकर अपने एकाग्रचित से परिश्रम में अनवरत होना चाहता है। भोजन के विषय में अलग परिच्छेद में बहुत कुछ लिखा जा चुका है।

परिश्रम

जीवन-यापन के लिये परिश्रम सबको करना पड़ता है। यह प्रकृति का सिद्धान्त है। मनुष्य को भी परिश्रम करना अनिवार्य है। मगर परिश्रम के भी कई रूप होते हैं जिन्हें हम विभिन्न तरह विभाजित करते हैं—

१—शारीरिक

२—मानसिक

१. **शारीरिक**—इस परिश्रम से मनुष्य के हर अङ्ग पर बोझ पड़ता है। उसे हाथ, पैर, कलाई, पीठ, पेट, सीना, मुंह, आखें आदि हर अङ्ग की मदद लेनी पड़ती है। इसके कारण उसके अङ्गों में शिथिलता आती है। जिन्हें शारीरिक परिश्रम करना पड़ता है उनके अङ्ग सुदृढ़ होने लगते हैं और उनमें नवीन शक्ति तथा स्फुर्ति का सञ्चार होता है। परिश्रम करके जो थकान होती है उससे वीर्य का ह्रास होता है और उसकी पूर्ति भोजन से की जाती है।

२. **मानसिक**—इस परिश्रम से मनुष्य के हृदय तथा मस्तिष्क पर बोझ पड़ता है। उसके स्नायुओं पर कम थकान होती है क्योंकि जो कुछ भी परिश्रम उसे करना होता है वह केवल दिमाग से होता है। वैद्य, लेखक, विचारक, ज्ञानी, आदि के परिश्रम केवल मस्तिष्क के होते हैं। उन्हें सोचने का कार्य करना पड़ता है उनके अङ्गों पर उसका असर नहीं पड़ता। मगर इसका यह आशय नहीं कि उन्हें थकान नहीं होती। उन्हें थकान उतनी ही होती है

जितनी शारीरिक परिश्रम करने वाले को होती है। थकान वीर्य नष्ट होने से होती हैं। शारीरिक परिश्रम में जितना वीर्य खर्च होता है मानसिक परिश्रम से उसमें अधिक व्यय होता है। शारीरिक परिश्रम करने वाले के वीर्य का जितना ह्रास होता है वह भोजन द्वारा उसे पूरा कर लेता है क्योंकि अङ्गों पर उसके परिश्रम का प्रभाव पड़ता है और वह भोजन द्वारा शरीर में पहुंचाए गये भक्ष पदार्थों का पूर्ण उपयोग कर लेते हैं। मगर मानसिक परिश्रम करने वालों के अङ्गों में वह पाचन शक्ति नहीं होती अतः उन्हे भोजन पचाने के लिये भी परिश्रम करना चाहिये और पड़ता है। योग–साधन से उनकी यह मुश्किल हल हो जाती हैं। योगासनों द्वारा उनके अंग प्रत्यागों पर असर पड़ता है और उनमें भक्ष्य को पचाकर उनसे पूर्ण शक्ति लाभ करने की क्षमता प्राप्त हो जाती है।

आराम

परिश्रम से जब आदमी थकता है तो उसे भूख लगती है। भोजन करने के बाद उसे भोजन का नशा होता है क्योंकि भोजन में पुष्ट पदार्थ होते हैं। और पुष्ट पदार्थों में शक्ति है और शक्ति स्वयम् मद है, नशा है। अतः संध्या भोजन के उपरान्त मनुष्य को आराम की जरूरत होती है। मगर भोजन के उपरान्त एकदम आराम करने से उसका असर शरीर पर बुरा होता है क्योंकि निद्रावस्था में मनुष्य की इन्द्रियां सुप्तावस्था में होती हैं और भोजन को पचाने के लिये इन्द्रियों का जाग्रत रहना आवश्यक है ताकि वह अपना कार्य पूरा कर सकें। अतः सन्ध्या समय भोजन के बाद एकदम निद्रामग्न नहीं हो जाना चाहिये वरन् भोजन को पचाने के लिये कम से कम दो घन्टे तक टहलना और घूमना अति आवश्यक है।

घूमने से शरीर को थकान होती है और भोजन भी पच जाता है। थककर नींद भी अच्छी तरह आ जाती है और पूर्ण निद्रा

के कारण अंगों को विकास का पूर्ण समय मिल जाता है। मनुष्य के शरीर में प्रातः उठने तक नवीन स्फुर्ति का सञ्चार हो जाता है। शरीर के लिये जितना भोजन आवश्यक है उतनी ही आराम की भी आवश्यकता है।

नवाँ सर्ग

मानसिक विकास

मस्तिष्क को तमाम इन्द्रियों का केन्द्र समझा जाता है। असल में देखा जाय तो सच ही यह तमाम इन्द्रियों का केन्द्र है। मस्तिष्क के विचारों का व्यायाम बहुत ही श्रेष्ठ होता है। मन की भावना तमाम व्यायामों से सर्वोपरि है।

दिमाग अगर साफ है, विचार शुद्ध हैं तो शरीर पर उसका अच्छा असर पड़ता है और फिर सारे कार्य अपने ही आप सिद्ध होते रहते हैं। अगर दिमाग के विचार ठीक नहीं और उसके आचरण भी कलुषित हैं तो कोई भी व्यायाम चाहे वह कितना ही लाभकारी क्यों न हो कोई लाभ नहीं पहुंचा सकता।

मानसिक विकास और उसकीं अन्न व्याख्यायें निम्नलिखित हैं—

१. विचार धारा—हर मनुष्य के विचारों की धारा अपनी अलग ही होती है। हर आदमी कोई बात दूसरे की तरह नहीं सोच सकता। जो कुछ भी वह सोचता है वह उसका अपना ही है। अतः कुछ भी विचार धारा का प्रभाव हो मगर हमेशा मनुष्य को आशावादी होना चाहिये। उसे अपने मन से यह बात तो निकाल ही देनी है कि संसार में ऐसा भी कोई काम है जो नहीं हो सकता।

इस विषय में हमें नेपोलियन के कथन पर ध्यान देना चाहिये। वह कहा करता था "असम्भव शब्द केवल मूर्खों के तसल्ली करने का मन्त्र है"। अतः कहने का मतलब यही कि हर काम जिसे मनुष्य सोच सकता है पूरा भी हो सकता है।

इस आशावादी विचार प्रवाह का शरीर पर अच्छा असर पड़ता है। शरीर में फुरती रहती है। जिस काम पर हाथ डाला जाता है उसमें पूर्ण उत्साह होता है। अतः इन्द्रियों को पूर्ण सहयोग देना पड़ता है और इसी तरह काम करने के कारण वह सुव्यवस्थित भी रहती है।

२. निर्णायक—आदमी को बहुत सोच विचार करने में देर नहीं लगानी चाहिये। जो कुछ भी फैसला देना हो शीघ्र कर लिया जाना चाहिये। बहुत सोच विचार के कारण आदमी आलसी हो जाता है और हो सकता है कि उसका शरीर भी स्थिर न रह सके। अतः मनुष्य को चाहिये कि उसे जो कुछ भी करना हो शीघ्र ही कर डाले।

उलझन में पड़े रहने से मानसिक क्लेश होता है। परेशानियाँ पैदा होती रहती हैं और उनके कारण शरीर में शिथिलता आने लगती है। शिथिलता ही मनुष्य के लिये सबसे अधिक हानिकारक और असाध्य रोग है।

३. विचारशील—मनुष्य को बहुत विचारशील होना चाहिये। आदमी समाज का एक सदस्य है। समाज में उसे जीना है, मरना है, रहना है, और शेष जीवन के सारे कार्य करने हैं। समाज के कुछ नियम होते हैं। उनको मानना ही होता है। मनुष्य को चाहिये कि वह समाज के नियमों पर सोचे, विचार करे, और जहाँ उसके बिचार भिन्न हों उन्हें अपने अनुकूल बनाले और नियमों का पालन करता रहे।

ऐसा करने से उसका स्थान समाज में रहेगा। जिस आदमी

का स्थान समाज में नहीं रहता उसकी दशा बहुत खराब होजाती है। वह बुरे रास्तों की तरफ खुद ही जाने लगता है। जब अच्छाई में उसका स्थान नहीं रहता तो फिर तो प्रत्यक्ष है कि उसे बुराई में तो स्थान मिलेगा ही।

४. सच्चरित्र— चरित्र मानुष की सफलता है। चरित्र मनुष्य का जीवन है और चरित्र ही मनुष्य का व्यवहार है। जो कुछ भी आदमी करता है उस पर उसके चरित्र की छाया अवश्य रहती है। चरित्र का असर दिमाग पर पड़ता है और दिमाग इन्द्रियों की कुंजी है। अतः मनुष्य का चरित्र उसके जीवन क्षेत्र में अपना एक प्रतिष्ठित स्थान रखता है।

चरित्र को बनाना मनुष्य का काम है। उसकी संगत से ही उसका चरित्र बनता है अतः जब भी सगंत करे तो उसे अच्छी तरह सोच विचार लेना चाहिये। अगर संगत बुरी हो जाती है तो उसका ध्यान कभी अच्छे रास्तों पर नहीं आ सकता। रात भर वैश्या के कोठे पर सोने वाला आदमी कभी यह नहीं चाहता कि वह व्यायाम करे। रात भर जुआ खेल कर टहलने नहीं जाया जाता। शराबी में इतनी शक्ति ही कहां रह जाती है कि वह व्यायाम कर सके या प्रकृति के अन्य उसूलों पर चल सके।

अतः मानसिक शक्ति के लिये चरित्र का शुद्ध होना आवश्यकीय है।

५. हंस मुख—मनुष्य को सदा प्रसन्न चित्त ही रहना चाहिये। वह इन्सान ही क्याहै जो हंसते २ जीवन पार करने की बात न सोच सके। प्रसन्नता से हृदय को एक नई प्रेरणा मिलती है। कहा जाता है घन्टे भर हंस लेने से एक छटांक रक्त बढ़ जाता है।

हृदय को प्रसन्नता तभी मिलती है जब वह जान लेता है कि उसके सारे कार्य ठीक तरह से चल रहे हैं या उसके कार्यों

से उसे शान्ति है। हमेशा हंसते रहना भी एक तरह का व्या-याम ही है।

६—वन्दना—ईश्वर के नाम का महत्व सभी जानते हैं। जो लोग ईश्वर पर विश्वास नहीं करते वह इतना तो अवश्य मानते हैं कि ऐसी कोई शक्ति है जो इस विश्व का संचालन करती है। वन्दना से अर्थ नहीं कि राम रहीम ईसा की ही आराधना की जाय।

वन्दना से मतलब है कि जिसको आप समझते हैं कि वही इस विश्व का संचालन करता है एक बार दिन में एक मिनट के लिये उसके बारे में सोच लेना चाहिये। उसके बारे में सोच लेना और बुरे काम करते समय उसका भय खाना ही वन्दना है।

इन तमाम बातों का प्रभाव मानसिक शक्ति पर पड़ता है। मानसिक विकास के लिये हमें उनका ध्यान रखना चाहिये। जब तक हमारा मन शुद्ध नहीं है तब तक हमें व्यायामिक क्रिया से शान्ति नहीं होगी।

दसवां सर्ग

भोग विलास।

मानव जीवन में भोग भी अपना एक स्थान रखता है। संसार के प्राणियों को भोग करना ही पड़ता है और प्रकृति ही भोग की सामिग्री जुटाती है। अतः हमारा यह मतलब नहीं कि स्वास्थ्य की मर्य्यादा के लिये हमें विरक्त ही हो जाना पड़े। भोग भी बहुत आवश्यकीय है।

संसार की उत्पत्ति भोग का ही फल है। अगर प्रकृति भोग

क्रिया पर पाबन्दी लगा दे तो फिर संसार की चाल स्वतः ही समाप्त हो जाये। अतः जीवन बिना भोग के नीरस है।

भोग

प्रकृति ने संसार के हर प्राणी को जोड़े से बनाया है। नर नारी का हिसाब उसने हर तत्व में रखा है। पशु, पक्षी, जलचर, बनचर सब ही मे नर और नारी होते हैं। यहाँ तक कि पेड़ फूल भी बिना नर मादा के जिन्दा नहीं रह सकते।

प्रकृति ने मनुष्य के भोग की क्रिया सर्वोच्च ही निर्धारित की है। पुरुष के भोग के लिये स्त्री को बनाया। दोनों एक ही से हैं। केवल थोड़ा सा उलट फेर है और वह भी भोग के कारण। कहने का तात्पर्य यह है कि पुरुष—स्त्री से भोग करने का प्राकृतिक ढङ्ग से अधिकारी है।

मगर इसका यह मतलब नहीं कि एक पुरुष जमाने भर की स्त्रियों के साथ ही भोग करता रहे, भोग की भी अपनी मर्य्यादा है।

मन की चञ्चलता

पुरुष शक्तिवान होता है। उसे भोग की कामना होती है। शरीर में बल होता है अतः वह भोग की इच्छा करता है। इस इच्छा की शान्ति स्त्री से ही पूर्ण हो सकती है। वैसे तो संसार में वह किसी भी स्त्री के साथ भोग कर सकता है। मगर उसमें भी कुछ रोक है।

भोग के बाद सन्तति होती है। सन्तान का निर्माण माता पिता के रज और वीर्य से होता है। जिस प्रकार वीर्य पुरुष के शरीर के रक्त का मक्खन हैं उसी प्रकार रज भी स्त्री के शरीर की शक्ति की पूर्ण क्रीम होती है। मां की रज से मांस और पिता के वीर्य से हड्डी बनती है।

अतः अगर एक मनुष्य कई स्त्रियों से भोग करता है तो इसका साफ मतलब है कि उसके वीर्य के साथ कई रज मिलती हैं। हर स्त्री की रज एकसी तो नहीं होती। अतः उनकी असमानता के कारण बहु स्त्री भोगी पुरुष को कई भयङ्कर बीमारियों का शिकार होना पड़ता है।

समाज ने इस प्रवृति पर प्रतिबन्ध लगाने के लिये विवाह की प्रथा का निर्माण किया है। विवाह के बाद मन की चञ्चलता मिट जाती है। और एक स्त्री ही सहवास के लिये नियमित होती है।

सहवास

स्त्री के साथ सहवास करने से प्रकृति दोनों को लाभ पहुंचाता है। सहवास से स्त्री पुरुष के रक्त मिलते हैं और आपस में एक दूसरे की कमी को पूरा कर देते हैं। निरंतर काम करने, खाने, व्यायाम आदि से रक्त बनता तो रहता है मगर उसका निकास नहीं होता। अधिक रक्त में तेजी आ जाना भी हानिकारक होता है। स्त्री के साथ सहवास करने से शरीर की गर्मी वीर्य के साथ निकल जाती है।

१—सहवास हमेशा रात के अन्तिम पहर में करना चाहिये। प्रथम पहर में करना स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक है। अन्तिम प्रहर तक भोजन पच जाता है और दिन भर की काम करी हुई इन्द्रियों को भी पूर्ण विश्राम मिल जाता है। दूसरी बात यह है कि सहवास के कारण जो भी हानि होती है वह थोड़ी देर बाद ही प्रातः की समीर के साथ पूरी हो जाती है।

२—दिन में कभी सहवास नहीं करना चाहिये। सहवास करते समय रक्त की तेजी स्वयं ही बढ़ जाती है और अगर दिन में सहवास किया गया तो सूर्य की तेजी भी शरीर क

हानि पहुंचाती है। यों गर्मी के कारण शरीर की दशा बिगड़ जाती है।

३—सहवास निरधारित होना चाहिये। पहले ही बताया जा चुका है कि एक मास का पुष्टिकारक भोजन केवल दो तोले वीर्य बना सकता है। अगर नियमित रूप से सहवास किया जाय तो यह दो तोले वीर्य केवल चार या पांच सहवास में समाप्त हो जाता है। अतः वीर्य का भी ख्याल करते हुये अधिक सहवास नहीं करना चाहिये। एक सप्ताह में एकबार ही काफी है।

एकबार महारथी सिकन्दर ने अपने गुरु अरस्तू से पूछा— जीवन में कितनी बार सहवास करना चाहिये।

अरस्तू ने कहा—सहवास तो जीवन में एक ही बार करना चाहिये और यह प्रकृति चाहती भी है। मगर हृदय नहीं मानता। अतः वर्ष में एकबार बहुत है। इस पर भी शान्ति नहीं हो तो मास से केवल एकबार और अगर अब भी हृदय नहीं मानता तो अपने कफन का इन्तजाम करके सहवास में लिप्त रहे क्योंकि सहवास से शक्ति का नाश होता है और जब शरीर में दम नहीं रहता तो फिर मृत्यु भी चाहे कभी आ सकती है।

४—हमेशा अपने से छोटी आयु वाली स्त्री से ही सहवास करें। इसका मतलब यह नहीं कि साठ वर्ष का आदमी चौदह वर्ष की स्त्री से सहवास करे। मतलब यह है कि कम से कम एक वर्ष की छोटाई बड़ाई होनी चाहिये। पचास वर्ष से ऊपर सहवास सर्वदा ही वर्जित है।

५—सहवास के बाद कुछ खा लेना आवश्यक है। सहवास से तमाम इन्द्रियां थक जाती हैं। कुछ खा लेने से उन्हें भोजन मिलता है और वह पुनः स्वस्थ होकर अपने कार्य में लग सकती हैं।

इन तमाम बातों का विचार करके भोग करने वाला पुरुष

कभी शक्तिहीन नहीं हो सकता। उसका स्वास्थ्य ज्यों का त्यों ही बना रहेगा, और वह शक्तिशाली भी हो सकेगा।

ग्यारहवां सर्ग

रोगों की उत्पत्ति और उपचार

पहले ही बताया जा चुका है कि प्रकृति की बड़ी अनोखी व्यवस्था है। वह शरीर का भार लेती है और हर कीमत पर उस भार को अच्छी तरह निबाहती है। जब २ भी उसकी सञ्चालन गति में मनुष्य कोई रुकावट डालता है तो वह शीघ्रता से आगे बढ़कर अपना यथेष्ट स्थान ग्रहण करना नहीं भूलती और वह मनुष्य की भलाई के लिये ही शरीर की उन व्यवस्थाओं को जिन्हे वह अपनी नासमझी से बिगाड़ लेता है तुरन्त ठीक करती है।

शरीर की बिगड़ी हुई व्यवस्था को ही रोग कहते हैं। रोग भी कई तरह शरीर में उत्पन्न होते हैं। उनकी निम्न श्रेणियां है—

वायु रोग

वायु शरीर मे सबसे अधिक उपयोगी तत्व है। जब भी इसकी कमी या ज्यादती हो जाती है तो शरीर की सञ्चालन शक्ति बिगड़ती जाती है। सञ्चालन शक्ति के बिड़गते ही रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

हृदय गति—हृदय ही जीवन का सञ्चालन केन्द्र है। यह एक पम्प की तरह है और यही रक्त को शरीर के हर भाग में फेंकता है। जब तक रक्त शरीर में हर स्थान पर यथेष्ठ शक्ति में नहीं पहुंचता तब तक शरीर का चलना दूभर हो जाता है।

वायु को निर्धारित परिमाण ही में पहुँचना चाहिये। अधिक सोने वाले, रात को जगकर काम करने वाले, शुद्ध वायु से विरक्त रहने वाले, नाक की वजाय मुंहसे सांस लेने वाले लोगोंकी हृदय गति ठीक नहीं रहती। उनको कभी कम वायु मिलती है और कभी अधिक। अतः इस कारण से उन्हें हृदय रोग का शिकार हो जाना पड़ता है।

हृदय रोग की कोई दवा नहीं। प्रकृति ही उसकी दवा हैं। उन्हें अपने जीवनी की रूप रेखा बदल देनी चाहिये। अपने जीवन को प्राकृतिक ढंग पर ही बिताना चाहिये। प्रातः उठना, शुद्ध वायु का सेवन करना ही उनके लिये सबसे अधिक उपयोगी होता है।

वात रोगः—वायु के बिना शरीर एक क्षण भी नहीं रह सकता। अगर शरीर को शुद्ध हवा पर्याप्त परिमाण में नहीं मिलती तो वह दूषित वायु से ही अपना काम चलाता है। दूषित वायु से शरीर की तमाम इन्द्रियों पर गहरा प्रभाव पड़ता है।

कहा जा चुका है कि रक्त को साफ करने के लिये भी वायु की आवश्यकता होती है। जब शरीर को दूषित वायु से ही रक्त के साथ हेल-मेल रखना पड़ता है तो वायु के दोष भी रक्त में मिल जाते हैं। दूषित होने के कारण रक्त के कीड़े जीवित नहीं रह पाते। उनके मर जाने से शरीर के वह अङ्ग जहाँ के कीड़े मर जाते हैं वात रोग का शिकार हो जाता है।

उन अङ्गों में दर्द होना प्रारम्भ हो जाता है। तनिक सी वायु लग जाने से वह दुखने लगते हैं और उनमी हिलने, डुलने चलने फिरने तक मी शक्ति जाती रहती है।

इस रोग का मी इलाज शुद्ध वायु ही है। रोगी को शुद्ध वायु का सेवन करना चाहिये ताकि शरीर के अंगों में फिर से शुद्ध रक्त

प्रवाहित होकर दौड़ने लगे। शुद्ध रक्त के दौड़ने से हर अङ्ग खुल जायेगा और जो अङ्ग दूषित वायु के कारण अचल होगये थे, पुनः ठीक हो जायेंगे।

स्मृति—दिल और दिमाग का चोली दामन का साथ है। जब भी दिल पर कोई मुसीबत आती है, दिमाग़ पर भी उसका असर होता है। जब बिना शुद्ध वायु के हृदय की गति पर असर होता है, रक्त दूषित हो जाता है तो दिमाग़ पर भी उसका प्रभाव होता है।

स्मृति दिमाग की देन है। दूषित रक्त जब मस्तिष्क की नसों में होकर गुजरता है तो उसकी शक्ति का नाश हो जाता है। उसमें एक तरह की रोक लग जाने से सोचने समझने की ताकत जाती रहती है और ऐसी अवस्था में उसे क्या करना है और क्या नहीं? इसका निर्णय तक वह नहीं कर सकता।

दिमाग की ताजगी के लिये शुद्ध वायु से बढ़ कर कोई चीज नहीं। अतः अपनी स्मृति को ठीक रखने के लिये मनुष्य को चाहिये कि वह शुद्ध वायु का सेवन करता रहे।

क्षय रोग—क्षय रोग महा रोग है। क्षय रोग की कई श्रेणियाँ होती हैं। अन्तिम श्रेणी में हड्डियाँ घुलने लगती हैं। कहा जा चुका है कि रक्त से ही हड्डी, चर्बी, मांस आदि बनते हैं। जब रक्त में दोष हो जाता है और दिल का काम ठीक नहीं होता तो धीरे २ उसका असर हड्डियों पर भी आता है। धीरे २ हड्डियाँ बर्फ की तरह घुलने लगती हैं।

इस महा रोग का इलाज वायु की शुद्धता ही है। आजकल के डाक्टर भी इस बात को मानने लगे हैं। और इसी लिये क्षय के रोगी के लिये स्वच्छ वायु सेवन का आदेश दिया जाता है और उसे पहाड़ जाने की सलाह भी दी जाती है, ताकि उसकी वायु की शक्ति पुनः प्राप्त की जासके।

स्वच्छ वायु ही मनुष्य का जीवन है। उसे प्राप्त कर लेना सरल काम है। केवल थोड़े से ध्यान रखने की जरूरत है। अगर तनिक भी ध्यान रक्खा जाय तो मनुष्य कभी वायु से पैदा होने वाले रोगों का शिकार नहीं हो सकता है।

वायु से पैदा होने वाले रोग महा-रोग होते हैं। यह तत्काल ही जीवन छीन सकते हैं अतः इनसे सावधान ही रहना श्रेयस्कर है।

२-रक्त रोग.

रक्त में दो तरह के कीड़े होते हैं।

१—एक कीड़े तो बहुत छोटे होते हैं। इनका रंग बिलकुल लाल होता है। इनकी पूछें लम्बी होती हैं। अगर एक बूँद को खुर्दबीन लगा कर देखा जाये तो उसमें बहुत से कीड़े मालूम होंगे। इससे ही उनकी छोटाई का अन्दाजा लगाया जा सकता है।

२—इन लाल कीड़ों की सूरत शक्ल के सफेद कीड़े भी होते हैं। यह भी खून में लाल कीड़ों की तरह ही रहते हैं और उसके साथ ही साथ कार्य भी करते हैं। इन कीड़ों का कार्य है रक्त को शुद्ध रखना। जब तक लाल कीड़े अधिक होते है, खून बिल्कुल शुद्ध रहता है। जब दूषित रक्त ही शरीर में दौड़ने लगता है तो सफेद कीड़ों की संख्या बढ़ जाती है। ऐसी दशा में रक्त विकार के अनेकों रोग उठ खड़े होते हैं।

रक्त न बनना—सफेद कीड़े अधिक होते ही लाल कीड़ों को मार डालते हैं। लाल कीड़े रक्त बनने में सहाता देते हैं। जब वही रक्त में नहीं रहते तो रक्त कैसे बने ? बिना नवीन रक्त बनाये शरीर को जीवित नहीं रखा जा सकता।

फल यह होता है कि जब रक्त बनना बन्द हो जाता है तो अङ्ग सुन्न होने लगते है। उनका हिलना, झुलना सब बन्द सा होने

लगता है। बैठे २ अङ्ग बेकार हो जाते हैं और उन्हें पुनः हिलाने झुलाने के लिये बहुत कोशिशें करनी पड़ती हैं।

इन्द्रियाँ अपना २ काम छोड़ने लगती हैं। कान सुनने के लिये होते हैं, मगर वह अपना काम नहीं कर पाते। कोई कुछ क्यों न कहता रहे मगर कुछ सुनाई नहीं देता।

सिर के बाल गिरने लगते हैं। इनकी खुराक रक्त ही से मिलती है। जब रक्त ही शक्तिहीन हो जाता है तो यह कैसे अपना अस्तित्व रख सकते हैं। धीरे २ वह स्थान त्यागने लगते हैं।

इन तमाम रक्त-विकारों से उत्पन्न हुए रोगों का एकमात्र इलाज है नवीन रक्त का बनना। नवीन रक्त के बनते ही यह सारी शिकायतें स्वयम् ही दूर हो जाती हैं। अतः नवीन रक्त बनाने के लिये आहार विहार को प्राकृति के अनुकूल बनाने ही से कारगर हो सकता है। हमें प्राकृतिक नियमों का पालन करना चाहिये।

अजीर्ण—खून की गर्मी से ही खाना पचता है। जब रक्त शरीर में ऊपर नीचे दौड़ता है तो उसमें गर्मी पैदा होती है। यह शरीर की पैदा हुई गर्मी खाना पचाती है।

जब शरीर में रक्त कम रह जाता है तो उसका आवागमन भी तेजी से नहीं हो सकता। जब आवागमन तेजी से नहीं हो पाता तो शरीर में गर्मी कहाँ से पैदा हो और जब गर्मी नही पैदा होती, तो खाना ठीक तरह से नहीं पचता और इसी तरह अजीर्ण होने लगता है।

अजीर्ण का उपचार शरीर में गर्मी लाने से हो सकता है। शरीर में गर्मी पैदा होती है, जब कुछ महनत व्यायाम में शरीर पर पड़ती है। अतः हमें स्वास्थ्य के नियमों की जाँच और महनत का पालन करना चाहिये।

अन्य रोग—रक्त विकारों से और भी बहुत सी बीमारियाँ खड़ी हो जाती हैं। और शरीर को जीर्ण करने लगती हैं।

१—रक्त विकार ही से शरीर में खुजली, दाने आदि होने लगते हैं। खाज, कोढ़ आदि भी रक्त विकार से ही पैदा होते हैं।

२—पुरुषों और स्त्रियों के गुप्त इन्द्रियों के रोग भी रक्त दूषित होने के कारण ही पैदा होते हैं।

इन तथा अन्य रक्त से पैदा हुए रोगों का उपचार रक्त को साफ करके ही किया जा सकता है। अतः रक्त को शुद्ध करने के लिये प्राकृतिक नियमों का पालन करना बहुत जरूरी है।

मल-रोग

पहले ही लिखा जा चुका है कि शरीर में गन्दगी भी रहती है। शरीर को अच्छा रखने के लिये कुछ न कुछ खाना ही पड़ता है। खाने को पचाया जाता है और पचे हुए खाने से रक्त बना लिया जाता है। रक्त बन कर जो कुछ भी शेष बचता है उसे मल कहते हैं।

मल की सफाई अगर प्राकृतिक नियमों के अनुकूल नहीं की जाती, तो यह मल शरीर ही में सड़ता है। सड़ने से विष पैदा होता है। यह विष शरीर की हालत को बिगाड़ना आरम्भ कर देता है और इस तरह नित्य नये रोग उठते हैं।

कब्ज़—सब रोगों की जड़ कब्ज है। जब मल ठीक तरह से साफ नहीं होता तो आमाशय को कड़ा बना देता है। सूख कर वह वहीं रह जाता है और इस प्रकार उसकी सफाई दुर्लभ हो जाती है। जब तक शौच प्राकृतिक ढङ्ग से नहीं उतरता, तब तक शरीर की अवस्था कभी ठीक नहीं हो सकती। अतः कभी ऐसी नौबत नहीं आने देनी चाहिये।

कब्ज का इलाज सरल है। प्रातः ही शौच जाना चाहिये। अगर पेट कुछ भारी लगे और मल ठीक तरह साफ नहीं होता तो ताजा जल पीकर शौच जाना चाहिये।

कब्ज़ को दूर करने के लिये कोई अटपटी दवा नहीं खानी

चाहिये। जब कब्ज की सफाई करनी ही हो तो आधा सेर दूध में एक टिकिया मक्खन या एक छटाँक घी गर्म २ पी लेना चाहिये। सारा कब्ज स्वतः ही ठीक हो जायगा।

वीर्य दोष—मल शरीरमें गर्मी पैदा करताहै। जब आवश्यक्ता से अधिक गर्मी शरीर में पैदा होती है तो रक्त भी अच्छी तरह मथ जाता है और इसके फलस्वरूप वीर्य पैदा हो जाता है। जब वीर्य शरीर से निकल जाता है तो वह बाहर आने का मार्ग ढूंढ़ता है।

शौच के समय गुदा से, मूत्र के समय लिङ्ग से, वीर्य निकलना प्रारंभ कर देता है। यह महा भयङ्कर रोग है। वीर्य रोगों में सबसे असाध्य तो प्रमेह और स्वप्नदोष होते हैं। यह दोनों रोग भी इसी कारण पैदा होते है।

इन तमाम वीर्य रोगों की एक ही दवा है। शरीर को पर्याप्त ठन्डक पहुंचानी चाहिये। मूली, गाजर अनार आदि का सेवन लाभदायक है। सोते समय अपने विचारों को साफ रखना चाहिये तथा शरीर की गर्मी को शांत करने के लिए नहाना धोना भी समय पर ही चाहिये।

कब्ज से पैदा हुए सारे रोगों का केवल एक ही इलाज है कि पहले कब्ज को दूर किया जाय।

बुखार, खांसी, तिजारी, सिर दर्द, आँख के रोग आदि इसके कारण शरीर में फैलते हैं। अतः मनुष्य को चाहिए कि वह कब्ज कभी न होने दे। समय २ पर उपचार करता रहे।

रोगों की पूर्ण व्याख्या, निदान तथा उनका इलाज हम अगले परिच्छेदों में करेंगे क्योंकि आजकल हर रोग के इलाज के लिए बहुत सी दवायें हैं। और उन दवाओं के सहारे ही सारे रोगों का इलाज होता है। मगर हम आपको अपने परिच्छेदों में योगासनों द्वारा इन रोगों का इलाज करने की विधि बतायेंगे।

योगासनों में जो सामर्थ है वह आपने कभी सोची भी नहीं होगी और उनसे जो लाभ होते हैं उनको आप काल्पनिक कहेंगे। मगर हमारे पास प्रमाण हैं और हम आपसे भी अनुरोध करेंगे कि स्वयम् प्रमाणित करने के लिये आप अपने उन रोगों का स्वयम् ही इलाज करें जिनमें आप फँसे हैं तो हम धन्य होंगे।

हमारे योगियों ने अपना अमूल्य समय व्यतीत करके जिन आसनों का आविष्कार किया है आप भी तो उनकी ही सन्तानें हैं और उनके गुणों के उतने ही उपासक हैं जितने हम तब आप को चाहिये कि हमारे योगासन प्रकरण में दिये हुये आसनों से आप अपने रोगों को स्वयम् ही दूर करें यदि आवश्यकता हो तो सफल योग साधकों से परामर्श ले सकते हैं।

योगासन प्रकरण

बारहवाँ सर्ग

स्वास्थ्य और योग साधन

जिस तरह शरीर को सजीव रखने के लिये रक्त की आवश्यकता है उसी प्रकार शरीर को स्वस्थ्य रखने के लिये योग साधन की भी बहुत जरूरत है। रक्त की शुद्धता के लिये निम्नांकित बातें बहुत ही आवश्यक हैं:—

१—स्वास द्वारा शुद्ध हवा का शरीर में प्रवेश

२—नियमानुकूल भोजन

३—पाचन शक्ति की उपयुक्तता

४—शारीरिक परिश्रम

५—तथा योगासन

प्रथम चार बातें तो हम आसानी से प्राप्त कर सकते है। प्रतिदिन भ्रमण द्वारा हम शुद्ध वायु का सेवन कर सकते हैं। भोजन भी आवश्यकतानुसार नियमानुकूल जुटा सकते हैं। घूमने, फिरने तथा थोड़ी सी महनत से पाचन शक्ति स्थिर रह सकती है। अपने शरीर के लिये अपना निजी काम ही नियमपूर्वक करते रहने से पर्याप्त शारीरिक परिश्रम हो जाता है। अब योगासन की बात शेष रह जाती है। योग क्यों किया जाय ?

मनुष्य सदा से ही स्वार्थी रहा है। जब तक उसका अपना कोई स्वार्थ नहीं होता वह किसी काम को करना नहीं चाहता और न करने की कोशिश ही करता है। इसलिये जब स्वास्थ्य प्राप्ति की पांच बातों का सवाल उठता है तब चार बात जो सहज मनुष्य पूरी कर सकता है उन्हीं पर निर्भर रहता है। और पांचवी बात क्योंकि कुछ टेढ़ी है वह उसके विषय में सौदा करना चाहता है कि अगर योग साधन करे तो उसके ऐवज में उसे क्या लाभ होगा जिसे वह किसी और तरीके से नहीं पा सकता। अतः योग साधन का विश्लेषण आवश्यक है। क्योंकि विश्लेषण द्वारा ही हम योग साधना के समस्त पहलुओं के सम्बन्ध मे समस्त जानकारी प्राप्त कर सकते हैं।

योगासनों को हम दो भागों में विभाजित करके उनकी उपयोगिता के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं:—

१—प्राणायाम

२—आसन

प्राणायाम

प्राणों की रक्षा के लिये शुद्ध रक्त की आवश्यकता है और रक्त की शुद्धि के लिये वायु की। अतः जिस वायु से रक्त अच्छी शुद्ध होता है उसे प्राणवायु कहते हैं। प्राणवायु वह वायु है जो

दीर्घश्वसन से ही शरीर में प्रवेश करती है। प्राणरक्षक को वीरभद्र भी कहा गया है। अतः जहाँ वीरभद्र पहुंचता है वहाँ के सारे रोगों का नाश हो जाता है और शरीर सुदृढ़ हो जाता है। वीरभद्र में प्राणों के रक्षण की क्षमता लाने वाली एक ही वस्तु है वह है शुद्ध वायु और वह शुद्ध प्राणवायु प्राणायाम से ही प्राप्त हो सकती है। प्राणायाम अनेक प्रकार के होते हैं मगर जन साधारण उनका उपयोग सफलतापूर्वक नहीं कर सकते। अतः शुद्ध वायु श्वास द्वारा अपने फेफड़ों को पूर्ण करने की क्रिया ही सर्वोत्तम प्राणायाम विधि है।

फेफड़ों के तीन विभाग होते हैं। इनका विभाजन उनकी उपयोगिता तथा पसलियों के अनुकूल भी कहा जाता है।

[१] विभाग—कन्धे तथा गले की हड्डियों से संयुक्त जो अङ्ग है वह इस श्रेणी में आता है।

[२] विभाग—आमाशय से ऊपर की ओर, और कन्धों के मध्य वाली पसलियों का अंश इस श्रेणी में आता है।

[३] विभाग—अर्ध गोलाकार पसलियां जो आमाशय के इर्द गिर्द रहती हैं वह इस विभाग मे आती है।

पहले ही स्वास्थ्य प्रकरण में बताया जा चुका है कि उदर में सूर्य चक्र की स्थिति होती है अतः प्राणायाम द्वारा संचित वायु का प्रभाव सूर्य चक्र पर अच्छी तरह पड़ता है और इस कारण उस चक्र में गति आती है और चेतना का सञ्चार होता है। श्वास पहले सबसे नीचे के विभाग में भरी जाती है तब दूसरे विभाग में और तब पहले विभाग में। मगर जब वह निकलती है तो पहले प्रथम विभाग से निकलतीं है तब दूसरे विभाग से तब तीसरे अर्थात् अन्तिम विभाग से जहाँ वह पहले भरी गई थी।

प्राणायाम के विषय में सबसे आवश्यक बात यह है कि नाक से ही श्वासोच्छ्वास करना चाहिये। मुख से श्वासोच्छ्वास करने से आयु का नाश होता है और शरीर में रोग प्रवेश करने लगते हैं।

वायु ही वह तत्व है जो शरीर को सबसे अधिक हिलाती झुलाती है। शरीर को हिलाने के साथ ही साथ वह मन को भी हिलाने में सफल होती है। अतः बिना वायु को रोके मन और इन्द्रियों का सम्पर्क नहीं हो सकता। वायु को शरीर में प्रवेश करने से रोक देने की क्रिया का नाम ही प्राणायाम है।

शरीर को सीधा तानकर बैठना चाहिये। जहाँ प्राणायाम किया जाय वह स्थान पवित्र होना चाहिये। पवित्र वायु का वहाँ आना-जाना अवश्य ही होना चाहिये।

१-शरीर को कड़ा रखकर बैठना चाहिये।

२-पैरों को पालथी मारकर बैठना चाहिये।

३-दोनों हाथों को अंगूठों के पास रखना चाहिये।

४-मस्तिष्क से तमाम चिन्तायें निकाल देनी चाहिये और ब्रह्म का ध्यान लगाना चाहिये।

५-पहले नाक से लम्बी २ सांसें लेकर अन्दर वायु को लाना चाहिये, फिर धीरे-धीरे उसे निकालना चाहिये।

६-यकायक सांस नहीं लेनी चाहिये।

७-सांस को रोककर शरीर की सभी इन्द्रियों को कड़ा करने की चेष्टा करनी चाहिये।

८-पहले तो थोड़ी देर तक सांस न ले फिर धीरे-धीरे समय को बढ़ाते जावें।

९-जितनी अधिकर देर तक आप बिना सांस लिये रह सकते हैं उतनी ही आपकी सफलता है।

१०-इसका असर यह होगा कि रक्त वायु के वेग से नहीं मस्तिष्क की शक्ति से काम करने लगेगा और इन्द्रियाँ आपके पूर्ण अधिकार में आ जायेंगी।

प्राणायाम की क्रिया सबसे सरल है और सबसे जटिल भी। इसकी साधना ही सब कुछ है। अगर एकबार भी प्राणायाम

साध लेने की आदत हो जाती है तो वह जन्म जीते नहीं छूट सकती।

मन और शरीर का मेल करने के लिये प्राणायाम पहली सीढ़ी है।

प्राणायाम के लाभः–

१–शरीर को स्वस्थ्य करता है।

२–रक्त शुद्ध होता है।

३–फेफड़ों में शक्ति आती है।

४–शरीर निरोग होता है।

५–आयु बढ़ती है।

६–चेतना प्राप्त होती है और इस कारण कार्य करने की शक्ति द्विगुण होती है।

७–मन विकार–रहित होता है।

प्राणायाम के साथ ही आसनों का करना भी आवश्यक है क्योंकि इनके करने से शरीर का रक्त अवश्य शुद्ध होताहै। मगर उस शुद्ध रक्त का सदुपयोग आसनों द्वारा ही शरीर के अंग कर सकते हैं। प्राणायाम से शक्ति संचित होती है और विविध अंगों में जब वह शक्ति ले जाने का कार्य किया जाता है तो उसे आसन कहते है।

आसन

आसन विविध प्रकार के होते हैं। मन के मुताबिक इन्द्रियाँ काम करने में समर्थ हों वही आसन कहलाते है। आसनों से शरीर के रोग दूर होते हैं, मन में शक्ति आती है, और इन्द्रियां अपने कार्य में दक्ष होती हैं।

आसन भी एक तरह के व्यायाम ही होते हैं। इनसे शरीर की तमाम इन्द्रियों पर असर होता है और उस असर के कारण शरीर को पुष्टि भी मिलती है।

आसन प्रारम्भ करने से पहले कुछ बातों का ज्ञान लेना आवश्यक है। इनके बिना जाने आसनों से लाभ की अपेक्षा हानि होने की सम्भावना होती है। वह निम्नाङ्कित है:—

१—मन साफ होना चाहिये, ऐसा न हो कि मन में तो दफ्तर या काम की चिन्ता हो और शीर्षासन कर रहे है। ज़रा—सा ध्यान चूकने पर गर्दन तक टूट सकती है। अतः मन की सफाई नितांत आवश्यक है। ध्यान करके ही आसनों को शुरू करना चाहिये।

२—प्राणायाम की अच्छी तरह आदत हो। सांस रोकने और निकालने में केवल नाक ही का स्तेमाल होता हो। अक्सर ऐसा होता है कि शरीर को काफी तोड़ना मोड़ना पड़ता है। अगर शरीर में वायु सांस द्वारा पहुँचती है तो शरीर को तोड़ना मोड़ना मुशकिल हो जाता है। अतः सांस को निकाले रखने की आवश्यकता होती है।

३—लगन होनी चाहिये। ऐसा नहीं होना चाहिये कि केवल भार समझ कर ही आसनों को करना है। अगर भार समझ कर आसन किये गये तो उनका कोई लाभ नहीं हो सकता और कभी २ तो ऐसा होता है कि मन की लगन बिना शरीर की सारी फुर्ती चली जाती है। बिना फुर्ती के आसन नहीं होते हैं।

४—स्थान स्वच्छ होना चाहिये। वायु का वातावरण साफ होना चाहिये। आसन करते समय लम्बी २ सासें लेनी पड़ती है, अतः शुध्द हवा की विशेष जरूरत होती है। अतः आसन किसी बाग, नदी के किनारे या अन्य किसी स्थान पर करने चाहिये।

५—नियम से रहना आसनों के लिये अत्यन्त आवश्यक है। ऐसा नही होना चाहिए कि एक दिन तो प्रातः ४ बजे आसन किये और दूसरे दिन दोपहर के बारह बजे।

६-खाली पेट आसन करने चाहिए। भोजन का विशेष ध्यान रखना चाहिए जो कुछ भी खाना खाया जाय सब पुष्टि कारक होना चाहिये।

इन तमाम बातों का विचार रख कर आसन प्रारम्भ करने से अवश्य ही सफलता मिलेगी और बहुतसे रोगों का नाश हो जायेगा।

आसनों के लाभ—

१-हृष्ट-पुष्टता
२-लचीला व चिकनापन
३-मल-मूत्र की प्राकृतिक त्यागावस्था
४-पाचन शक्ति की सुव्यवस्था
५-भोजन में वृध्दि
६-वीर्य रक्षा
७-रोगादि से रक्षा
८-मस्तिष्क का विकास व शक्ति
९-नेत्रों की ज्योति
१०-आयु की वृध्दि

अब हम आपको आसनों का पूर्ण तत्व बताना चाहते हैं, और आपकी इस भ्रान्ति को मिटाना चाहते हैं कि आसनों द्वारा स्वास्थ्य लाभ केवल पुरुषों के लिये ही आवश्यक है। लोगों का यह विचार है कि स्त्रियों को आसन नहीं करने चाहिये। मगर नहीं? आसन सम्पूर्ण मनुष्य देहधारियों के लिये ही हैं इसकी पुष्टि आपको आसनों का तत्व जान लेने से ही हो जायेगी। आसन क्या है? कैसे इनका आविष्कार हुआ? इनका प्रचार क्यों हुआ? यह मनुष्य के लिए क्यों आवश्यक है? इन सब का उत्तर आप इनका तत्व जान लेते ही समझ जायेंगे। पुरुष और स्त्री का भेद स्वास्थ्य साधन में नहीं हो सकता। क्योंकि मनुष्य देहधारी दोनों ही एक वर्ग के हैं। मगर कुछ आसन पुरुषों के लिये अधिक उपयुक्त

हैं तो कुछ स्त्रियों के लिये। उनका सार आप तत्वों से ही जान सकते हैं।

आसनों का तत्व

जैसा कि पहले ही बताया जा चुका है आसन शारीरिक अङ्गों को हृष्ट-पुष्टता तथा उनमें नवीन चेतना जागृत करने की इच्छा से बनाये गये हैं। अब प्रश्न उठता है कि उनकी उत्पत्ति क्या है? और वह कैसे प्रकाश में आयी? इन तमाम शङ्काओं के समाधान में यह कहना उपयुक्त होगा कि परमपिता परमेश्वर की सृष्टि में मनुष्य सर्वोपरि जीव है। अतः मानव शरीर संसार के समस्त जीवों से अधिक सम्पन्न है। तब यह निश्चय है कि जगत का कोई भी जीव किसी भी दशा मे मनुष्य से अधिक चैतन्य या जागरूक नहीं। अतः मनुष्य के शरीर में समस्त अन्य जीवों की भांति वह सबल गुण-ग्रहकता है जो उन सबमे अपने २ स्थान पर पृथकावस्था में हैं। उसमें श्वान की सी अल्प निद्रा, चीते की सी चतुरता, हाथी का सा पौरुष, सिंह की सी फुर्ती है। मगर क्योंकि इसके साथ ही मनुष्य मे मस्तिष्क है और उसका सदुपयोग किया जाता है तो यही उसकी बल, बुद्धि, तथा शौर्य का पोषक है।

आसनों का जन्म मनुष्य के समय २ पर किये हुये प्रयोगों का फल है। "आवश्यकता ही नवीन अन्वेषणों की जन्मदात्री है" यह बहुत पुरानी तथा उपयुक्त किंवदन्ती है। अतः जब २ भी मनुष्य के शरीर में जिन २ अङ्गों की स्वस्थता के लिये आवश्यकता होती गयी तब तब उनके लिये खोज की गयी और जिस विधि द्वारा उन अङ्गों की अशक्तता ठीक हुयी वही आसन के रूप में हमारे सामने आयी। इस तरह ही से मानव जाति ने अपने पिछले जीवन में प्रयोग करके शारीरिक स्वस्थता के लिये आसनों का संग्रह किया जो कुल संख्या में

८४ हैं। हजारों वर्ष में मनुष्य जाति ने इन ८४ आसनों को संग्रह किया है।

प्रकृति ने सृष्टि का निर्माण करते समय बड़े कौशल से काम लिया है। उसने प्रत्येक जीव को उसकी जीवन-पूर्ण आयु भुगतने के लिये वह प्रेरणा भी दी है जिसके द्वारा पञ्चतत्वों का बना हुआ शरीर पूर्ण-आयु काल तक निरोग रह सके।

उदाहरणार्थ—एक कुत्ते को लीजिये। कुत्ते के मस्तिष्क तो है नहीं। उसके अङ्गों को सञ्चलित अवस्था में रखने का कार्य प्रकृति का है। अतः वह भोजन करता है अपना भोजन पाने के लिये जगह २ मारा २ फिरता है इसमें उसके शरीर की शक्ति का ह्रास होता है। क्योंकि उसके मस्तिष्क नहीं अतः वह कुछ समझ सोच नहीं सकता। इस कारण वह बेचारा जीव अपने स्वास्थ्य साधन के लिये कुछ नहीं कर सकता। ऐसी दशा में प्रकृति ने ही उसका साथ दिया और उसको स्वस्थ्य रखने के लिये उसकी प्रकृति ही मे वह आसन डाल दिया।

जब भी कुत्ते को नवीन शक्ति की आवश्यकता होती है तो वह अपने अगले दोनों पैरों को फैलाकर उन पर मुंह रख लेता है और पिछले पैरों को आगे बढ़ाकर सारे शरीर को कड़ा कर लेता है। इस तरह उसके शरीर में खिंचाव होता है, नवीन चेतना प्राप्त होती है और उसके अङ्गों का पूर्ण विकास होता है।

इसी तरह प्रकृति के जितने भी जीवधारी हैं उन सब में प्रकृति ने उनके अङ्गों के विकास के लिए कोई न कोई शैली डाल ही दी है ताकि स्वतः ही उनके अङ्गों के विकास के साथ-साथ उनमें नवीन चेतना का प्रादुर्भाव होता रहे। इसी तरह आप देखेंगे कि मनुष्य ने उन जीवों की उन्हीं शैलियों को अपनाया है और उन्हीं के नाम पर आसनों का भी नामकरण कर दिया है। अगर यह कहा जाय कि संसार में जितनी भी जीव

जातियाँ हैं उतने ही आसन हैं तो यह अत्युक्ति नहीं होगी । मगर उनमें से मनुष्यने अपने हितके ही चयन करलिये हैं। जितनेभी आसन हम आपको अगले ररिच्छेदों में बतायेंगे उनके अलावा भी हजारों आसन हो सकते हैं मगर अभी उन पर प्रयोग नहीं हुए हैं। अतः उनको आसनों के साथ रखा नहीं जाता।

क्योंकि मानव देह संसार के समस्त प्राणियों में दुर्लभ है और इसमें प्रत्येक जीव जाति की विशेषता विद्यमान् है इसलिए जीव जातियों को आरोग्यात्मक शैली पर अग्रसर होने में उसे आरोग्यता ही प्राप्त होगी। इसी मूल सिद्धान्त के आधार पर आसनों का जन्म हुआ है। और इसी सिद्धान्त पर अटल रह कर मनुष्य नवीन आसनों का आविष्कार भी कर सकता है।

तेरहवां सर्ग

आसनों की आवश्यकता

स्वास्थ्य प्रकरण में हमने व्यायामों का उल्लेख किया है। अतः अब यह प्रश्न होता है कि इस प्रकरण में हम आसनों पर ही इतना क्यों जोर डाल रहे हैं। यह बतलाना आवश्यक है कि आसन शरीर के लिए कितने लाभकारी हैं। व्यायाम हम बता चुके हैं। इसलिए अब आसन और व्यायाम की तुलना करेंगे ताकि दोनों के हानि लाभों के विषय में आप स्वयम् ही पूर्ण फैसला कर लें।

आसन बनाम व्यायाम

आसन

१—मानव स्वयं ही प्राकृतिक ढङ्ग पर मृतावस्था तक कुछ न कुछ व्यायाम करता रहता है मगर उसके व्यायाम आठ—दस वर्ष की अवस्था तक ही उसके शरीर के पोषण का भार वहन कर सकते हैं। जैसे २ उसकी उम्र बढ़ती है और वह अपने जीवन-यापन के लिए परिश्रम करने के लिए बाध्य होता है तब उसे अपने शरीर की रक्षा के लिए तथा आयु-वृद्धि के लिए कृत्रिम व्यायाम (अर्थात् उन व्यायामों के अलावा जो वह प्राकृतिक ढङ्ग पर करता ही रहता है) की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि बल ही से पौरुष प्राप्त होता है और पौरुष ही मनुष्य का जीवन है। ऐसी दशा में वह मुग्दर, डम्बल, बैठक, दण्ड, जोर, दौड़ आदि व्यायामों की ओर झुकता है ताकि वह अपने बल और पौरुष की वृद्धि कर सके। मगर इन व्यायामों का असर शरीर

व्यायाम

१—व्यायाम जीवधारियों के लिए प्राकृतिक उपक्रम है। जब से इस सृष्टि का सृजन हुआ है तभी से हर जीवधारी की प्रकृति में यह बात बैठ गयी है कि वह कुछ न कुछ व्यायाम करता ही रहे। हाल के पैदा हुए छोटे बालक ही को लीजिये-वह दूध पीने के बाद अपने हाथ पैर ही चलाया करता है। उसकी इस क्रीड़ा से उसके पेट का दूध पचता है, स्नायुओं को आराम मिलता है और थककर आराम से सो सकता है। यह प्राकृतिक नियम है। ७ ८ वर्ष के बालकों को दौड़ने, घूमने, भागने में मजा आता है क्योंकि उनके लिए यह भी तो व्यायाम ही है। युवकों को खेलने, दौड़ने, घूमने तथा चलने फिरने का

आसन

और स्नायुओं पर जो होता है वह प्राकृतिक है। आसनों से व्यायाम का यह कार्य पूर्ण हो जाता है और इसके साथ ही शरीर या स्नायुओं पर अप्राकृतिक प्रभाव नहीं पड़ता।

२—आसनों से शरीर का जो व्यायाम होता है उससे शरीर पुष्ट होता है। अङ्गों में अलंकारात्मक पुष्टता चाहें न आये, मगर प्राकृतिक पुष्टता की कमी नहीं होती। शरीर में स्फूर्ति आती है और पौरुष की वृद्धि होती है। साथ ही साथ मस्तिष्क भी तेज होता है। लोभ, ईर्षा आदि बुराइयों से हृदय दूर रहता है। आसनों का जो भी व्यायाम होता है, उसकी प्रणाली दवाब पर न होकर खिंचाव पर होती है। यही दोनों का अन्तर है। रक्त का बहाव किसी विशेष अङ्ग में नहीं होता, वरन् वह सारे शरीर में एक से प्रवाह से बहता है। जिस तरह व्यायाम द्वारा अङ्गों की नसें खिंच जाती हैं उस तरह आसनों

व्यायाम

व्यायाम है और इसी तरह मृतावस्था तक मनुष्य प्राकृतिक व्यायाम चलने, फिरने आदि के लिये ही करता है।

२—व्यायाम के जितने भी तरीके हैं उनमें से अधिकतर शरीर पर दवाब ही डालते है। मुग्दर, दण्ड, बैठक आदि व्यायामों को लीजिये। इनको निरंतर करने से नसों में दवाब पडता है। रक्त का दौरा उन्हीं स्नायुओं पर अधिक बढ़ जाता है जहां पर व्यायामों से जोर पड़ता है। जोर पड़ने से वह स्नायु और रक्त का वेग बढ़ने से नसें चौड़ जाती हैं और वह अंग सुडौल तथा हृष्ट-पुष्ट दीखने लगते हैं। शरीर में स्फूर्ति आये चाहे न आये मगर अलङ्कारों की भांति पुष्ट स्नायुओं से शरीर अवश्य ही अलंकृत हो जाता है। पहलवानों को ही देखिये कि वह चाहे स्फूर्तिवान् न हो मगर उनका शरीर उनके पुष्ट

आसन

के करने से नसों पर कोई प्रभाव नहीं होता। आसनों की व्यायाम प्रणाली 'खिंचाव' पर निर्भर है।

३—आसनों के करने से शरीर के किसी भी अङ्ग विशेष पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसके साथ ही साथ हर अङ्ग की शिथिलता दूर करने के लिये विभिन्न आसन भी हैं। हर आसन हर अंग की स्फूर्ति या शक्तिके लिये काम नहीं आता। जैसे सिर तथा कन्धों के लिए श्रेष्ठ आसन शीर्षासन है। मगर शीर्षासन करने का यह अर्थ नहीं कि उसका असर केवल सिर पर ही होता है, वरन् यह कहना चाहिये कि उसका सामान्य असर शरीर के हर अंग पर होता है। क्योंकि आसनों का कार्य-सम्पर्क विशेष कर रक्त से है। व्यायाम कार्य सम्पर्क रक्त से तो है मगर वह नसों को विचलित करके मांस मज्जा पर भी बिना असर डाले नहीं रहता। रक्त पर आसनों का प्रमुख प्रभाव होनेके कारण मनुष्य की आयु वृद्धि होती है।

व्यायाम

अंगों से अलंकृत अवश्य रहता है। व्यायाम की प्रणाली 'दबाव' पर निर्भर है।

३—व्यायाम नसों को चौड़ा देता है और इसके फल स्वरूप रक्त का प्रवाह किसी विशेष अंग में विशिष्टता प्राप्त करके उस अंग के मज्जांत तन्तुओं को फटने पर मजबूत करता है इस प्रकार रक्तके प्रवाह में रुकावट होने लगती है। क्योंकि चौड़ी नसें तथा फटे हुए मज्जा तंतु रक्त को प्राकृतिक अवस्था में नहीं बढ़ने देते हैं और इस तरह बल प्राप्ति होने के बाद व्यायाम से मनुष्य की शक्ति तो अवश्य ही बढ़ती हैं, मगर वह आरोग्यता प्राप्त नहीं कर पाता। पहलवानों का हृदय इसी कारण कमजोर हो जाता है क्योंकि रक्त के सञ्चालन में व्याधायें उत्पन्न हो जाती हैं। और इसी कारण अधिक व्यायाम करने वालों की आयु छोटी ही होती है और उनकी मृत्यु शीघ्र हो जाती है।

आसन

४-आसनों का गहरा सम्पर्क प्राणायाम से है और प्राणायामिक क्रियाओं पर ही योग की साधना निर्भर है। अतः प्राणायाम के सम्मिश्रण से आसनों में योग का तत्व मिल गया है। इसी कारण विविध आसन करते समय चेतना चक्रों पर अपने मस्तिष्क की ज्ञानेन्द्री का केन्द्रीभूत करने का विधान है। आसन लगा कर जब प्रणायाम शुरू किया जाता है और प्राणायाम करते समय चेतना चक्रों पर जब ज्ञानेन्द्री केन्द्रीभूत करदी जाती है तब आसन निरे व्यायाम ही न रह कर योग भी हो जाते हैं। आसन व्यायामकी भांति निश्चित अवस्था तक शरीर को पहुंचाने के लिए ही नहीं किये जाते। उनके करते समय केवल एक ही ध्येय होता है कि शरीर में बल, शौर्य, चेतना का प्रकाश और यह तीनों चीजें अनन्त हैं। आसनों की क्रिया से क्योंकि समस्त शरीर के साथ ही ज्ञानेन्द्री और मस्तिष्क को भी

व्यायाम

४-चेतना शरीर में चक्रों द्वारा सञ्चालित होती है। व्यायामों का प्रभाव चक्रों पर नहीं पड़ता। क्योंकि व्यायाम भी एक तरह से शारीरिक परिश्रम समझ कर किया जाता है। जिस तरह एक गदहा बोझा लद जाने पर उस भार से मुक्ति पाने के लिए चल पड़ता है और उस समय तक चलता ही रहता है जब तक वह निश्चित स्थान पर नहीं पहुंच जाता। क्योंकि वह यह जानता है कि बिना निश्चित स्थान पर उस भार को पहुंचाये मुक्ति नहीं पा सकता। इसी कारण वह चलता रहता है कि उसे वहाँ पहुंच कर मुक्ति मिल सके। इसी तरह व्यायाम करते समय मनुष्य के सामने अपना निजी दृष्टिकोण होता है। वह अपने सामने एक आदर्श शरीर का माप रखता है और उसके सदृश्य अपने अंगों को पुष्ट बनाने की भावनाओं में बहता हुआ व्यायाम रत रहता है, जिसका फल यह होता है कि

आसन	व्यायाम
केन्द्रीभूत होना पड़ता है। अतः इसका असर हृदय और मस्तिष्क पर भी बिना पड़े नहीं रह पाता, जिसका मतलब यह होता है कि चेतना, बल, शौर्य के साथ ही मस्तिष्क में भी प्रखरता आती है और मस्तिष्क ही मानव के लिये सर्वश्रेष्ठ ईश्वरीय देन है। अतः जब कि व्यायाम से मस्तिष्क में दुर्बलता रहती है तब आसनों से उसमें प्रखरता आती जाती है। अतः मस्तिष्क के विचार से आसन श्रेष्ठ हैं।	वह व्यायाय किये जाता है और अपने मस्तिष्क से कुछ विचारने की चिंता नहीं करता। उसके सामने अधिक से अधिक दण्ड और अधिक से अधिक बैठक लगाने की ही भावना होती है। एक मशीन के सदृश्य ही वह अपना कार्य करता है, इस कारण उसका हृदय शून्य रहता है और यही कारण उसके मस्तिष्क का भी होता है।

कहने का सारांश यह है कि पहलवानी—व्यायाम से तो शरीर के विभिन्न अंगों में रक्त सञ्चित होना शुरू होता है, मगर आसनों से अंगों में रक्त का तेज प्रवाह होता है। यही इन दोनों का मूल भेद है।

आदमी का जिस्म भी, क्या ही निराला है मकां।
खून का गारा लगा है, ईंट जिसकी हड्डियां॥

अब यह सोचना है कि रक्त क्या है? और आसनों से उसका क्या सम्पर्क है? रक्त भोजन द्वारा बनाया हुआ रस है, जिसमें पाँचों तत्वों के पोषण के लिये पर्याप्त सामिग्री होती है। इसी कारण शरीर को जीविताावस्था में रखने का कार्य उसके ऊपर है। भोजन और शरीर का सम्बन्ध जान लेने से ही हमारा कार्य सरल हो सकता है।

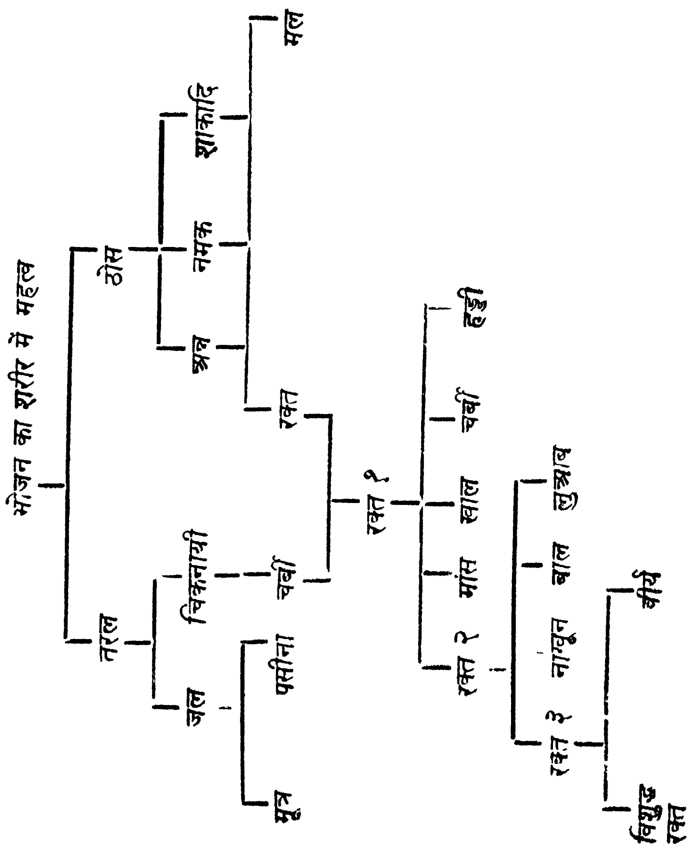
भोजन का शरीर में महत्व
ठोस
तरल
अन्न
नमक
शाकादि
मल
रक्त
चिकनाई
चर्बी
जल
पसीना
मूत्र
रक्त १
रक्त २
मांस
खाल
चर्बी
हड्डी
रक्त ३
नाखून
बाल
लुआब
वीर्य
विशुद्ध रक्त

इससे स्पष्ट है कि मूल रक्त जो हमें भोजन द्वारा प्राप्त होता है उसको चार अवस्थाओं से गुजरना पडता है तब कहीं वह हमारे शरीर को जीवित रखने योग्य होता है। हमारे भोजन का शरीर में बहुत महत्व है और अब हमने उसके विश्लेषण द्वारा यह भी देखा कि उसके द्वारा हमें जो भी विशुद्ध रक्त प्राप्त होता है उसका भी कितना महत्व है क्योंकि अगर रक्त की इतनी अधिक शुद्धि की आवश्यकता न होती तो प्रकृति इस अनूठे ढङ्ग से हमारे रक्त का विवेचन न करती। अब हमें यह जानना चाहिये कि प्रकृति को इतने शुद्ध रक्त की आवश्यकता क्यों है? पहले ही कहा जा चुका है कि शरीर पञ्चतत्वों का बना है और उन पांचों तत्वों का पोषण प्रति क्षण शरीर में होता है। इसका आशय यह है कि वह पांचोंतत्व हमारे शरीर में हैं? अगर हैं तो किस अवस्था में?

उनकी अवस्था बिलकुल साफ है। हमारे शरीर का निर्माण ही पांच शारीरिक वस्तुओं से हुआ है। वह हैं, रक्त, मांस, हाड़, चर्बी, खाल, अब उन तत्वों को जामने के लिये यह आवश्यक है कि कौन २ सा अंश किस तत्व का पोषक है? उनका विश्लेषण निम्न प्रकार से ज्ञात हो सकता है।

शरीर

रक्त	मांस	हाड़	चर्बी	खाल
(वायु)	(पृथ्वी)	(आकाश)	(जल)	(अग्नि)

इस प्रकार पांचों तत्वों का पोषण हमारे शरीर की विभूतियों द्वारा होता रहता है। इतना सब जान लेने पर भी हमारी उत्सुकता समाप्त नहीं होती अब यह जानना रह जाता है कि रक्त शुद्धि पर हमारे आसनों का क्या प्रभाव है और

क्यों हमें इन आसनों को करना चाहिये। इसका हल हमें शरीर में रक्त सञ्चालन की विधि द्वारा ही ज्ञात हो सकता है।

रक्त संचालन

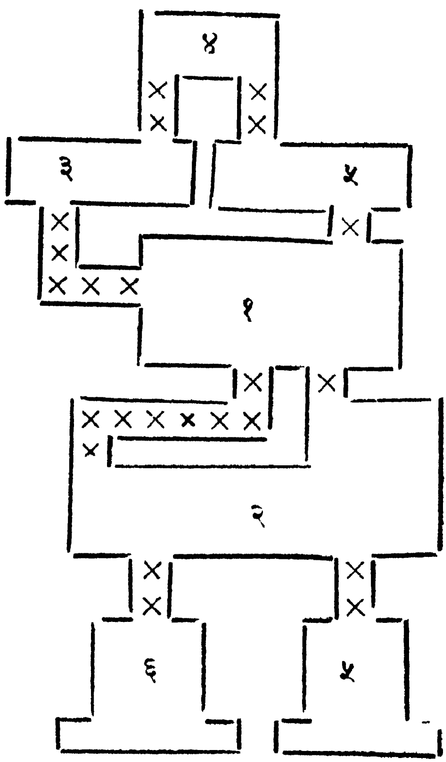

हम पहले ही बता चुके हैं कि भोजन से हमारे शरीर में रक्त बनता है मगर वह विशुद्ध नहीं होता जिसके द्वारा हमारी प्राण रक्षा हो सके। अतः भोजन द्वारा प्राप्त रक्त को फिर कई

बार शरीर में दौरा करना पड़ता है और इस तरह शरीर के विभिन्न अंशों का निर्माण होता है और प्राण जीवन रक्त की प्राप्ति होती है। प्राण जीवन या विशुद्ध रक्त का सञ्चालन सुचारु रूप से प्रवाहित रखने के लिये ही आसनों की आवश्यकता होती है। अब यह जानना आवश्यक है कि हमारे शरीर मे रक्त सञ्चालन की क्या व्यवस्था है वह व्यवस्था हम निम्नाङ्कित नकशे द्वारा जान सकते है।

यह मान चित्र देखने मे जितना जटिल और बेडौल सा प्रतीत होता है समझने में उतना ही सरल है। अब हम इसकी व्याख्या करते हैं। हर चीज साफ हो जायेगी। ध्यान से मानचित्र को देखिये और समझिये—

नम्बर १ वर्ग का काम पम्प करना है। वह वायु नम्बर दो को अपनी 6 6 वाली नाली द्वारा फेंकता है। और नम्बर २ वर्ग जहाँ रक्त भरा रहता है वायु के वेग से प्रभावित होकर अपने गर्भ में भरा हुआ रक्त नम्बर ३ वर्ग और वर्ग ६ व वर्ग ७ को × × नाली से फेंकता है। नम्बर ३ वर्ग नं. २ वर्ग से प्राप्त रक्त को नम्बर ४ वर्ग को देता है और नम्बर ४ वर्ग उसे नम्बर ५ वर्ग को देता है और नम्बर ५ वर्ग उसे नम्बर १ वर्ग को देता है और नम्बर १ वर्ग फिर नम्बर २ वर्ग को देता है। इस तरह हमने जाना कि नम्बर २ वर्ग का रक्त ५ वर्गों में होकर पुनः नम्बर २ वर्ग के पास नम्बर १ वर्ग द्वारा प्राप्त होता है। नम्बर ६ वर्ग व ७ वर्ग से भी रक्त वापिस होता है मगर सोते समय या विशेषकर व्यायाम के समय। इस व्यवस्था से हम समझ सके कि वर्ग नम्बर १ दो काम करता है। पहला तो वायु फेंकता है जिसके दबाव से रक्त सञ्चालन होता है और दूसरे नम्बर ५

वर्ग से प्राप्त रक्त को पुनः नम्बर दो को देता है। इसी तरह रक्त का सञ्चालन होता रहता है।

अब सोचना यह है कि आसनों की क्या आवश्यकता है? यह दोनों काम तो प्राकृतिक है। आसन इसमे क्या महत्वपूर्ण कार्य करते हैं? इसके उत्तर में हम कह सकते हैं—

१—क्योंकि रक्त निरन्तर दौरा किया करता है और विविध अङ्गों की विविध नसों से उसे चढ़ना उतरना पड़ता है अतः विशुद्धी-करण होते समय रक्त का कुछ न कुछ मैल अर्थात् अन्य शारीरिक अंशों का तत्व अवश्य नसों में रह जाने की सम्भावना होती है।

२—क्योंकि रक्त का सञ्चालन वायु से होता है अतः उसके सञ्चालन में प्रयोग की हुई वायु की शक्ति अवश्य कहीं न कहीं जाकर शिथिल हो जाने की सम्भावना है।

३—वायु के निरन्तर प्रवाह से वायु एकत्र करने वाले तथा उसे फेंकने वाले अङ्ग अवश्य कभी न कभी थकान महसूस करते हैं और जीवन का क्रम ही ऐसा है कि वायु यन्त्रों को कभी चैन नहीं मगर फिर भी उनको आराम देने की आवश्यकता प्रतीत होती है।

४—परिश्रम, व्यायाम, भोग-विलास आदि से श्वासों की संख्या बढ़ जाती है और श्वास संख्याओं पर नियन्त्रण रखना आवश्यक है। क्योंकि अधिक श्वास लेने के कारण हृदय कमजोर होता है जिससे दिल धड़कने की बीमारी होती है और हार्ट फेल से मृत्यु होती है।

यह चार मुख्य बातें हैं जिनके लिये आसन लाभकारी हैं। क्योंकि

१—आसनों द्वारा प्राणायाम सफलीभूत होता है और फिर श्वास लेने पर वायु का वेग बढ़ता है और उसके वेग से ही रक्त का तेजी से सञ्चार होता है जिसके कारण नसों में रुका हुआ मैल साफ हो जाता है। आसनों से रक्त का प्रवाह बढ़ता है और रक्त के प्रवाह से मैल साफ हो जाता है।

२—क्योंकि आसनों और प्राणायाम की साधना एक ही समय मे होती है अतः आसन करने से रक्त स्वतः ही संचलित रहता है और प्राणायाम द्वारा श्वास रोकने से वायु फेंकने वाले यन्त्र अर्थात् हृदय को आराम मिल जाता है और साथ ही रक्त का प्रवाह बढ़ जाने के कारण हृदय का कार्य भी उस समय तक हलका ही रहता है जब तक आसनों की क्रिया से रक्त का वेग बढ़ा हुआ रहता है।

३—वायु का वेग शरीर के किसी न किसी भाग में जाकर अवश्य शिथिल होता है क्योंकि वायु जब पम्प करके किसी निश्चित स्थान तक पहुंचायी जाती है तो उसका वह वेग नहीं रहता जो निकलते समय होता है। अतः उसके स्थानों की पूर्ति के लिये ऐसी अवस्था में आसन बहुत ही लाभदायक सिद्ध होते है।

४—व्यायाम आदि से रक्त का संचलन अवश्य बढ़ता है मगर उससे श्वासें भी बढ़ती हैं और श्वासों के बढ़ने से हृदय की धड़कनें भी बढ़ती हैं जो आरोग्यता की बाधक हैं। अतः पूर्ण आयु तथा आरोग्यता के हितों की रक्षा के लिये भी आसन लाभकारी सिद्ध हुये हैं और उपयोगी भी हैं।

उपर्युक्त तमाम कारणों से हम यह स्वयम् सोच सकते हैं कि आसन हमारे शरीर के लिये आवश्यक हैं? इसका निर्णय तो मनुष्य इन अभिसन्धियों को दृष्टि में रखते हुये स्वयं ही

कर सकता है। जिस तरह हमारे शरीर के लिये भोजन की नितान्त आवश्यकता है उसी तरह हमें रक्त पोषण के लिये आसनों की भी आवश्यकता है। नस नाड़ियों द्वारा रक्त को सुव्यवस्थित रूप में रखने के ख्याल से तथा शरीर आरोग्य तथा पूर्ण आयु को प्राप्त करने की आकांक्षा से शरीर के लिये आसनों का भी वही मूल्य है जो भोजन का है।

चौदहवाँ सर्ग

स्त्रियाँ और योगासन

ब्राह्मणक्षत्रियविशां स्त्री शूद्राणां च पावनम् ।
शान्तये कर्मणामन्यद् योगान्नास्ति विमुक्तये ॥
युवा वृद्धोऽतिवृद्धो वा व्याधितो दुर्बलोऽपिवा ।
अभ्यासात् सिद्धिमाप्नोति सर्वयोगेष्वतन्द्रित ॥

अर्थात्

योग ही एक साधन है जो हर प्राणी को मुक्ति दिलाने की क्षमता रखता है और उसमें ही शक्ति है कि वह प्रारब्ध के कर्मों को मिटा सकता है। योग के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्रियां तथा शूद्र सब समान हैं अर्थात् योग साधना का सब वर्णों को पूर्ण अधिकार है। ऐसा योग प्रदीपिका का कथन है।

स्त्रियां सदा से ही पुरुष समाज के अत्याचारों का शिकार रही हैं। वह पुरुषों के अपने स्वार्थ द्वारा सदा से ही कुचली गयी हैं और विशेषकर जब से कलियुग का आगमन हुआ है वह केवल भोग-विलास की सामिग्री के अतिरिक्त कुछ और नहीं रह

पायी हैं। अतः व्यायाम, योगसाधना से वह वंचित हो गयी हैं। इसके मुख्य कारण है—

१—भोग लिप्सा बढ़ने के कारण पुरुष समाज का स्वार्थ सदा से स्त्री से रहा और इसी कारण वह यह कभी बर्दाश्त न कर सका कि स्त्रियां भी उनके सदृश्य बलवान हो जाये क्योंकि बल से शौर्य बढ़ता है और शौर्यवान व्यक्ति दबना नहीं जानता। पुरुष स्त्री को दबाकर अपने हुक्म का गुलाम बनाकर ही रखने में श्रेय समझता है इसी कारण उसने उसके बलशाली होने के मार्ग पर नियन्त्रण लगा दिया और अपना मार्ग साफ कर लिया।

२—जब से मुसलमान इस देश मे आये तब से स्त्री समाज की सारी स्वतन्त्रताये छिन गयीं क्योंकि मुसलमान स्त्रियों के सदा से भूखे रहे और भारत में आते समय उनको अपनी स्त्रियां अपने ही देशों में छोड़ देनी पड़ी थीं। उन्होंने भारत की स्त्रियों का ही अपहरण करके अपने घर बसाये। इस कारण धर्म रक्षाके हेतु भी स्त्रियों की स्वतन्त्रता छिन गई।

३—पश्चिमी सभ्यता का प्रभाव भी स्त्री जाति पर विशेष रूपसे पड़े बिना न रहा। पुरुष के हृदय में छरहरी, कृत्रिम रूप सज्जा से अलंकृत स्त्री का ही स्तर रहा और वह कल्पना भी नहीं करने योग्य रहा कि स्वाभाविक स्वस्थ स्त्री को कृत्रिम रूप सज्जा की आवश्यकता ही नहीं होती। पुरुष ही जब योगासनों से जी चुराने लगे तो स्त्रियों की कौन कहे।

२—स्त्रियां इस देश में निरक्षर हैं। अधिकतर स्त्रियों को जब अक्षरों का हीं ज्ञान नहीं तो वह अपने भले बुरे का क्या विचार कर सकती हैं। न उनमें इतनी क्षमता ही होती है कि वह सोच ही सकें। वह तो एक पशु की भांति होकर रह गयी हैं जो अपने जीवन को ढकेलना चाहती और जानती हैं। उन्हें जीवन के वास्तविक आनन्द का भास भी नहीं होता।

५—पुरुष समाज के ऊपर स्त्री समाज की सदा से जिम्मेदारी रही है। क्योंकि प्रकृति ही ने पुरुष को श्रेष्ठ बनाया है अतः पुरुष ने अपने स्वार्थों के कारण स्त्री समाज के उत्थान पद पर सदा से रोक लगायी और सदा से ही उन्हें दलित किया, और यही मुख्य कारण है।

शास्त्रों के मत के अनुसार जब स्त्रियों को भी योग साधना का समान अधिकार है तो फिर स्त्री समाज योगासनों में पीछे क्यों है? वह अपने स्वास्थ्य के सम्बन्ध मे इतनी उदासीन क्यों रहती है? वह प्रगति पथ पर अग्रसर होने की चेष्टा क्यों नहीं करती? उपर्युक्त कारणों के अलावा हो सकता है कि वह योगासनों के लाभों से अनभिज्ञ ही हो। इसलिये अपने निजी स्वास्थ्य के लाभ के लिये उसे योगासनों का सहारा अवश्य लेना चाहिये। उसे जान लेना चाहिये कि योगासन कुमारि, कन्या, युवती, और वृद्धा सबके लिये लाभदायक है। मगर उसे निम्नाङ्कित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—

स्त्रियों के ध्यान रखने योग्य बातें

१—वैसे तो समस्त योगासन समान रूप से ही स्त्रियों द्वारा किये जा सकते हैं मगर उन आसनों को जहाँ गुदा के ऊपर या नीचे पैर की ऐड़ी रखने की व्यवस्था हैं नहीं करना चाहिये।

२—मासिक धर्म के समय आसन नहीं करने चाहिये। जब से मासिक प्रारम्भ हो और जब तक पूरी तरह बन्द न हो जाये तब तक आसन करना वर्जित है। क्योंकि इस समय विश्राम की आवश्यकता होती है।

३—जब स्त्री गर्भ धारण कर ले उसे गर्भाधान के चार या पांच

मास तक तो आसन करने चाहिये मगर आसनों में यह ध्यान अवश्य रखा जाय कि पेट और पीठ पर उनका अधिक असर न पड़े और जब प्रसूति हो जाये तब उसके बाद दो मास तक आसन न करे क्योंकि उस समय तक उसकी नसों में कड़ाई नहीं आती और इस कारण लाभ के बजाय हानि की सम्भावना रहती है।

४—इस विश्राम के बाद जब वह आसनाभ्यास प्रारम्भ करे तो धीरे-धीरे ही प्रगति को बढ़ाये। क्योंकि जबतक बालक दूध पीता है तब तक उसमें शक्ति की कमी ही रहती है और जबतक पूर्ण शक्ति प्राप्त न हो जाये तब तक अपने शरीर को अधिक थकाना श्रेयस्कर नहीं वरन हानिकारक ही सिद्ध होगा।

५—स्त्रियों को आसन हमेशा धीरे २ ही करने चाहिये। क्योंकि प्राकृतिक ढङ्ग से ही स्त्री कमजोर होती है और उसमें कोमलता होती है। अतः अपने प्राकृतिक सौन्दर्य की रक्षा के विचार से भी स्त्रियों को आसन धीरे २ ही करने चाहिये। शीघ्रता से लाभ नहीं होगा।

स्त्री समाज में आसन का प्रचार आवश्यक है क्योंकि वह भी हमारे देश व समाज का अंग हैं। जिस देश की स्त्रियां पुरुषों की भांति शिक्षित, शौर्यवान, तथा हृष्ट-पुष्ट होंगी वहां की सन्तानें कैसी होंगी इसका अन्दाज आसानी से लगाया जा सकता है। पुरुष का काम तो केवल बीज डालना है। स्त्री का कार्य उस बीज से सन्तान का निर्माण करना। यदि स्त्री हृष्ट-पुष्ट है तो उसकी सन्तान भी हृष्ट-पुष्ट होगी और निरोगी रह कर देश का कल्याण कर सकती है। यदि स्त्रियां ही दुर्बल हैं तो सन्तान का पोषण कहां से होगा इन तमाम कारणों से स्त्रियों को चाहिये कि वह अपने स्वास्थ्य लाभ के लिये योगासनों का अनुसरण अवश्य करें।

अब समस्या सबसे जटिल यह है कि स्त्री समाज आज के बन्धनों में जकड़े हुये कैसे आसनों की तरफ अग्रसर हो सकती है। उसका उपाय यह है—

१—स्त्रियों को चाहिये कि वह ब्रह्म-मुहूर्त अर्थात् प्रातः ४ बजे ही उठ बैठें। झाड़ू, बुहारी, आदि से शीघ्र ही फुरसत पाकर स्नान करलें, तब तक पुरुष उठ न सकें।

२—नहाने के बाद ही योगासनों का अभ्यास करें। गर्मी के दिनों में वह घर के किसी भी खुले स्थान में करें तथा जाड़ों में बन्द कमरे में करलें।

३—व्यायामों के लिये जांगिये की जरूरत पड़ती है। मगर स्त्रियों को इसकी आवश्यकता नहीं। वह अपनी धोती पहने ही य पेटीकोट पहनकर व्यायाम कर सकती हैं। केवल इतना कर ले कि सिर व कन्धों को ढकने वाले हिस्से को कसकर कमर पर बांध ले। स्तनों को चोली से कसे रहें और पैरों वाले घेर को दोनों जाघों के बीच होकर पीछे की तरफ लगालें। वह एक तरह की लंगोटी सी हो जायेगी। पेटी कोट पहन कर करें तो नाड़े को कसलें और घेर को धोती के घेर की तरह कस लें। मगर चोली कसकर पहनना आवश्यक है वरना स्तन ढीले होकर लटकने लगेंगे और स्तनों की नसों मे खराबी हो जाने का भय हैं।

४—योगासन ऐसे स्थान पर करें जहां पर यकायक घर के पुरुषों के आने का भय न हो क्योंकि हृदय में चिन्ता रखकर आसन करना लाभदायक होने की बजाय हानिकारक ही होता है। उन्हें यह विचार होना चाहिये कि हमारा भी पुरुषों के समान अधिकार है और हमें स्वास्थ्य साधन की भी उतनी ही आवश्यकता है जितनी कि पुरुषों को तब ही वह स्वास्थ्य

लाभ कर सकती हैं क्योंकि विचार-शक्ति का स्वास्थ्य पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

स्वास्थ्य साधना करने में कुछ दिन तो अवश्य परेशानी होती है मगर जब करने का अभ्यास हो जाता है तब सारी परेशानियां स्वयम् ही हल हो जाती हैं। वैसे भी किसी कार्य को प्रारम्भ करना कठिन होता है मगर जब वह प्रारम्भ हो जाता है तो उसको पूर्ण करना उतना कठिन प्रतीत नहीं होता। अतः स्त्रियों को चाहिये कि वह योगासनों को प्रारम्भ करें और अपनी लगन को कम न होने दें। यदि लगन होगी तो वह पूर्ण जरूर होगा।

पन्द्रहवां सर्ग

योगासन

पुरानी कहावत है कि जीव को मनुष्य योनि प्राप्ति करने के लिये ८४ लाख योनियों को भोगना पड़ता है। इसमें कहाँ तक तथ्य है—इसका निर्णय तो हम नहीं कर सकते। मगर हम यह जरूर कह सकते हैं कि इस किवदन्ती से यह तत्व अवश्य प्राप्त किया जा सकता है कि मनुष्य देह को प्राप्त करने के लिये जीव को समस्त सृष्टि की योनियों का ज्ञान होता है। जीव, जन्तु, नभचर, वनचर, जलचर, आदि श्रेणियों की समस्त योनियों का ज्ञान उसे अवश्य होता है, और इसी कारण आसनों में सृष्टि की जीव योनियों पर ही अंश मिश्रित हैं। आसन क्या है? वह तो केवल शरीर के अंग विशेषों को सम्पन्न करने की कला है जिनसे शरीर आरोग्य और पूर्णायु को प्राप्त होता है। इसी लक्ष्य को सम्मुख रख कर आसनों का विश्लेषण भी किया गया है।

आसनों का विश्लेषण.

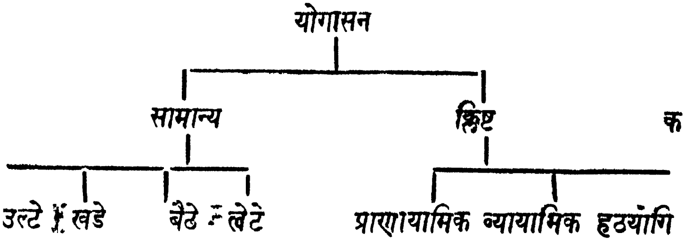

उपर्युक्त आसन विश्लेषणों की भीमांसा करते हुये यह बताना आवश्यक है किः—

*१. **उल्टे**—आसनों की किया शरीर के हर अंग पर सामान्य होनी चाहिये। क्योंकि मनुष्य सदा पैरों के बल ही चलता, फिरता और खड़ा रहता है। अतः सिर, कन्धों, पर ही भार रहता है अतः इनको भी शक्ति प्रदान करने के विचार से उल्टे आसनों का विचार किया गया अर्थात् मनुष्य की सामान्यावस्था के विपरीत आचरण करने का ध्येय रखा गया ताकि शिर कंधे तथा पैरों के ऊपरी भाग को भी आराम मिले। इसी हेतु उल्टे आसनों का जन्म हुआ इस श्रेणी में वही आसन आते हैं। जिनमें पैरों को ऊपर और सिर को नीचे रखने की व्यवस्था है।*

*२. **खड़े**—कई अंग विशेषों को खड़ी अवस्था ही में रखने और व्यायाम करने से आराम मिलता है अतः सामान्य अवस्था को दृष्टि में रखकर जिन आसनों का जन्म हुआ है वह इस श्रेणी में आते हैं।*

*३. **बैठे**—बैठकर जो आसन किये जाते हैं और इस प्रकार अपने ध्येय तक ले जाने में जो आसन सफल होते हैं वह इस श्रेणी में रखे गये हैं।*

४. लेटे—जो आसन लेटकर ही किये जा सकते हैं और उनका तथ्य तब ही सफल होता है वह इस श्रेणी में रखे गये हैं।

आसनों को स्वास्थ्य लाभ का पूर्ण ध्यान रखते हुये ही श्रेणीबद्ध किया गया है। इनमें उलट फेर नहीं किया जा सकता। जो आसन जिस तरह भी किया जा सकता है उस तरह करना चाहिये ऐसा नियम है। हो सकता है कि जिस आसन को लेटकर या बैठकर करने की व्यवस्था है उसे खड़े होकर आराम से किया जा सकता है मगर यह वर्जित है क्योंकि जो आसन जिस तरह करने की व्यवस्था से रखा गया है उसी तरह वह अङ्ग विशेष के लिये लाभकारी हो सकता है अन्यथा वह अपना कार्य पूर्ण नहीं कर सकता। जैसे एक आसन पेट पर असर डालने के लिये किया जाता है और उसके लिये लेटकर करने की व्यवस्था है अतः उसे खड़े होकर करने में पेट पर असर नहीं पड़ेगा और जो भी उस आसन विशेष से लाभ की आशा है वह कभी भी पूर्ण न हो सकेगी। अतः इसी कारण जिस तरह भी आसनों की व्यवस्था है उन्हें करना चाहिये और उनमें अपनी स्वार्थता के लिये रद्दोबदल नहीं करनी चाहिये।

उपर्युक्त सामान्य आसन तो हर मात्र के लिये उपयुक्त हैं। मगर क्लिष्ट आसन कवल उन्हीं लोगों के लिये हैं जो आसन अपने किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिये करते हैं। सामान्य आदमी तो आसन स्वास्थ्य रक्षा के लिये करता है। उसके सामने न तो गामा पहलवान बनने का लक्ष्य है और न राममूर्ति जैसा व्यायामिक। उसके सामने केवल एक ही लक्ष्य है कि शरीर निरोगी रहे और पूर्ण आयु की प्राप्ति हो सके। जो लोग किसी लक्ष्य को लेकर आसनों की साधना करते हैं उन्हें क्लिष्ट आसन करने पड़ते हैं। जो प्राणायाम में पारंगत होना चाहते हैं, जो व्यायाम में श्रेष्ठ होने की कामना करते हैं

यो जो प्रकृति के विपरीत चलने की इच्छा करना चाहते हैं इन आसनों की क्रियाओं में रत रहते हैं।

१. **प्राणायामिक**—सामान्य आसनों में अधिक से अधिक आध घन्टे तक प्राणायाम करने का विधान है मगर जो समाधिस्थ होकर भगवान् शङ्कर की भांति जप, तप, करने की कामना करते हैं और सप्ताहों तक श्वास न सेवन करने की कामना करते हैं वह इस श्रेणी के आसनों का प्रयोग करते हैं।

२. **व्यायामिक**—जिनके सम्मुख राममूर्ति और तागबाई जैसों का आदर्श है जो वह अपने शरीर को अलंकृत करने तथा शक्ति का दिखावा चाहते हैं वह इस श्रेणी के व्यायामों का अनुसरण करते हैं।

३. **हठ योगिक**—जिन्हें प्रकृति के नियन्त्रण पर रोक लगाने की कामना होती है अर्थात् जो यह चाहते कि ठण्ड में उन्हें गर्मी लगे, और गर्मी में उन्हें शीत, वह हठ योगिक आसनों का प्रयोग करते हैं। वह खान पान आदि समस्त विषयों से विरक्त होकर ही साधना करते है। उनके उद्देश्य का मूल तत्व है प्रकृति से द्वन्द करना।

अब मनुष्य के सामने प्रश्न होता है कि वह अपने लिये कौनसा आसन चयन करे। पहले हम सामान्य आसनों को लेकर चलते हैं। सामान्य आसनों का चयन करते समय आदमी को सोचना पड़ता है कि वह शीर्षासन करे, या सर्पासन ? उसका यह सोचना आवश्यक भी है क्योंकि बिना सोचे वह अपने शरीर की साधना तथा योगाभ्यास में सफल नहीं हो सकता। न तो हर मनुष्य प्रत्येक आसन को कर ही सकता है और न हर मनुष्य को हर आसन की आवश्यकता ही होती है। अतः आसन चुनने से पहले सोचना आवश्यक है—

१—आप आसन क्यों करना चाहते हैं ? प्रत्येक का सहज

स्वभाव वाला यही उत्तर होगा कि स्वास्थ्य रक्षा के लिये। मगर नहीं अब आपको स्पष्ट रूप से सोचना पड़ेगा कि आप अपने किस अङ्ग में सबसे अधिक कमजोर महसूस करते हैं या किस अङ्ग विशेष पर आपका अत्याधिक ध्यान है।

२—शरीर के गठन का भी प्रभाव आसनों के चयन पर पड़ता है। जैसे किसी का पेट बड़ा है तो उसे पेट को ठीक करने के लिये आसन का चयन करना पड़ेगा जैसे किसी के पैरों की शक्ति क्षीण है तब उनको शक्तिवान् बनाने के लिये वैसे आसन का प्रयोग आवश्यक है।

३—च्यन करते समय शरीर की क्षमता का भी विचार रखना आवश्यक है। जैसे किसी मनुष्य को शीर्षासन की आवश्यकता है मगर वह पीठ की हड्डियों के कारण मजबूर है अतः पहले उसे वह आसन चुनना चाहिये जिससे कि वह शीषासन करने की क्षमता प्राप्त कर सके। अतः एक आसन करने के पूर्व दूसरे आसन को पहले केवल इसी लिये चुनना पड़ता है कि सही आसन किया जा सके।

इन बातों को लक्ष्य में रखकर ही आसनों चयन किया जा सकता है अन्यथा आसनों का बिना सही चयन करने से आरोग्यता तो प्राप्त होगी मगर आप अपने जिस अङ्ग विशेष का ध्यान रखना चाहते हैं वह आप नहीं कर सकेंगे। आपका वह अंग जिसके लिये आसन करना है परिपक्व न हो सकेगा।

अपने शरीर को ध्यान में

रखकर विचारिये

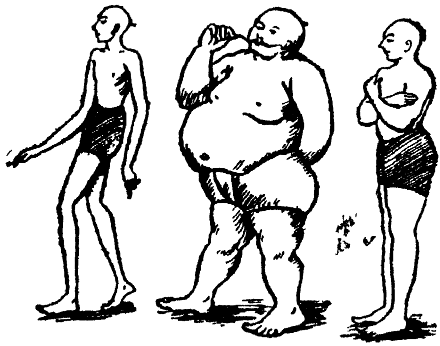

१–अति परिश्रमी   २–अपरिश्रमी   ३–स्वस्थ्य

ऊपर चार मनुष्यों के चित्र दिये गये हैं। वैसे चारो चित्र स्वास्थ्य व्याख्या ही करते हैं मगर फिर भी उनके गठन को देखते हुये सोचना पड़ता है कि किसे कौन से आसनों की आवश्यकता है ? तथा अगर आप आसन करना चाहते हैं तो आप कौनसी अवस्था में हैं ?

१–चित्र–"स्वस्थ्य"–यह चित्र स्वस्थ्य मनुष्य का है। इसके शरीर के हर अंग की गठन समान है। सिर, हाथ, पैर, सीना, पेट आदि समस्त अंग समान तथा व्यवस्थित हैं। अगर यह योगासन का प्रयोग करे तो इसका शरीर ऐसा ही बना रहेगा और पूर्ण आयु को प्राप्त होगा। इसके लिए शीर्षासन सबसे श्रेष्ठ है। अगर यह किसी रोग से पीड़ित है, जैसे कब्ज आदि का शिकार है तो उसके हिसाब से आसनों का चयन कर सकता है। अन्यथा यह चाहे जिस आसन को करे वही इस के लिए हितकर होगा।

२-चित्र-अपरिश्रम-इस चित्र के देखने से पता लगता है कि यह उस आदमी का चित्र है जिसमें फुर्ती नहीं है। इसके अंगों का पूर्णविकास तो प्राकृतिक ढंग से हो गया है मगर क्योंकि इसने परिश्रम नहीं किया है इस कारण अंगों में चेतना नही है और शरीर में स्फुर्ति नहीं है। बिना परिश्रम के अंग ढीले रहते हैं उनमें चेतना की कमी रहती है। समय से पहले ही वह बूढ़े, प्रतीत होने लगते हैं और साथ ही वह अपने जीवन को भार स्वरूप करते हैं।

चित्र नं. १ तथा इस चित्र नं. २ में कितना अन्तर है पहला तो चहरे पर तेज धारण किये है और इस दूसरे के मुख पर खड़े होते हुये भी अनिच्छा के भाव स्पष्ट हैं। जिस तरह से बिना स्तेमाल में लाये हुए औजारों को जंग लग जाती है और काम के समय वह वह सन्तोष जनक कार्य नहीं कर पाते उसी तरह जो परिश्रम नहीं करता उसके अङ्गों में शिथिलता रहती है और चहरे पर तेज नहीं रह पाता, उठना, बैठना, चलना, फिरना आदि कार्य भी उसे भार स्वरूप प्रतीत होते हैं।

इस मनुष्य में कोई कमी नहीं हैं। प्रकृति ने इसे वह सारी चीजें दी हैं जो पहले के पास हैं बस कमी केवल एक बात की है वह है हृदय की लगन। अगर लगन होती तो वह कुछ न कुछ परिश्रम करता और ऐसा सुस्त दिखाई न देता।

३-चित्र अति परिश्रमी-यह चित्र परिश्रमी पुरुष का है जो जीवन यापन के लिये परिश्रम करता है। कठिन परिश्रम करने

के कारण उसके अङ्गों को थकान है। क्योंकि उसकी स्फुर्ति परिश्रम करने के कारण नष्ट हो चुकी है इस कारण वह थक गया है। मगर परिश्रम का प्रभाव उसके शरीर के अङ्गों पर बुरा नहीं क्योंकि परिश्रम करने से अङ्गों को स्वाभाविक व्यायाम मिलता है और स्वाभाविक व्यायाम से थकान तो होती है मगर अंगों में सुडौलता आ जाती है।

इस पुरुष को अब किसी विशेष आसन की आवश्यकता नहीं क्योंकि गठन पूरी हैं केवल इसको उन आसनों की आवश्यकता है जिससे इसके शरीर के अंगों की थकान मिट सके।

४—"सामान्य"–जो मनुष्य दिमाग का काम करते हैं तथा सामान्य रूप ही से अपना जीवन व्यतीत करते हैं उनके शरीर की गठन स्वाभाविक ही रहती है। उनके अंगों में कभी थकान आदि नहीं होती है मगर जिस अंग को अधिक काम करना पड़ता है वह अधिक थक जाता है और जो आराम में रहता है सुस्त रहता है। थके हुये अंगों को विशिष्ट व्यायाम की आवश्यकता होती है। अतः उन्हें आसन करना जरूरी है ताकि शरीर को स्वस्थ्यता प्राप्त हो सके।

आप अपने शरीर की गठन को विचार कर देखें कि इन चार श्रेणी में से आप किस श्रेणी में आते हैं क्योंकि जब तक आप स्वयं ही अपनी शारीरिक अवस्था पर गौर नहीं करेंगे तब तक आप अपने शरीर की आरोग्यता के विषय में कुछ न तो सोच ही सकेंगे और न कर ही सकेंगे। आप जिस श्रेणी में भी हों स्वयं उसके हिसाब से ही आसनों को चयन कीजिये।

उलटे खड़े होकर करने वाले

आसन

शीर्षासन.

यह आसन समस्त आसनों में श्रेष्ठ है क्योंकि इसके गुण इतने अधिक हैं जो और किसी आसन में प्राप्त नहीं। मुख्य बात तो यह है कि यह आसन मनुष्य की प्राकृतिकावस्था के विपरीत है। यह समझ लेना चाहिये कि मनुष्य के तालू में चन्द्रमा का वास है और चन्द्रमा हमेशा अमृत-विन्दु टपकाता रहता है। पेट में स्थिर सूर्य देव चन्द्रमा द्वारा टपकाया हुआ अमृत पीता जाता है क्योंकि तालू से प्राप्त अमृत तो पेट ही में जायेगा। अतः मनुष्य की आयु होती रहती है क्षीण इस आसन के करने से मनुष्य की अवस्था उल्टी हो जाती है। चन्द्रमा द्वारा टपकाया हुआ अमृत इसके बजाय कि पेट में जाकर सूर्य द्वारा नष्ट हो मस्तिष्क में जाता है और वह चैतन्यता प्रदान करता है। चैतन्यता से ज्ञान प्राप्त होता है और ज्ञान ही, बल, बुद्धि, तथा शौर्य की कुञ्जी है।

प्राणायाम साधना के विचार से भी यही आसन श्रेष्ठ है। इसकी क्रिया सरल तथा हर प्रकार से शरीर को लाभकारी है।

क्रियाः--१—पहले घुटने टेककर बैठना चाहिये।

२—एक नरम कपड़ा रख लेना चाहिये। अगर नरम कपड़े की ईंडुरी बनाकर रख ली जाय तो अच्छा है।

३—सिर को अच्छी तरह से ईंडुरी पर जमा कर रखना चाहिये।

४—दोनों हाथों को ईंडुरी के पास लगा लेना चाहिये ताकि वह हिल भी न सके।

५—फिर धीरे २ गर्दन को ऊपर उठाना चाहियें। सिर के ऊपर ही सारा वजन हो जायगा।

१— शीर्षासन (अ)

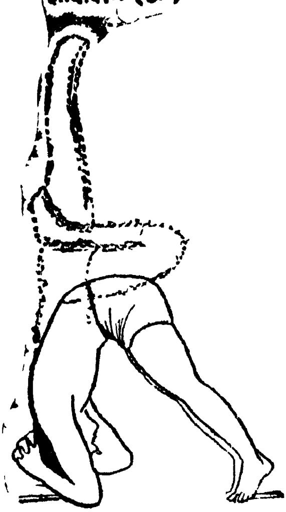

शीर्षासन (ब) २—

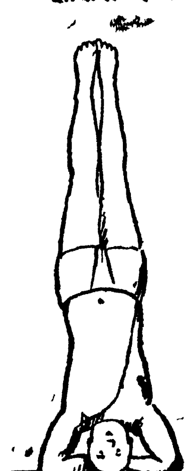

६—पहले सांस नहीं लेनी चाहिये और धीरे २ पैरों को सीधा कर लेना चाहिये।

७—तमाम शरीर कड़ा तख्ते की तरह रहना चाहिये

८—जब शरीर सध जाये तो धीरे २ लम्बी सांसें लेनी चाहिए और फिर उसी प्रकार धीरे २ उसे निकालना चाहिये।

९—शुरू में दीवाल के सहारे प्रारम्भ करना चाहिए।

सिर के बल खड़े रहने को शीर्षासन कहते हैं। ऊपर हमने आपको सबसे सरल रीति का वर्णन किया है। इस रीति के अलावा भी अनेक और रीति हैं जिनके द्वारा यह किये जा सकते हैं।

दूसरी रीति—दोनों हाथ कुहनियों के बल पृथ्वी के सहारे रख कर सिर को नीचे रखें और भुजाओं पर जोर डालते हुए धीरे २

शरीर को उलटा खड़ा करना चाहिए ऐसा करने से शरीर का भार भुजाओं पर विशेष रूप से रहेगा और आसन का पूर्ण लाभ भी प्राप्त होगा।

तीसरी रीति—दोनों हाथों की उंगलियों को एक दूसरे में फंसा लें और पृथ्वी पर उनके सहारे गर्दन को टिकाकर धीरे २ शरीर को टिकायें। इससे गर्दन पर अधिक भार पड़ेगा। जब गर्दन भार वहन न कर सकेगी वहाँ भुजायें गर्दन का साथ देंगी और भार को हलका कर देंगी। इस क्रिया से गर्दन में बल आता है।

अनेकों रीति से इस आसन को किया जा सकता है मगर यह तीनों रीति ही अधिक प्रचलित तथा लाभदायक हैं।

शीर्षासन के लाभ

शीर्षासन के लाभ अनेकों हैं जिनमें से मुख्य हैं—

लाभः—१—तमाम रक्त प्रवाह सिर की ओर हो जाता है। वैसे तो रक्त पैरों की ओर दौड़ता है मगर इस आसन से उसका प्रवाह स्वतः ही बदल जाता है। इससे दिमाग में ताकत आती है।

२—रक्त प्रवाह एक तरफ ही दौड़ने के कारण मस्तिष्क कुछ कमजोर हो जाता है अतः इस आसन से वह पुनः स्वस्थ हो जाता है।

३—वीर्य शरीर का राजा है। उसका नाश भोग से होता है। जो लोग दिमाग से अधिक काम लेते हैं उनका वीर्य मस्तिष्क द्वारा नाश होता है। यह शरीर द्वारा नाश होने से अच्छा है।

४—तमाम इन्द्रियाँ पुनः नवीन जीवन पाती हैं। जब बालक पेट में रहता है तो उसका भी सिर नीचे की ओर रहता है तभी तमाम शरीर ठीक रह पाता है।

अतः इस आसन से रक्त प्रवाह तेज होता है और शुद्ध रक्त का संचार होता है।

५—शीर्षासन करने से पांवों का रक्त मस्तिष्क में खिंचकर आ जाता है अतः जब पुनः सीधी अवस्था में खड़ा हुआ जाता है तो रक्त पैरों में अधिक प्रवाह के साथ नस नाड़ियों में दौड़ने लगता है। इससे शक्ति आती है और रक्त शुद्ध होता है।

६—शीर्षासन करते समय प्राणायाम करने से हृदय को शक्ति मिलती है तथा शुद्ध रक्त के सञ्चार से हृदय का कार्य हलका हो जाता है।

७—मेरुदण्ड में होकर मस्तिष्क से सुषम्ना का प्रवाह नीचे की ओर होता रहता है। इस आसन के करने से उसका प्रवाह पुनः मस्तिष्क की ओर हो जाता है, इस कारण बुद्धि में बल आता है।

८—इसका असर शरीर के सब भागों के साथ सिरों पर अधिक पड़ता है। रक्त की कमी या अशुद्धता के कारण सिर के बाल जो श्वेत हो जाते है पुन काले होने लगते हैं।

९—शरीर में चिकनापन तथा जोड़ों में स्फुर्ति का सञ्चार होता है।

१०—नेत्रों में बल आता है और उनमें शक्ति प्राप्त होने के कारण मनुष्य अल्प आयु में अन्धा नहीं होता। उसको दृष्टि रोग कभी नहीं सता पाता।

११—पेट का भार उल्टा हो जाता है अतः अन्दर के अङ्ग को आराम मिलता है। और पेट का आकार भी धीरे२ ठीक होने लगता है। पेट का स्वाभाविक आकार सीने से नीचे रहने का ही है मगर बोझ पड़ने के

कारण वह गोलाकार अवस्था में आगे बढ़ने लगता है। अतः इस आसन से यह विकार दूर हो जाता है।

शीर्षासन का रोगों पर लाभ.

१. स्नायु दौर्बल्य—जिन लोगों को मानसिक या शारीरिक परिश्रम अपनी शक्ति से अधिक करना पड़ता है उनके अङ्गों में कमजोरी सी महसूस होती है क्योंकि कार्य में रत रहने वाले अङ्ग तो अधिक थक जाते हैं और आराम उठाने वाले अङ्ग निठल्ले रहकर कार्य करने में असमर्थ हो जाते हैं। अंग्रेजी में इसे Nervous Brealckcwn भी कहते हैं। ऐसी अवस्था में शीर्षासन रामबाण है।

२. वीर्य क्षय—मानसिक विकारादि के कारण जब वीर्य पतन का रोग लग जाये तो यह आसन करना चाहिये। इसके करने से वीर्य की रक्षा होती है।

३. बवासीर—बवासीर में मस्से होते है और उन मस्सों में अशुद्ध रक्त भर जाता है। शुद्ध रक्त हल्का होता है, कहीं जमकर नहीं बैठ पाता। अशुद्ध होने पर ही रक्त भारी हो जाता है अतः वह भर जाता है। इस आसन के करने से अशुद्ध रक्त भी शुद्ध हो जाता है और बवासीर के मस्से सूखकर नष्ट हो जाते हैं।

४. जोड़ों का दर्द—इस आसन से शुद्ध रक्त का सञ्चार होता है और नसों की गति उलट जाती है तथा प्रवाह बहुत तेज हो जाता है अतः कमर से नीचे वाले जोड़ों को भी लाभ होता है और घुटने आदि के रोग के लिये तो अक्सीर प्रमाणित हुआ है।

५. कब्ज—खाना पूरी तरह न पचने से कब्ज होता है और कब्ज होने से मल अच्छी तरह साफ नहीं हो पाता। इस कारण

शरीर में अनेकों रोग घर कर लेते हैं। इस आसन के द्वारा कब्ज रोग दूर होता है।

६. सिर दर्द—मस्तिष्क में पूर्ण शक्ति का सञ्चार नहीं हो पाता और इसी कारण धीरे २ कमजोरी बढ़ने के कारण सिर में दर्द होता है। शीर्षासन से मनचाही शक्ति मस्तिष्क को प्राप्त हो जाती है अतः सिर दर्द कभी नहीं हो पाता।

इस आसन को अन्य और आसनों के साथ करने से, कर्ण रोग, नेत्र में जलन, दिमागी फितूर, बहरापन, फालिज, पित्त विकार जीर्ण ज्वर आदि रोगों में भी लाभ होता है।

इस आसन को स्त्री पुरुष समान रूप से कर सकते हैं।

अङ्ग *

क्रियाः—१—पहले पृथ्वी पर सीधे लेट जावें। शरीर को कड़ा रखें और फुर्तीला बनाये रखें ताकि वह तनिक से इशारे पर उठता रहे।

२—पहले धीरे २ पैरों को ऊपर उठायें। हाथों को धड़ के पास ही साधा रहने दें।

३—गर्दन के पास ही से शरीर को भी मोड़ लें और पैरों के साथ उसे उठाकर सिर के ऊपर कमान बनाते हुये दूसरी तरफ ले जायें।

चित्र नं. ३ (ग)

४—हाथ जहाँ के तहाँ ही रहें। धड़ सीधा हो जाये। मुंह के ऊपर कमर हो और पैर कमर के पास से मुड़कर पृथ्वी पर कड़ाई के साथ उँगलियों के सहारे ही सीधे टिके हों।

५—सांस केवल नाक से लें और तनिक जोर से भी लेते रहें और उसी प्रकार निकालते भी रहें।

६—धीरे २ फिर पैरों को वहाँ से उठाकर धड़ के साथ ही साथ उसके स्थान पर ले आवे। हाथ जहाँ के तहाँ ही रहें और पैर अपने स्थान पर आ जावें।

लाभः—

१—इससे तमाम शरीर पर ही गहरा प्रभाव पड़ता है।

२—रक्त की चाल बदलती है। उसके दो प्रवाह होते हैं। एक तो पृथ्वी पर रखे शरीर की ओर और दूसरा जमीन से उठे हुये अङ्गों की तरफ होता है।

३—पेट की तमाम नसें ठीक हो जाती है। आमाशय पर जोर पड़ता है और जितनी भी खराबी आमाशय में होती है उसका पूर्ण नाश हो जाता है।

४—पीठ की हड्डी की प्राकृतिक लोच ज्यों की त्यों ही बनी रहती है।

५—रक्त विकारों से पैदा होने वाले सभी रोगों का इससे पूर्ण नाश होता है।

६—वीर्य की रक्षा होती है।

✳ अर्ध अङ्ग

क्रियाः—यह आसन भी अङ्गासन के समान ही होता है। इसमें थोड़ा सा ही अन्तर होता है।

१—अर्ध अङ्गासन में भी पृथ्वी पर सीधे लेट जाना चाहिये।

२—धीरे २ शरीर को ऊपर की तरफ उठाना चाहिये।

३—सिर अपने स्थान पर ही रहना चाहिये। केवल गर्दन के पास ही से धड़ को मोड़ना है।

४–धीरे २ पैरों को उठाकर ऊपर की तरफ सीधा करना शुरू करना चाहिये।

५–शरीर का भार धड़ पर पड़ता है। मगर क्योंकि वह गर्दन के पास ही से मुड़ा होता है अतः उसमें इस वजन को साधने की पूर्ण शक्ति नहीं रहती अतः हाथों का सहारा पीठ पर देना चाहिये।

६–सारे शरीर का नितान्त कड़ा रहना आवश्यक है। केवल हथेलियों का सहारा ही पीठ को मिले। कोहनियाँ पृथ्वी पर टिकी रहनी चाहिये।

सर्वांगासन

चित्र नं. ४ (घ)

७–धीरे २ लम्बी सास खींचने के बाद उन्हें भी धीरे २ निकालना चाहिये।

८–जब पुनरावस्था में आना हो तो धीरे २ ही शरीर को अपने स्थान की ओर ले जाना चाहिये। अधिक जल्दी करने से बहुत नुकसान हो सकता है।

लाभः–१–इस आसन से रक्त का प्रवाह हृदय की ओर अधिक तेजी से होने लगता है। हृदय तो रक्त की सञ्चालन गति को ठीक रखता है पर कभी २ ऐसा भी होता है कि कहीं-कहीं दूषित रक्त अपना स्थान नहीं छोड़ता। मगर अब उसे हृदय तक आना ही पड़ता है। हृदय उसे दोषरहित कर देता है।

२–पेट के विकारों को इससे लाभ होता है। प्रारम्भ में तो कुछ गड़बड़ी होती है क्योंकि सञ्चालन गति उलटी हो जाती है मगर धीरे २ वह ठीक हो जाता है।

३—वीर्य रक्षा होती है।

४—गर्दन मोटी होने लगती है। कन्धों की बनावट सुडौल होती जाती है।

५—रीढ़ की हड्डी का रक्त इधर उधर फैलने लगता है। अक्सर ऐसा होता है इसके अन्दर चलने वाला रक्त नीचे की तरफ जाकर जमा हो जाता है और फिर रक्त के दोषों के कारण वह कमर में दर्द भी प्रारम्भ कर देता है मगर इस आसन से यह दोष दूर होता है।

६—श्वांस रोग का भी इसमें लाभ होता है। खांसी जुकाम भी ठीक हो जाते है।

यह आसन अधिक कड़ा नहीं है। थोड़े से परिश्रम से इसे सिद्ध किया जा सकता है। अगर इसका प्रयोग प्रतिदिन किया जाय तो बहुत से रोग तो शरीर के पास तक आने की हिम्मत तक नहीं कर सकते।

* उर्ध्व सर्वांगासन.

विधि—

१—पहले भूमि पर चित लेट जाइये।

२—पांवों को सीधा तानकर धीरे २ ऊपर की तरफ उठाइये।

मत्स्यासन

चित्र नं. (५)

३—जब पांव कन्धों की सीध में आ जायें दोनों कोहनियों को पृथ्वी पर टेक लें और हथेलियों के सहारे कमर का भार रोकें।

४—अब आपके शरीर का सारा भार गर्दन व कन्धों पर आ आयगा। और हाथों से उन्हें सहारा मिलेगा।

५–प्राणायाम करना प्रारम्भ करके पैरों को कड़ा करके इधर उधर हटाते रहें।

६–श्वास केवल नाक द्वारा ही ग्रहण करें और निकालें।

लाभः—

१–इससे गर्दन को शक्ति प्राप्त होती है।

२–कन्धों को बल मिलता है।

३–हृदय और पेट को आराम मिलता है।

४–रक्त की शुद्धि होती है।

५–कमर में शक्ति का सञ्चार होता है।

६–जांघों को शक्ति प्राप्त होती है और वह सुडौल बनती हैं।

रोगों को लाभ–

१–गले नहीं आते। इन्हें Tonsils भी कहते हैं।

२–सिर के दर्द आदि रोगों को लाभ होता है।

३–फेफड़ों की बीमारियां दूर होती हैं।

४–कफ आदि नहीं बनता।

५–नेत्रों को लाभ होता है।

६–कनपेड़ इत्यादि रोगों के लिये अक्सीर है।

इसके विशेष लाभ शीर्षासन के समान हीं हैं। स्त्री पुरुष इसे समान रूप से कर सकते हैं।

मुक्त हस्त वृक्षासन

विधिः–

१–पहले शीर्षासन की तरह एक नर्म कपड़े की गद्दी बनाकर दीवाल के पास रखें। फिर उठंगे होकर बैठें और अपने दोनों हाथों को पञ्जों के सहारे रखें।

२–सिर को गद्दी पर जमाकर रखें और पैरों को ऊपर की तरफ ले जाकर शरीर को उलटा करलें।

३–फिर धीरे २ हाथों को सरका कर दूर करलें और धीरे से सिर को हाथों के सहारे उठाकर सारा शरीर दोनों हाथों पर साध लें।

४–सारा शरीर अच्छी तरह कड़ा रहना चाहिये। प्राणायाम करने से सारा शरीर हल्का हो जायगा। और आसन का प्रभाव शरीर पर बहुत ही अच्छा पड़ेगा।

लाभ–१—इस आसन से रक्त का सारा सञ्चालन नीचे की तरफ होने लगता है। सिर के तमाम अङ्गों में शक्ति का सञ्चार होता है और मस्तिष्क की स्मरण शक्ति बढ़ती है।

२–भुजाओं में बल आता है, मासिल बनते हैं और दिल में रक्त का वेग बढ़ने से उसकी स्थिरता अधिक शक्तिशाली होतीहैं।

मुक्त हस्त वृक्षासन

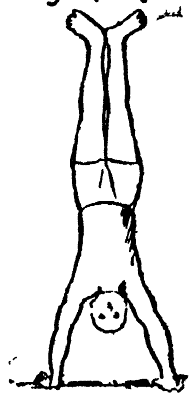

नवीन चित्र १०.

३—आमाशय के सारे विकार दूर होते हैं। कहा जाता है कि जलंधर रोग के पीड़ित अगर इस आसन को नियमित रूप से करते रहें तो उन्हे अत्याधिक लाभ होता है।

४—योगी, ब्रह्मचारियों, विद्याभाषियों आदि मस्तिष्क से कार्य करने वालों के लिये यह आसन सर्वोत्तम है। वीर्य रक्षा के लिये इसे अवश्य करना चाहिये।

उर्ध्व पद्मासन.

विधिः—

१–पद्मासन आलथी पालथी मार कर ही किया जाता है। मगर उर्ध्व करते समय आसन करने वाले की अवस्था शीर्षासन जैसी हो जाती है।

२–सिर निचाई की ओर हथेलियों के सहारे टिका रहता है। पैर पद्मासन की अवस्था में ही रहते हैं। शरीर का कड़ा रहना

और उसको सम्यक रखना बहुत ही जरूरी है। क्योंकि अगर तनिक भी हिलडुल जाता है तो गर्दन में झटका आने का भय रहता है।

३–प्राणायाम करते रहना वहुत जरूरी है। साँस अगर तनिक भी ली गयी तो शरीर का सारा भार बिगड़ जाता है।

उर्ध्व पद्मासन

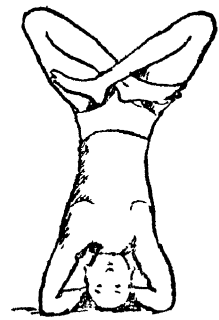

नया चित्र ११.

लाभः–

१—इस आसन से सिर व सिर का तलुआ काफी मजबूत हो जाता है। सीना बढ़ता है।

२–श्लेषमा, पीनस, मस्तिष्क विकार आदि में तो यह आसन अमोघ अस्त्र है।

समस्त उल्टे खड़े होकर करने वाले–
आसनों के लाभ

शीर्षासन के जो विशेष लाभ हैं वही इन तमाम आसनों के लाभ हैं। और यह सब आसन लगभग उन सब रोगों को अच्छा करने की क्षमता रखते हैं जिन्हे शीर्षासन ठीक कर सकता है। क्योंकिं यह आसन सामान्य मनुष्यावस्था के विपरीत ही होते हैं अतः इसी कारण योगशास्त्र में कोई २ उन्हें–

१. विपरीतासन
२. विपरीत करणी
३. कपाली आसन
४. वृक्षासन, आदि नामों से भी पुकारते हैं।

क्योंकि इनका मूल तत्व सिर के बल खड़े होकर करने का है अतः इनमें बहुत ही सूक्ष्म भेद है। इनके लाभ और गुण भी इसी कारण एक ही से हैं।

खड़े होकर करने वाले आसन.

सामान्य खड़ी अवस्था में जो आसन किये जाते हैं वह इस श्रेणी में आते हैं। इन सबका असर शरीर के सामान्य अङ्गों पर पड़ता है। मगर प्रत्येक आसन किसी एक अङ्ग विशेष के हितार्थ अधिक लाभदायक होता है क्योंकि प्रत्येक आसन का एक ही मूलतत्व होताहै। किसीभी अंग विशेषको वह अत्याधिक लाभ करता है, और यदि वह रोग पीड़ित है तो उसका उपचार भी करता है।

वैसे तो इस श्रेणी में सभी आसन सामान्य हैं। मगर हम करने के ढंग को दृष्टि में रखते हुये उनका वर्णन करते चलेंगे ताकि आसान २ पहले आ जाय और कुछ कठिन बाद में।

✳ वातायनासन.

विधि—

वातायनासन

१—प्रथम सीधे खड़े हो जाइये। इसके पश्चात् अपने बायें पैर को उठाकर सीधे पैर की जाँघ पर रखिये।

२—पाँव का पञ्जा बिलकुल जाँघ से मिला रहना चाहिये। अब धीरे २ नीचे को बैठते जाइये। और जब दाहिना पाँव इस तरह मुड़ जाय कि नीचे की टाँग तो सीधे रहे और घुटना मुड़ जाय तब ही बैठना रोक लीजिये।

३—अब इस दशा में दोनों पांव ऐसे हो जाँय— नया चित्र १२. दाहिना पाँव तो मुड़ा रहे और दाहिने पाँव के घुटने पर बांयें पांव का पञ्जा रखा रहे। दाहिनी जांघ बिलकुल सीधा रहनी चाहिये।

४—इस प्रकार आसन बन जाने पर दोनों हाथों को जोड़कर सीने पर रख लीजिये। इस आसन की अवस्था में पांवों को बदलते

रहना चाहिये। कभी दाहिने की तरह बाँयें को कर लेना चाहिये और कभी बांये की तरह दाहिने को।

लाभः—

१—इस आसन से पाँव की नसें खिचती हैं और उनमें रक्त-भ्रमण शीघ्रता से होने लगता है।

२—रक्त भ्रमण शीघ्रता से होता है तो पाँवों के स्नायु खुल जाते हैं। रक्त शुद्ध होकर बहने लगता है।

३—पाँव दृढ़ और बलवान हो जाते हैं। उनमें चलने फिरने की शक्ति बढ़ जाती है।

४—यदि पाँवों में अथवा जङ्घा में कोई दोष हो तो वह भी दूर हो जाता है।

इस आसन को स्त्रियां कदापि न करें।

✳ त्रिकोनासन.

विधिः—

१—पहले सीधे तनकर खड़े होइये। प्राणायाम के लिये श्वास जोर से लें और फिर दीर्घ श्वासें ले।

२—पैरों को ढीला कर के उन्हे दायें-बांये निकाल लें।

३—दोनों घुटनों को आगे की तरफ फैला लें और चूतरों को पृथ्वी पर टिकालें।

त्रिकोनासन

नया चित्र—१३.

४—दोनों घुटनों को एक ही सीध में रखें।

५—शरीर का सारा वजन आमाशय, सीने तथा कमर पर ही रहना चाहिये।

६—दोनों हाथों को सीने के मध्य में स्थिर करके प्राणायाम करना चाहिये।

लाभः—

१—इस आसन से कमर, पैर, घुटने और चूतरों की सारी नसे खुल जाती हैं।

२—प्राणायाम साधने या श्वास का कार्य बन्द होने से शरीर के ऊपरी भाग को आराम मिलता है और कमर तथा चूतरों पर अधिक वजन पड़ता है।

३—इस आसन के करने से घुटने के दर्द को लाभ होता है।

४—गठिया आदि रोग नहीं होते।

५—लकवे में भी लाभ होता है।

६—भगन्दर, कांच, आदि रोग नहीं होते।

पाद—हस्तासन.

विधिः—

१—सर्व प्रथम सीधे खड़े हो जाओ। दोनों पांवों के पञ्जों को एक दूसरे से भली प्रकार मिला लो।

२—तत्पश्चात् धीरे २ सिर को नीचे की ओर झुकाना प्रारम्भ करो और इतने झुको कि पीठ झुककर धनुषाकार हो जाय।

३—हाथों को नीचे की ओर बढ़ाओ और पांव के दोनों अगूंठे पकड़ लो। कन्धों से लेकर कलाइयों तक हाथ बिलकुल सीधे तथा कड़े रहने चाहिये।

पादहस्तासन

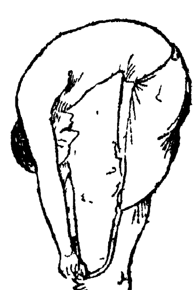

नया चित्र नं० १४.

४—और इसी प्रकार जङ्घा से लेकर नीचे तक टाँगे भी सीधी एवं कड़ी रहनी चाहिये। सिर नीचे की ओर लटका हुआ रहना चाहिये तथा श्वास रोक लेनी चाहिये।

५—धीरे २ अगूंठों को छोड़कर सिर को घुटनों के पास ले आना चाहिये। कमर के पास से सिर को हटा लेना चाहिये।

लाभः--

१—कमर की रीढ़ की हड्डी शरीर में सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। इसके सहारे ही सारा शरीर सीधा रहता है। इस हड्डी पर ही सारे बोझ पड़ते है। सोते, उठते, बैठते, लेटते यही सारे शरीर का भार वहन करती है। रीढ़ की थकान दूर होती है और वह मजबूत बनती है।

२--आमाशय की थैली वैसे तो बहुत नाजुक होती है पर वह थोड़े से भार ही से घट बढ़ जाती है। जो लोग आमाशय का पूर्ण ध्यान नहीं रखते। या जो लोग आवश्यकता से अधिक बैठने का काम करते हैं या वह अधिक खाना खाने की आदत डाल लेते हैं तो पेट में भार पड़ जाने से भी वह बढ़ती है। इस आसन से आमाशय की स्थिति ठीक हो जाती है।

३—साँस को धीरे २ लेने से सारे शरीर का उतार चढ़ाव ठीक होता है। रक्त प्रवाह सुधरता है और दूषित रक्त शुद्ध हो जाता है।

४--इस आसन से प्लीहा कभी नहीं होता।

५--भूख बढ़ती है और कब्ज के सारे रोगों का नाश होता है।

६--तिल्ली आदि रोगों का नाश होता है।

७—क्योंकि श्वास का भार पेट पर पडता है, पाद आने से पेट की तमाम गैसें बाहर हो जातीं हैं।

७--इस आसन को कम से कम दस मिनट तक अवश्य ही करना चाहिये क्योंकि पेट पर अधिक भार पड़े बिना इस आसन से इच्छित फल प्राप्त नहीं हो सकता।

पेट के समस्त विकारों को बड़ी सरल रीति से नष्ट करने में यह आसन श्रेष्ठ है ।

स्त्री और पुरुष इसे सामान्य रीति से इसे कर सकते हैं ।

ताड़ासन.

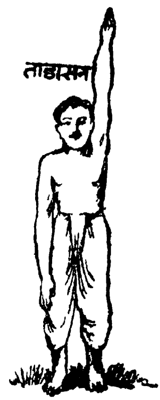

नया चित्र १५.

ताड़ासन सबसे सरल आसन है मगर इसका प्रभाव तमाम स्नायुओं पर बहुत अच्छी तरह पड़ता है । इस आसन को हर अवस्था में हर प्राणी बालक, युवक, युवती, वृद्ध आसानी से कर सकता है । इसकी विधि बहुत सरल है मगर इसका असर बहुत अच्छा होता है । धीरे २ इस आसन को प्रारम्भ करना चाहिये और फिर समयानुसार बढ़ाते रहना चाहिये । खास बात खड़े होने की यह है कि पृथ्वी पर बिलकुल समकोण बनाते हुए खड़े होना चाहिए । अगर सामान्य अवस्था में शरीर को कड़ाकर एक ही सीध में खड़े होने की क्षमता न हो तो पृथ्वी के सहारे भी खड़ा हुआ जा सकता है । अंग्रेजी में इस अवस्था को कहते हैं— Parpendicular to Ground.

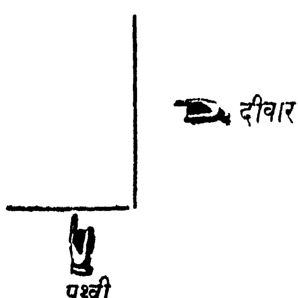

विधिः—

१—शरीर को बिलकुल कड़ा कर लो।

२—पैरो की एड़ी को पृथ्वी और दीवाल के कोण में सटाकर रखो। चूतर, पीठ, और सिर को दीवार से लगा लो।

३—आपकी स्थिति बिलकुल सतर्क हो जानी चाहिये जिसे अँग्रेजी में Attention कहते हैं।

४—अगर हो सके तो चलते समय भी ऐसी आदत होनी चाहिये क्यों कि ऐसा करने से शरीर का पृष्ठ भाग सीधा रहे क्योंकि पृष्ठ भाग के सीधा रहने से शरीर की अवस्था ठीक रहती है और शरीर को शक्ति प्राप्त होती है।

५—जब शरीर समानावस्था में आ जाय तो एक २ हाथ को पहले सीधा, नीचे, ऊपर करने की क्रिया करनी चाहिये और फिर दूसरे हाथ को इसी तरह करना चाहिये। यह ध्यान रखना आवश्यक है कि पूर्ण शरीर कड़ा रहे और उसमें कहीं भी ढील न पड़े।

६—श्वास गहरी लें। जब कुछ थकान महसूस हो तो प्राणायाम करें। मगर शरीर की कड़ाई में फर्क न हो।

७—जब आप हाथ को सीधा करें तो दोनों फेंफड़ों पर उनका खिंचाव हो, जब ऊपर करें तो आपके नीचे की तरफ गुदा आदि की नसों पर खिंचाव होना चाहिये। जब नीचे करें तो सिर कन्धों आदि पर खिंचाव होना चाहिये। यह ध्यान रखना आवश्यक है।

८—हाथों को ऊपर नीचे करके खिंचाव की क्रिया करने से शरीर की हरकतों द्वारा खिंचाव तो होगा ही। साथ ही ध्यान रखें कि आप अपने मन से भी सोचें क्योंकि मानसिक शक्ति से भी शरीर की नस नाड़ियों को खींचने का उपक्रम करने से नसों पर खिचाव पड़ता है।

लाभ—

१—इस आसन का प्रभाव शरीर के प्रत्येक स्नायु पर समान पड़ता है और शरीर के प्रत्येक अंग में शक्ति का सञ्चार होता है।

२—दुर्बल से दुर्बल आदमी भी सहज ही इस आसन का प्रयोग कर सकता है। लम्बी बीमारी के बाद भी यह आसन करने से शरीर में शक्ति का सञ्चार होता है। स्त्रियों को भी इस आसन से लाभ होता है।

२—नस नाड़ियों पर खिचाब होने से रक्त का प्रवाह बढ़ता है और रक्त प्रवाह बढ़ने से शरीर का अशुद्ध रक्त भी धीरे २ शुद्ध होने लगता है। इससे शरीर को शक्ति प्राप्त होती है।

३—पेट पर इस आसन का अच्छा प्रभाव पड़ता है। जिससे अजीर्ण का नाश होता है। और आमाशय सम्बन्धी सारे रोगों तथा विकारों का पूर्ण नाश होता है।

४—दीर्घश्वास और प्राणायामादि करने से मानसिक शक्ति तथा शारीरिक शक्ति का विकास होता है। आसन करते समय चिन्तन करते रहने से मानसिक शक्ति का विकास होता है।

५—भुजाओं, हाथों, उँगलियों को शक्ति मिलती है।

६—तमाम अंगों को अपूर्व शक्ति प्राप्ति होती है। शरीर में नवीन शक्ति का सञ्चार होता है। स्फूर्ति प्राप्त होती है, आलस्य दूर होता है, चेतना जाग्रत होती है और बुद्धि का विकास होता है।

७—मानसिक और शारीरिक परिश्रम से जब शरीर थक जाये तब इस आसन के करने से थकान दूर होती है।

रोगों को लाभः—

१—हृदय को शक्ति प्राप्त होती है।

२—मेरु दण्ड में शक्ति आती है और मानसिक शक्ति का विकास होता है।

३—कण्ठ पेट आदि को भी लाभ होता है।

४—अजीर्ण, कब्जादि को लाभ होता है।

५—गुदादि रोगों पर भी लाभ होता है।

६—जलन्धर आदि रोगो को भी विशेष लाभ होता है।

इस आसन को हर अवस्था वाले पुरुष तथा स्त्रियां समान रूप से कर सकती हैं।

✳ कोनासन.

विधिः—

१—पृथ्वी पर दोनों पाँवों के मध्य एक हाथ का अन्तर देते हुये खड़े हो जाओ।

२—इसके पश्चात् अपनी सीधी तरफ झुकना प्रारम्भ करो। ध्यान रहे पाँव अपने स्थान से हटने न पावे।

नया चित्र १६.

३—इसके बाद झुकते २ सीधे हाथ से पाँव का अगूंठा पकड़ लो, और बांये हाथ को सिर के ऊपर ले जाते हुये बिलकुल सीधा करलो।

४—सिर को इस प्रकार कर लो जैसा कि करवट लेकर सोने की अवस्था में रहता है। दृष्टि सामने की ओर रखो, और श्वास क्रिया साधारण रूप से होती रहनी चाहिये।

५—एक हाथ तो नीचे पैर के अगूंठे के पास जा ही पहुँचता है मगर उसके साथ ही साथ दूसरा हाथ भी सिर के ऊपर होकर अच्छी तरह फैल जाना चाहिये।

६—हमेशा इस बात का ध्यान रखना जरूरी है कि लंगोट काफी कसा रहे। ऐसा हो सकता है कि अगर लंगोट तनिक भी ढीला है तो कमर का कोई भाग उतर जाये या काँच वगैरह बाहर निकल आए।

लाभः—

१—इस आसन क्रिया से कमर में बल आता है। हाथ पैर में दम आती है और सॉस को धीरे २ लेने और निकालने से सीना फैलता है, रक्त साफ होता है और जंघाओं में बल का संचार होता है।

२—इस आसन के करने से गर्दन तोड़ बुखार, भगन्दर आदि रोगों से शरीर की रक्षा होती है। अगर कभी मनुष्य इन रोगों का शिकार हो जाये तो रक्षा हो जाती है।

गर्भवती स्त्रियां कदापि न करें।

हस्तपादांगुष्ठासन.

विधिः—

१—यह आसन बहुत ही सीधा है। ताड़ासन की भाँति ही खड़ा होना पड़ता है, केवल अन्तर इतना होता है कि पहले शरीर को कड़ा करके हाथों की हथेलियों को कमर पर जमा लेना चाहिये,

२—फिर एक पैर को उठा कर बिलकुल साधा कर लो। उसके बाद दूसरे हाथ से उसके अंगूठे को पकड़ो। घुटने बिल्कुल ही सीधे रहने चाहिये।

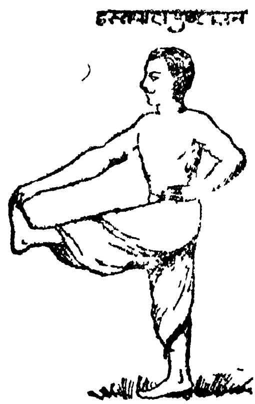

नया चित्र १७.

३—चित्र देखने से सारी क्रिया समझ में स्वयं ही आ जायेगी। शरीर को कड़ा रखना आवश्यक है।

लाभः—

१—जो लाभ ताड़ासन से होते हैं वही इस आसन के करने से प्राप्त होते हैं।

यह आसन स्त्री पुरुष सामान्य रूप से कर सकते हैं।

गरुणासन

१—ताड़ासन की भांति ही शरीर को कड़ा करके खड़े हो जाइये। अगर आपने कभी गरुण की शक्ल किसी चित्र में देखी है तो उसी तरह शरीर को तोड़ने की चेष्टा करें। एक पैर पर सारा जोर डाल दें और दूसरे पैर को उसमें डाल कर लपेटा दे लें। दोनों हाथों को भी लपेटा देकर जोड़ लें। यदि शरीर में कम ताकत हो तो साँस धीरे २ लेते रहैं वरना प्राणायाम कर खड़े रहे तो सर्वोत्तम है।

चित्र १८.

गर्भवती स्त्रियां इसे कदापि न करें।

✳ उत्कटासन

ताड़ासन की भांति शरीर को कड़ा करके खड़े हो जाइये। फिर घुटनों पर जोर डालकर शरीर को पीछे की तरफ झुकाले। पिछले पुट्ठों को ऐसी अवस्था में ले आयें मानो कुर्सी पर बैठ रहे हों। जब घुटने और चूतर सम रेखा में आजायें तो फिर कमर पर दोनों हाथों की हथेलियों को जमाकर रख लेना चाहिये। ध्यान रहे कि घुटने और पांव के अंगूठे समरेखा में रहें। दोनों आगे पीछे हरगिज़ न जायें और

चित्र १९.

शरीर की कड़ाई कदापि कम न हो। जब पांवों पर पूरी तरह टिकने का अभ्यास हो जाये तो फिर धीरे २ एड़ी को पृथ्वी से उठायें और सारे शरीर का भार अंगूठों पर ही रखें। ऐसा करने से बहुत लाभ होता है।

अब तक तो दोनों घुटने मिले ही थे मगर जब शरीर में आसन पूर्ण रूपेण करने की शक्ति आजाये तब धीरे २ घुटनों को अलग करने का प्रयत्न करना चाहिये। जब अलग २ घुटनों पर शरीर के भार रखने की क्षमता प्राप्त हो जाती है तब धीरे २ घुटनों को फिराने की आदत डालनी चाहिये। जब घुटने आसानी से अंगूठों पर शरीर का भार लिये घूमने की आदत आजाये तो समझना चाहिये कि आसन पूर्णतया सिद्ध हो गया है।

गरुड़ासन और उत्कटासन के लाभ—

१—इन आसनों से पांवों में शक्ति आती है।

२—पिंडलियां शक्तिशाली होती हैं।

३—कमर में शक्ति आती है।

४—पांवों की कमजोरी के लिये बहुत लाभदायक है।

५—जिन लोगों के पैरों पर सूजन आने का रोग होता है उस पर यह रामबाण है।

६—बेरी २ रोग पर बहुत लाभ होता है।

७—गुदा रोगों के लिए भी यह बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है।

इसे स्त्री पुरुष सामान्य रूप से कर सकते हैं।

पादांगुष्ठासन.

विधिः—

१—खड़े होकर फिर धीरे २ आलथी-पालथी मारकर बैठ जाइये। फिर एक पैर को नीचे निकाल लेना चाहिए। सारे शरीर को समतल रखें और फिर पृथ्वी पर टिके हुए पैर के पंजे पर ही सारे शरीर का भार साध लेना चाहिए।

पादांगुष्ठासन

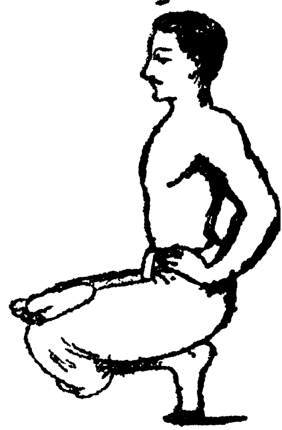

चित्र नम्बर २०.

२—दोनों हाथों की हथेलियों से कमर को पकड़ लेना चाहिए। और शरीर को अच्छी तरह कड़ा रखना चाहिए।

३—दूसरे पैर का पञ्जा पालथी की अवस्था में जाँघ पर ही रहना चाहिए। साँस को धीरे २ लें तो श्रेष्ठ है।

लाभः—

१—पैर की नसों पर विशेष जोर पड़ता है। सारा शरीर कड़ाई के साथ ही साथ साँस लेने और निकालने से रक्त चारों तरफ उचित मात्रा में जाता रहता है।

२—पैर के पंजे और विशेषकर अंगूठे पर जोर पड़ने के कारण कभी गठिया रोग नहीं होता और यदि गठिया शुरू होते ही रोगी इसको करने लगे तो सारा शरीर निरोग हो जाता है।

२—इससे वीर्य रोगों का नाश होता है।

यह आसन स्त्रियां नहीं कर सकतीं और सामान्य गृहस्थों को भी इसको अधिक न करना चाहिए।

मयूरासन

अब तक जितने खड़े होकर करने वाले आसनों का वर्णन किया गया है उनके देखने से पता लगता है कि अधिकतर उन आसनों की क्रिया से शरीर के मुख्य अङ्ग पैर पर उनका प्रभाव अत्याधिक पड़ता है। मगर मयूरासन उन सबके विपरीत है क्योंकि इस आसन के अन्तर्गत यही विशेषता है कि खड़ी अवस्था में किए

जाने पर भी इस आसन का भार हाथों पर ही अधिक रहता है। पहले आसनों में भार पैरों पर था मगर इसका भार हाथों पर है।

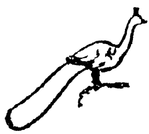

मयूरासन

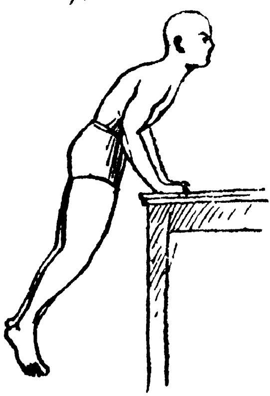

चित्र २१.

विधिः—

१—पहले शरीर को कड़ाकर लें और दीर्घश्वासें लेना प्रारम्भ करें हो सके तो प्राणायाम करें। यह सबसे अधिक उपयुक्त है।

२—जिस प्रकार मोर किसी ऊंची जगह पर अपनी पूंछ को नीचे लटका कर बैठता है उसी तरह हाथों पर सारे शरीर का भार रखें और दोनों पैरों को नीचे रखें।

३—यह आसन बिना किसी सहारे के नहीं किया जा सकता क्योंकि हाथों को टिकाने के लिए सहारे की आवश्यकता होती है। चाहे वह सहारा किसी ऊंची मेज, तिपायी, या मुंडेर का लिया जाये।

मयूरासन और हंसासन

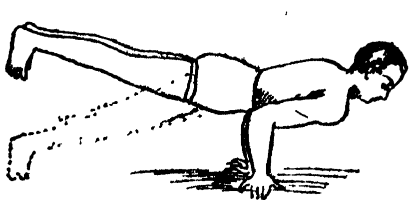

४—हाथ की हथेलियों को सहारे पर टिकालें। फिर सारा भार हथेली पर उठाकर पैरों को धीरे २ उठालें और पुनः धीरे २ नीचे ले जायें।

५—शरीर पूरी तरह कड़ा ही रहे। किसी भाग में शिथिलता न आये वरना लाभ के स्थान पर हानि हो सकती है। धीरे २ ही इस क्रिया को घटाना बढ़ाना चाहिये।

६—सारे शरीर की नसों पर खिंचाव डाले रहना चाहिये।

७—ध्यान रहे कि कोहनियां नाभि स्थान पर लगी रहें।

लाभः—

१—यह आसन करने से इसका जोर विशेषतया हाथों पर पड़ता है। हाथों और कन्धों में बल आता है।

२—आमाशय रोगों को लाभ होता है तथा पाचन शक्ति बढ़ती है।

३—नस नाड़ियों पर निरन्तर समान खिंचाव पड़ने से सारे अङ्गों में चेतना आती है।

५—मस्तिष्क के काम करने वालों के लिये यह आसन अति लाभदायक है।

इस आसन को स्त्री व पुरुष समान रीति से कर सकते हैं

बैठकर करने वाले आसन

अब तक आपको हमने दो श्रेणियों के आसनों का जिक्र किया है और यह बताया है कि पहली श्रेणी के आसनों का मुख्य प्रभाव सिर कन्धों आदि पर पड़ता है क्योंकि वह उल्टे खड़े होकर किये जाते हैं। दूसरी श्रेणी के आसन जो खड़े होकर किये जाते हैं उनका प्रभाव पैरों पर विशेषतया पड़ता है। अब इस तीसरी श्रेणी में यह जान लेना आवश्यक है कि इन आसनों का प्रभाव पूर्ण धड़ पर विशेष पड़ता है।

क्योंकि यह आसन बैठकर किये जाते हैं इस कारण चूतरों का सहारा लेना पड़ता है। हाथ और कन्धों आदि को भी सहयोग देना पड़ता है अतः शरीर का कोई भाग आसनों के मूल लाभों से वंचित नहीं रह सकता।

शरीर के प्रत्येक अङ्ग को शक्ति प्राप्त होती है। स्नायुओं में शक्तिशाली विशुद्ध रक्त का सञ्चार होता है। बैठकर करने वाले आसनों में आमाशय को विशेष सक्रिय होना पड़ता है। क्योंकि बहुत से आसनों में एड़ी को अंडकोषों पर लगाने की व्यवस्था है अतः स्त्रियां ध्यानपूर्वक पढ़ने के बाद ही करें।

सिद्धासन.

विधिः—

१—आसन, मृगचर्म या गद्दी पर आलथी पालथी मार कर बैठें। मगर ध्यान रखें कि एड़ी अंडकोषों के पास लगी रहे।

२—दोनों हाथों को लिंग के ऊपर पैरों के तलुओं के ऊपर रखें और शरीर को कड़ा करलें। दीर्घ श्वासें लेते रहें।

३—दोनों पैरों के पंजे दोनों जांघों के सहारे दबे रहें।

४—सारे शरीर को इस अवस्था में करने के बाद सांस को धीरे २ बाहर खींचे और अपनी तमाम इन्द्रियों की शक्तियों को एकत्रित करके मस्तिष्क की ओर खींच लें। इस आसन में सबसे

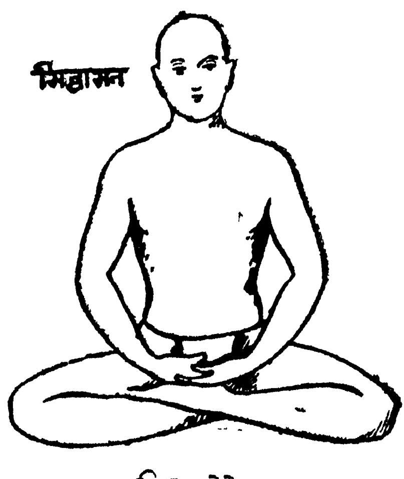

चित्र २२.

अधिक ध्यान तो केवल इस बात का देना है कि चित्त एकाग्र रहे। मस्तिष्क की शक्ति से ही इस आसन की पूर्ण सिद्धी प्राप्त की जा सकती है।

५–नेत्र दृष्टि को दोनों भौंहों के मध्य वाले चक्र पर केन्द्रित करें।

लाभः–

१–यह आसन वीर्य रक्षा के लिये सर्वोत्तम है। इसके अभ्यास से विषय–लालसा पूरी तरह से शान्त हो जाती है।

२–शरीर को स्वस्थ रखने तथा मन को एकाग्रचित्त रखने के लिये यह आसन सर्वोत्तम हैं।

३–धीरे २ साँस को लेने और निकालने का काम बहुत ही लाभदायक है। इसस प्राण–वायु की शक्ति तीव्र होती है।

४–इससे भूख बढ़ती है। उदर के सारे रोगों का नाश होता है, आमाशय की संचालन गति ठीक रहती हैं।

✳ बकासन

विधिः–

१–पहिले दोनों हाथों के पंजों को सामने पृथ्वी पर टेक कर बैठ जाइये।

बकासन

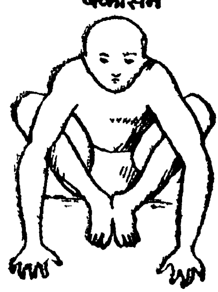

२–दोनों पैरों के पंजों को बराबर मिला कर घुटने उंचे करके सारे शरीर का वजन हाथों पर रख कर बैठ जाना चाहिये एड़ी अंडकोषें के पास स्थायी रहें।

चित्र २३.

३–सीने से शरीर को आगे की तरफ बढाये रखें और घुटनों को हिलायें।

४–साँस को धीरे २ अन्दर खींचें और फिर धीरे २ बाहर निकालें, सांसें लम्बी लें ताकि सीने का उभार बढ़ सके और फेफड़े भी शक्ति एकत्रित कर सकें।

५–धीरे २ अभ्यास को बढाना चाहिये।

सिद्धासन और बकासन की क्रियायें लगभग एक ही सी हैं। अतः उन दोनों के लाभ भी समान हैं। इन दोनों के लाभ और रोगों को संयुक्त लाभ निम्नांकित हैं—

१—दोनों भौंहों के मध्यस्थित आज्ञा चक्र पर केन्द्रीभूत होने के कारण स्नायुओं में जागृति होती है।

२—इस तरह एकाग्र होकर योग साधना अर्थात् आसन क्रीणा से मन को एकाग्रता प्राप्त होती है। आत्मशक्ति का विकास होता है।

३—ऐसी अवस्था में प्राणायाम करने से ज्ञान जागृति होती है और योग की ओर मन का झुकाव होता है।

४—नस नाड़ियों के खिंचाव से वीर्य रक्षा होती है। वीर्य स्थिर होने लगता है और स्थिर वीर्य हो जाने से मन की चञ्चलता का नाश होता है।

५—मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है।

६—आमाशय और फेफड़ों को नव शक्ति प्राप्त होती है।

७ पेट, फेफड़ों के, समस्त रोग नष्ट हो जायेंगे।

८—शीघ्र पतन, प्रमेह, स्वप्नदोष आदि वीर्य के विकारों का जड़ से नाश हो जायेगा।

स्त्रियां इन आसनों को नहीं कर सकतीं और वह पुरुष जो गृहस्थ धर्म का पालन करते रहना चाहते हैं वह भी इन आसनों को अधिक न करें।

विधवा स्त्रियाँ तथा वह पुरुष जो वानप्रस्थ ले चुके हैं इन आसनों को करें तो उन्हे इष्ट प्राप्ति में लाभ होगा।

जानु शिरासन

विधिः—

१—पहिले पृथ्वी पर आसन जमाकर बैठना चाहिये।

२—बांये पैर को सीधे पैर की जाँघ से सटा कर रखो।

३—सीधे पैर को पृथ्वी पर सीधा करदो और शरीर को कड़ा रखो।

४—फिर दोनों हाथों को सीधा करके धीरे २ आगे की तरफ झुकाते हुए आगे बढ़ो और चित्र में दिये गये स्थल की तरह पंजों पर लगादो।

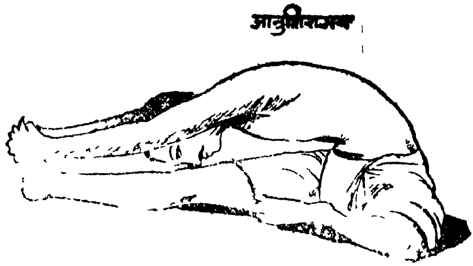

चित्र २४.

५—याद रहे शरीर का कोई भाग भी सुस्त न रहे और अपने स्थान से न डिगे। अगर कोई भाग जरा भी डिगता है तो हानि की सम्भावना है।

६—इसी प्रकार बांये पैर को फैला कर और सीधे पैर को सिंकोड़कर इस क्रिया को करें। दोनों पैरों का उपयोग करें।

लाभः—

१—इस आसन से शरीर की सारी नसों पर असर पड़ता है।

२—रक्त दोष दूर हो जाते हैं और अधिक पवित्रता के साथ रक्त नसों में दौड़ने लगता है।

३—प्लीहा, तिल्ली, जैसे महारोग के लिये यह अति लाभदायक सिद्ध हुआ है।

४—इससे भूख खुलकर लगती है। आमाशय अपना काम ठीक तरह से करने लगता है। और पेट के सारे विकारों का नाश होता है।

५—जांघें सुडौल बनती है और उनके सारे रोग तथा सिर के रोग भी अच्छी तरह से ठीक हो जाते हैं।

६—आँतड़ियों की शुद्धि हो जाने के कारण मूत्रेन्द्रि के तमाम रोग स्वतः ही गायब हो जाते हैं। और आंतों के तमाम रोगों का नाश होता है।

यह स्त्रियों को नहीं करना चाहिये।

पद्मासन.

विधिः—

(१) आलती–पालती मार कर बैठें। दोनों पैर के तलुये चित्त रहने चाहिये और घुटने जमीन से मिले रहें।

(२) दोनों हाथ बिलकुल सीधे करके घुटनों पर रखें। दोनों घुटने समरेखा में रहने चाहिये। हथेलियों और उँगलियों से घुटनों की नसों को दबालें।

पद्मासन

चित्र नम्बर २५'

(३) गले की हड्डी पर ठोड़ी को लगायें।

(४) पैरों की नीचे वाली एड़ी को अण्डकोष के नीचे लगालें।

(५) दीर्घ श्वांस और प्राणायाम क्रिया करें।

(६) जो लोग अपनी मोटी

आँघों के कारण इस क्रिया को कर सकने में समर्थ न हों वह पहले एक पांव को दूसरे पाँव की जङ्घा पर रखें और दूसरे को नीचे ही रहने दें। इस आसन को "अर्ध पद्मासन" कहते हैं। जब "अर्ध पद्मासन" क्रिया में सफल हो जायें तो पद्मासन का अभ्यास करें।

७–कुछ लोग हाथों को ऊपर करके दोनों उगलियों को फंसाकर खीचने लगते हैं इस आसन को "पर्वतासन" कहते हैं।

(८) पद्मासन साध कर अपनी पसलियों को धड़ के साथ इधर–उधर घुमायें और नस नाड़ियों पर जोर डाले। उनमें खिंचाव पैदा करें।

(९) जितना भी सीना पीठ की ओर घूम सकने में समर्थ हो उतना ही अधिक घुमाना लाभदायक है। धड़ को घुमाने के कारण ही इसे "भ्रमरासन" भी कहते हैं।

(१०) शरीर को अच्छी तरह कड़ा और सीधा रखिये। साँस नाक से लेते रहिये। दृष्टि को सीधी जमाकर रखिये।

(११) ठोड़ी बिलकुल सीधी रखिये अथवा ग्रीवा के मूल में मिलाकर रखिये।

लाभः–

(१) पद्मासन से शरीर सीधा रहता है। खाद्य सामग्री को पचाने की शक्ति बढ़ती है। अजीर्ण इत्यादि पेट के समस्त रोगों का नाश होता है।

(२) पांवों के तन्तुओं के खिचने से रक्त सञ्चालन की नाड़ियां शुद्ध होती हैं। और भली प्रकार रक्त सञ्चालन से पैरों के प्रत्येक तरह के दोषों का नाश हो जाता है।

(३) बुद्धि प्रखर होती है, स्मरण शक्ति बढ़ती है और

जो कुछ भी ध्यान किया जाता है इस आसन से बैठने से उसमें मन लगता है।

(४) पीठ और पेट के तन्तु दृढ़ हो जाते है। वीर्य की रक्षा होती है।

(४) प्राणायाम के करने से शरीर के सारे अङ्गों की वृद्धि होती है। सीना बढ़ता है, हाथ पैर शक्तिशाली होते हैं और मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है।

स्त्रियों और पुरुषों के लिये यह सामान्य है।

बद्धपद्मासन

विधि—

१—पहिले पालती मारकर बैठ जाइये। इसके पश्चात् दाहिने हाथ को पीठ पीछे ले जाकर दाहिने पैर का अंगूठा पकड़िये। इसी प्रकार बांये हाथ को भी ले जाकर बांये पैर का अंगूठा पकड़िये।

२—ठोड़ी को बिलकुल कण्ठ के मूल में गढ़ा दीजिये।

३ सीना बिलकुल सीधा रखिये। सिर को भी दांये-बांये न मोड़कर सामने की ओर रखिये।

४—दृष्टि अपनी नासिका के अग्र भाग पर रखिए या आज्ञा चक्र पर केन्द्रित करें।

चित्र नम्बर २६,

लाभ-

१-आरोग्यता के लिए बद्ध पद्मासन विशेष लाभदायक है। अजीर्ण, आंतों के रोग, अरुचि, एवं पेट दर्द इत्यादि समस्त विकार

( )

दूर होते हैं। यदि विधिपूर्वक यह आसन लगाया जाय तो क्षय जैसा भयङ्कर रोग भी प्रारम्भ मे ठीक हो जाता है।

२—इससे पीठ का टेढ़ापन दूर हो जाता है। और सुडौलता आती है। पीठ के स्नायु खिंच जाते हैं। रक्त प्रवाह भली प्रकार होने लगता है जिससे पीठ के रोग नष्ट हो जाते हैं।

३—जिगर एवं तिल्ली इत्यादि बढ़ जाने पर भी बद्ध पद्मासन लाभदायक सिद्ध होता है।

४—स्वप्नदोष दूर हो जाता है। वीर्य विकार दूर होते है। शारीरिक शक्ति बढ़ती है।

५—दोनों अगूंठों को खींच कर रखने से हाथों में शक्ति का संचार होता है, माँसल बनते हैं और साँस धीरे धीरे लेने और निकालने से शरीर में हल्कापन आता है।

इसे स्त्री पुरुष दोनों कर सकते हैं।

चक्रासन.

विधि:—

चक्रासन

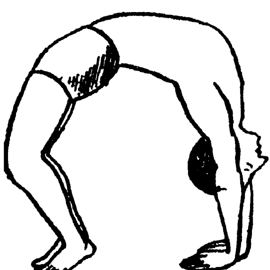

चित्र २७.

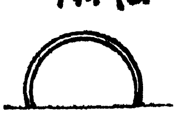

१—प्रथम आसन पर सीधे लेट जाइये। इसके पश्चात् दोनों हाथों की हथेली तथा दोनों पाँवों के पंजों को पृथ्वी पर जमा दो।

१—तत्पश्चात् धीरे धीरे पीठ को ऊपर की ओर उठाओ और यहाँ तक उठाओ कि हाथ और पाँव दोनों के बल पर सम्पूर्ण शरीर स्थिर रहे।

३—बाद को धीरे २ हाथ और पाँवों को समीप लाने की चेष्ठा करो जिससे कि शरीर बिल्कुल गोलाकार हो जाय।

४—नेत्रों को ठीक सीध में खुले रक्खो और सामने की ओर दृष्टि डालते रहो।

लाभः—

१—इस आसन से पेट और कमर के प्रत्येक भाग को लाभ पहुँचता है। सीने के ऊपर की ओर हो जाने से कमर टेढ़ी नहीं होती।

२—कमर दर्द, कोष्ठबद्ध, जीर्णज्वर तथा कृमिदोष आदि रोगों का नाश होता है।

३—आमाशय की सारी नसें खिचकर सीधी हो जाती हैं। नसों के सीधे हो जाने के कारण पेट की पाचन शक्ति शीघ्र ही ठीक होती है। अजीर्ण आदि रोगों के लिये यह आसन सर्वोत्तम है।

४—गर्दन, कंधे, जाँघ आदि अंगों को सुडौल बनाने के लिये इससे अधिक सरल आसन नहीं हो सकता। खेलने वालों के लिये यह आसन सर्वोत्तम है।

स्त्री पुरुषों के लिये सामान्य है।

गर्भासन.

विधिः—

१—प्रथम पद्मासन की तरह बैठ जाओ। तत्पश्चात् दोनों हाथों को घुटनों के नीचे से निकालिये। और इतने निकालिये कि कुहनी तक हाथ बाहर निकल आवें।

२—शरीर का सम्पूर्ण भार पैरों पर से हटा लीजिये और हाथों से दोनों कानों को पकड़िये।

३—दोनों पैरों की पिंडिलियां हाथों के अन्दर रहनी चाहिये। कमर और पीठ सीधी रहें।

गर्भासन

चित्र २८.

४—यदि हाथों को अधिक ऊपर बढ़ा सकें तो कानों को छोड़ कर गले में हाथ डाल लें। दोनों हाथों की अगुलियाँ एक दूसरे में फंसा दीजिये। इस प्रकार हाथों की माला सी पहन लीजिये।

लाभः—

१—इस आसन से हाथों और पावों के स्नायु तन्तु खिंच कर दृढ़ हो जाते हैं। हाथों एवं पांवों का बल बढ़ता है।

२—पेट और आंतों के समस्त रोग नष्ट हो जाते हैं। भूख बढ़ती है और पाचन शक्ति ठीक होती है।

३—कृमि दोष मेदे के रोग और कोष्ठ-बद्ध आदि रोगों में यह विशेष रूप से लाभदायक है।

४—प्राकृतिक रूप मे शरीर को स्थिर कर लेने से शरीर की सारी कमजोरी दूर हो जाती है। हर अङ्ग सुडौल हो जाता है और रक्त सञ्चालन ठीक हो जाता है।

५—वात रोग के रोगियों को यह आसन सर्वोत्ताम है। इस आसन से हर अङ्ग का रक्त प्रवाह ठीक हो जाता है और हर अङ्ग में स्थिरता आ जातो है।

क्योंकि गर्भ में हर प्राणी को रहना पड़ता है। अतः स्त्री पुरुष इसे समान रीति से कर सकते हैं।

कुक्कुटासन

विधि—

१—पहिले पालथी मार कर बैठ जाइए। बदन को कड़ा रखें और फिर दोनों हाथों को जांघ और पिंडलियों के बीच से निकालकर पृथ्वी पर टिका दें और दोनों पञ्जों को पृथ्वी पर टिका दें

२—धीरे २ हाथों को कड़ा करें।
हथेलियों और हाथ के पञ्जों के सहारे शरीर को साध लें।

३—वैसे तो प्राणायाम करते रहना अधिक लाभदायक है।

मगर कभी २ धीरे २ नाक से साँस ले लेना चाहिये। नाक से ही साँस लेनी चाहिये और नाक ही से निकालनी चाहिये।

४—शरीर को कड़ा रखें और सारा ध्यान मस्तिष्क की ओर लगाये रखना चाहिए।

कुक्कुटासन

लाभः—

१—इस आसन से भुजाओं की शक्ति बढ़ती है। हाथ सुडौलहोते हैं और माँसल बनते हैं।

२—क्योंकि हथेली और पञ्जों पर ही सारे शरीर का भार रहता है अतः यह दोनों अधिक शक्तिवान होते हैं।

३—जाँघ और पिंडलियाँ बनती हैं।

४—बवासीर, भगन्दर, गुदा रोग आदि कोई भी रोग नहीं हो सकता। यह आसन इन तमाम रोगों के लिए रामबाण है।

५—आमाशय के तमाम रोग इस आसन से ठीक होते हैं। हृदय शक्तिशाली होता है और रीढ़ की हड्डी को भी अधिक लाभ होता है।

६—सीना आगे की तरफ निकलने लगता है। फेफड़ों में शक्ति आती है।

स्त्री पुरुषों के लिए समान है।

गोमुखासन

विधिः—

१—पहिले पालथी मार कर बैठ जायें। फिर एक घुटने को नीचे की तरफ निकाल लें और दूसरा घुटना आगे की तरफ बढ़ा कर मोड़ लें।

२—शरीर को कड़ा रखे और गर्दन को बिलकुल सीधा रखें। ध्यान रहे कि रीढ़ की हड्डी की सीध ही में गर्दन रहे। अगर इसमें तनिक भी लापरवाही से काम किया गया तो हानि हो जाने की सम्भावना है।

गोमुखासन

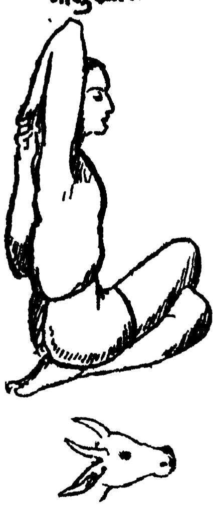

चित्र ३०.

३—सीधे हाथ को कन्धे की सीध में ऊपर की तरफ उठाकर सिर के पास से कुहनी को मोड़ लें और फिर बाँये हाथ को बगल के नीचे से निकाल कर कमर के पास से मोड़ लें। और पीठ के पास दोनों हाथ एक दूसरे को पकड़ लें।

४—साँस को लम्बी खींचे और धीरे २ बाहर निकालें। सीने को सीधा रखें ताकि वह फूल सके।

लाभः—

१—सीना, हाथ, कमर, गर्दन, पसली इत्यादि आवश्यकीय अंगों पर इसका गहरा असर पड़ता है। यह अंग सुडौल बनते हैं और उनमें शक्ति भी आती है।

२—रक्त का प्रवाह तेज होता है। रीढ़ दृढ़ होती है। धीरे २ समय बढ़ाने से हृदय शक्ति शाली होता है।

३–सीना फैलता है। दिल मजबूत होता है। नासिका के सारे रोगों को अत्याधिक लाभ होता है। गर्दन में दर्द नहीं होता और कहा जाता है कि गर्दन तोड़ बुखार कभी नहीं होने पाता।

४–यह आसन अन्य आसनों से कड़ा है।

इस आसन को स्त्री पुरुष दोनों कर सकते हैं।

द्विहस्त भुजासन

विधिः—

१—प्रथम पालथी मार कर आसन पर बैठ जाइये। इसके पश्चात् दोनो बाहों पर दोनों पावों को बारी बारी से उठा लीजिये।

द्वि हस्तभुजासन

चित्र ३१.

२—धीरे धीरे दोनों पावों को ऊपर की ओर खिसका कर कंधों तक ले जाइये। इसके पश्चात् दोनों हाथों की अंगुलियों को एक दूसरे में फंसा कर ग्रीवा में डाल दीजिये।

३–यदि आरम्भ में दोनों पाँव न डाले जा सके तो प्रथम एक पाँव डालने का अभ्यास करना चाहिये तत्पश्चात् दोनों पाँवों का।

४–सिर बिल्कुल सीधा रहे। नेत्रों से पांव की ओर देखते रहो।

लाभः—

१–इस आसन से हाथ, पाँव एवं गले की नस नाड़ियां खिंच जाती है। जिससे रक्त संचालन में तीव्रता आ जाती है।

२–रक्त प्रवाह तीव्र होने से रक्त का संचालन बढ़ता है और शुद्ध रक्त का संचार होता है।

३–गुदा सम्बन्धी रोगों का नाश होता है।

४–शरीर का आलस्य दूर होता है और आमाशय सम्बन्धी विकारों का शीघ्र ही नाश हो जाता है।

५–कंधों और जांघों के रोगों को भी लाभ होता है।

स्त्रियों को यह आसन वर्जित है।

एक हस्त भुजासन

विधिः–

१–पहले पालथी मार कर बैठ जाइये।

२–फिर धीरे २ एक पैर को उठाना शुरू करे और उसे गर्दन के ऊपर ले आकर रख लें।

३–दोनों हाथ गले के पीछे परस्पर अंगुलियां मिलाकर रखें और बाहुओं के सहारे से पांव को ऊपर ही पकड़ रखें।

४–दीर्घ श्वास या प्राणायाम प्रारंभ करें

एक हस्त भुजासन

चित्र ३२.

लाभः—

१–इस तरह गर्दन पर थोड़ा सा जोर पड़ता है और उसमें बल आता है।

२–हाथ पर जोर आता है। साँस की नली भी धीरे २ शक्तिशाली होती है और सीना आमाशय आदि सब ठीक हो जाते हैं।

३–कहा जाता है नासिका सम्बन्धी तथा गुल्म रोग यह आसन करने से नहीं होते।

स्त्रियाँ इसे कदापि न करें।

एक पाद शिरासन.

विधिः–

१—पहले एक पैर को गर्दन पर रख ले और फिर दोनों

हाथों की हथेलियों को गर्दन पर जोर दें। अधिक से अधिक दबाने का प्रयत्न करें।

२—ध्यान रहे कि दूसरा पैर दूसरी जांघ की जड़ से बिलकुल ही सटा हुआ है। अर्थात् अण्डकोष के नीचे ही है।

३—सांस को धीरे २ नाक के रास्ते खींचे फिर धीरे २ उसे बाहर निकालें।

एकपाद शिरासन

चित्र ३३

लाभः—

१—पैरों की जड़ों पर असर होता है। साँस का बहाव पैरों की तरफ होने के कारण वहाँ का दूषित रक्त साफ हो जाता है।

२—पैरों और कमर से नीचे होने वाली कोई बीमारी नहीं होती है।

३—आमाशय के विकारों का नाश हो जाता है।

स्त्रियों को वर्जित है।

द्विपाद शिरासन

विधिः—

१—पहले व्यूहाकार बैठें और फिर धीरे २ अपने पैरों को हल्का करलें और उन्हें उठाकर अपनी गर्दन पर रखलें।

२—चूतरों पर जरा जोर डालें फिर सीने और पीठ के बल से बैठे रहने की चेष्टा करें।

३—सांस को धीरे २ खींचे और निकालते रहें।

४—हाथों को या तो सीने के पास रखलें या उन्हें धीरे २ ठंडी से ऊपर नीचे उठाते गिराते रहें।

लाभः—

१—इस तरह दोनों पैरों पर समान असर होगा। रक्त का प्रवाह ठीक हो जायगा। और अगर उसमें किसी तरह का कोई भी विकार होगया होगा तो वह ठीक हो जायेगा।

२—भगन्दर, बवासीर आदि गुदारोग सम्बन्धी कोई विकार उनके पास तक नहीं आ सकेगा।

द्विपादशिरासन

चित्र ३४.

३—कभी उदर शूल, उदर विकार आदि कोई शिकायत्त भी पास नहीं आ सकेगी।

४—हमेशा ध्यान रहना चाहिये कि इस आसन को करते समय पेट खाली रहे। खाली पेट बिना यह आसन ठीक नहीं होगा और अगर किया भी गया तो लाभ की जगह हानिकारक हो सकता है। स्त्रियां कदापि न करें।

मत्स्येन्द्रासन.

मत्स्येंद्रासन

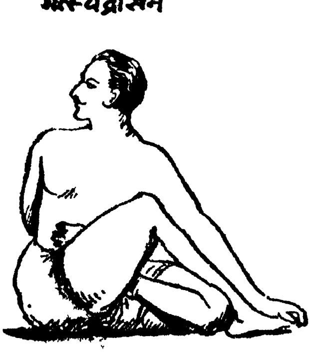

विधिः—

१—पहले खड़े होकर शरीर को कड़ा कर लेना चाहिये ताकि शरीर की रक्त गति सञ्चार ठीक ही रहे।

२—फिर शरीर को रीति के अनुसार बदलना चाहिये।

२ पालथी मार कर बैठ जाओ और एक पैर को उठाकर

बांयें पैर की जंघा के ऊपर इस तरह रखो कि एड़ी जंघा की जड़ में खप जावे।

३—दूसरी पैर मुड़े हुये पैर के घुटने के ऊपर होकर निकालें। और एक हाथसे उसके पंजे को दाबे रहो फिर दूसरे हाथ को पीठ के पीछे कमर के पास लेजाकर रखलो।

लाभः—

१—इस आसन में सबसे अच्छी बात तो यह है कि वह लोग जो आठ २ दस २ घंटे बैठे रहते हैं और कोई कसरत नहीं कर पाते वह इसी कसरत को बैठे २ कर सकते हैं।

२—इस तरह बैठे रहने से थकान भी नहीं होती और आसन भी पूरा हो जाता है।

३—आमाशय रोगों को सर्व श्रेष्ठ है।

४—इस आसन से पीठ, पेट, पांव, गर्दन बाहु कमर के निचले भाग, छातियों के स्नायुओं का खिंचाव होता है।

स्त्रियां इसे न करें।

कंठ पीड़नासन

विधिः—

१—पहले पालथी मारकर बैठ जाना चाहिये। शरीर के ऊपरी भाग को पहले कड़ा रखना चाहिये और फिर निचले भाग को धीरे २ कड़ा करना चाहिये।

२—सबसे ज्यादा जोर तो जाँघों पर डालना चाहिये। और फिर घुठनों पर से पैरों को हाथों की तरह जोड़ने

चित्र ३६.

वाला हालत में सीने के पास तक ले आना चाहिये । हाथों को भी कड़ाई के साथ ही जोड़ लेना चाहिये ।

३-पैर के दोनों पंजों को कड़ा और सीधा रखना जरूरी है ।

४—साँस बिलकुल न निकले । पूर्ण प्राणायाम करलेना आवश्यक है । अगर साँस ली जाय तो बहुत ही धीरे - और ऐसी हालत में कि वह न लेने के बराबर ही हो ।

लाभः—

१—यद्यपि यह आसन बड़ा सरल दिखाई देता है मगर इसको पूरा करना बहुत ही कठिन हो जाता है ।

२—पैरों का इस अवस्था में रखने के कारण पिडलियां और पैरों के पंजों तथा एड़ियों पर बहुत काफी जोर पड़ता है ।

३—खेलने वाला तथा भागने वालों के लिये यह आसन बहुत ही लाभदायक है क्योंकि इससे पैरों की थकान दूर हो जाती है । तथा कोई ऐसी बीमारी नहीं होती जिससे इन भागों को हानि हो सके या कोई विकार रह सके ।

४—इससे घुटने तथा अन्य जोड़ों के दर्द दूर होते हैं ।

स्त्रियां इसे कदापि न करें ।

लोलासन

विधिः—

१-प्रथम पालथी मार कर बैठ जाना चाहिये । तत्पश्चात् धीरे २ दोनों घुटनों को मोड़ लेना चाहिये ।

२-इसके बाद दोनों हथेलियों को पृथ्वी पर जमा लेका चाहिये । बाहें बिल्कुल सीधी और कड़ी रखनी चाहियें ।

लोलासन

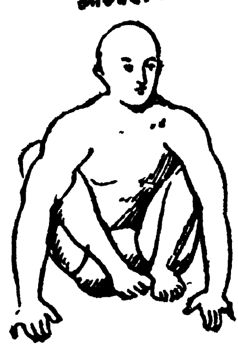

चित्र ३७.

३—पीठ कुछ आगे की ओर झुकी रहनी चाहिये। सारा शरीर भली प्रकार कड़ा रखना चाहिये। ध्यान रहे कि दोनों घुटने बाहों के नीचे रहने चाहिये।

४—सिर को बिल्कुल सीधा रखना चाहिये तनिक भी झुके नहीं, साँस क्रिया बहुत ही मन्द २ होनी चाहिये।

लाभः—

१—इस आसन मे हाथों पर बहुत कुछ शरीर का भार आ जाता है और बिल्कुल सीधे एवं कड़े रखे जाते हैं, इस कारण बांहों की माँस-पेशियों में तीव्रता से रक्त प्रवाह होने लगता है जिसका फल यह होता है कि भुजाऐं बलिष्ठ और सुडौल हो जाती हैं।

२—इसके अतिरिक्त घुटनों के दोष दूर हो जाते हैं। टाँगें दृढ़ बन जाती हैं।

३—पीठ के रोग भी नष्ट हो जाते हैं। यह आसन इसीलिये बहुत लाभदायक सिद्ध हुआ है। इसे तो लासन भी कहते हैं।

स्त्रियां न करें।

पश्चिमोत्तानासन

विधिः—

१—पहले पृथ्वी पर बैठ जाओ और दोनों पाँवों को अपने सन्मुख सीधे फैला लो दोनों पाँव आपस में एक दूसरे से सटे रहने चाहिये।

२—इसके बाद धीरे २ सिर को पाँवों की ओर झुकाना प्रारम्भ करो। और तब तक झुकाते रहो जब तक कि माथा घुटनों से स्पर्श न हो।

चित्र ९८

३—माथा घुटनों पर रखने के पश्चात् हाथों को पाँवों के पंजों की ओर फैलाना आरम्भ करो, और इतने फैलाओ कि दोनों पाँवों के अंगूठे पकड़ लो।

४—हाथ पाँव दोनों बिल्कुल सीधे और कड़े रहने चाहिये पेट जाँघों से स्पर्श न हो, कुछ ऊपर को उठा रहे तथा प्राणायाम चढ़ा लेना चाहिये।

लाभः—

१—पादहस्तासन की भाँति ही यह आसन किया जाता है। क्योंकि यह आसन खड़े होकर नहीं वरन् बैठकर ही किया जाता है। अतः इसकी क्रिया में जो कुछ भी सामान्य असर होते है वह सारे अंगों पर ही पड़ते है।

२—बांहों के बीच से सिर को निकाल कर घुटनों पर रखते हैं और प्राणायाम को पूर्ण रूपसे साधन करते हैं। साँस को इस तरह से लेने और निकालने से आमाशय रोगों का शर्तिया नाश हो जाता है।

३—वायु रोग ऐसे आसन करने वालों को कभी नहीं सताते हैं। अक्सर देखा गया है कि श्वाँसों के विकार से तथा अन्य अङ्गों के कारण वायु रोग अधिक परेशान करता है। ऐसी अवस्था में इन रोगों को जड़मूल से नष्ट करने के लिये इस आसन को करना ही श्रेयस्कर है।

चतुर कोणासन

वि.धि—

१—पहले आलथी पालथी मार कर बैठ जाओ और एक घुटने को पीछे की ओर ले जाकर उस पर ही शरीर का सारा भार डाल दो। दूसरे पैर को सीधा करके बांह के ऊपर हाथ को गर्दन के पीछे से निकाल कर रखलो।

चतुर कोणासन

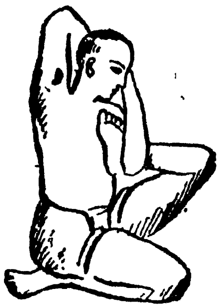

ऊर्ध्वसर्वासन

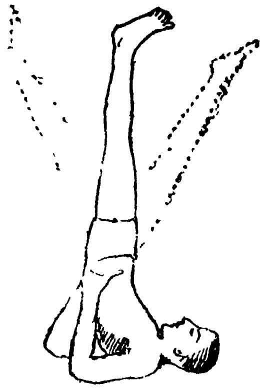

साँस धीरे २ लो और हो सके तो प्राणायाम करो । इससे गुदा रोगों को शर्तिया लाभ होगा ।

स्त्रियां इसको न करें ।

प्राणासन

विधिः—

१—सर्व प्रथम आलथी-पालथी मार कर बैठ जाइये फिर बांये पांव को इस प्रकार खड़ा कीजिये कि पञ्जा पृथ्वी पर टिका रहे, और घुटना सीधा रहे ।

२—दूसरे पांव के घुटने के उस ओर वाले हाथ की हथेली का सहारा देकर पृथ्वी पर टिका लें और पांव के पंजे को खड़े पांव वाली जङ्घा पर टिका लें ।

३—इसके बाद बांये हाथ को खड़े घुटने के मध्य से निकालकर हथेली को पृथ्वी पर जमा दें ।

प्राणासन

चित्र ४०.

४—दृष्टि को बांये हाथ की ओर रखें मगर सिर, गर्दन तथा समस्त शरीर को कड़ा और सीधा रखें।

५—या तो दीर्घ श्वासें लें या प्राणायाम करें। दोनों ही लाभदायक होंगे।

लाभः—

१—इस प्रकार के आसन से हाथ, पांव आदि तथा शरीर की अन्य नस नाड़ियों पर खिंचाव पड़ता है।

२—फेंफड़ों पर खिंचाव होने से हाथ, पांव के साथ प्राण शक्ति भी बलवान होती है।

३—हाथ पांव के हेर-फेर से यह आसन दांई-बांई दोनों ओर ही किया जा जाता है।

४—गुल्म रोगों पर यह आसन लाभदायक है।

स्त्री-पुरुष दोनों ही सामान्य रीति से इसको कर सकते हैं।

आकर्ण—धनुषासन

१—दोनों पांवों को एक दूसरे के साथ मिलाकर बैठ जायें और धीरे २ पैरों को सीधा करलें।

२—हाथों की उँगलियों से दोनों पांवों के अंगूठों को पकड़कर खींच लें।

३—एक पांव को उसी अवस्था में रखें और पहले दूसरे पांव को उठाकर विपरीत कान की तरफ उठायें। मगर ध्यान रहे कि खिचाव कम न हो और शरीर भी ढीला न पढ़ने पाये।

४—तत्पश्चात् दूसरे पैर को दूसरे कान की तरफ खींचने वाली क्रिया करें।

आकर्ण धनुषासन

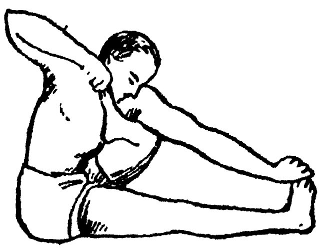

चित्र ४१.

५–हाथों और पांवों के हेर-फेर से होने के कारण इस आसन को चार तरह करें। दोनों पैरों का हेर-फेर तथा दोनों कानों का हेर-फेर कर लेने से यह आसन चार तरह हो सकता है।

लाभः–

१–इस आसन से शरीर के सारे अङ्ग अच्छी तरह खुल जाते हैं। रक्त प्रवाह अच्छी तरह तेजी से चलने लगता है और उसके साथ ही साथ शरीर की सारी इन्द्रियाँ अपना कार्य अच्छी तरह से करने लगती हैं।

२–शरीर के सारे माँसलों पर इसका अच्छा असर होता है। और नसों का रक्त प्रवाह बहुत ही तेजी से सारी दिशाओं में बहने लगता है।

३–हाथ पैरों में सन्नाटा का आना पूरी तरह बन्द हो जाता है। गुदा रोगों मे यह अमोघ है। वैसे भी कफज तथा पित्तज बीमारियों में इसका लाभ बहुत ही चमत्कारी होता है। इससे बाहु, पांव, घुटने, जङ्घा आदि अङ्गों को लाभ होता है।

स्त्री-पुरुष दोनों समान रूप से कर सकते हैं।

उत्थित पद्मासन

पद्मासन की भांति ही इस आसन की क्रिया है। केवल अन्तर इतना है कि हाथ घुटनों पर रखे रहने के बजाय उन्हें पृथ्वी पर चूतरों के समीप ही टिकाया जाता है और चूतरों को अन्य शरीर के साथ पृथ्वी से ऊपर उठा लिया जाता है। इस

उत्थित पद्मासन

चित्र ८१.

कारण समस्त शरीर का भार हथे-लियों पर ही आ जाता है। शरीर को पृथ्वी से जितना ऊपर उठाया जाता है उतना ही अधिक लाभ होता है। शरीर को कड़ा रखना तथा दीर्घ श्वास लेना अति आवश्यक होता है।

शरीर को पद्मासन से जितने भी लाभ होते हैं वह सारे इस आसन के करने से होते हैं और साथ ही साथ हाथों का बल भी बढ़ता है। इन तमाम कारणों से यह कारण बल वर्धक, और वीर्य रक्षक है।

इसको "दोलासन" भी कहते हैं। स्त्रियां इस आसन को कदापि न करें।

लेटकर करने वाले आसन

जिस प्रकार शरीर के धड़ विशेष कर फेफड़ों तथा आमाशय के हितों का विचार करते हुये बैठकर करने वाले आसनों का विशेष महत्व है उसी प्रकार पीठ के समस्त विकारों की रक्षार्थ लेटकर करने वाले आसनों की आवश्यकता है। इन आसनों से रीढ़ की हड्डी को विशष लाभ होता है।

शरीर का सारा भार रीढ़ की हड्डी पर पड़ता है और इस कारण इस हड्डी में थकान होने लगती है। क्योंकि इस हड्डी का सम्बन्ध गुदा के ऊपरी भाग से लेकर मस्तिष्क तक है इस कारण

इसका शरीर में अपना निजी महत्त्व है। पहले ही कहा जा चुका है कि रीढ़ की हड्डी भीतर से पोली है और उसमें से एक तरह का रस हमेशा बहा करता है इस कारण उसका असर सारे शरीर पर पड़ता है।

मनुष्य की बुद्धि-प्रखरता, चैतन्यता, स्फूर्ति आदि के लिये रीढ़ का अपना निजी महत्त्व है। जब यह पानी कहीं किसी स्थान से एक ही जगह रुक कर स्थिर हो जाता है तो वह रस के स्थान पर विष हो जाता है और तब शरीर के लिये भयङ्कर रोगों का जन्म होता है।

गर्दन तोड़ बुखार, पागलपन, मृगी, करबन्कल फोड़ा, आदि इसी रस के विकार के कारण मनुष्य के शरीर में जन्म लेते लेते है। अतः इन विकारों से रक्षा करने तथा शरीर को आरोग्यता के हितार्थ लेटकर करने वाले आसनों का अपना विशिष्ट स्थान है।

लेटकर करने वाले आसन सरल और जटिल दोनों ही हैं अतः उन्हे ध्यानपूर्वक अध्ययन करने की नितान्त आवश्यकता है।

मत्स्यासन

विधिः—

(१) पहिले पृथ्वी पर चित्त लेट जाइये। दोनों हाथों को मोड़कर सिर के नीचे तकिये की तरह लगाकर रखलें।

२—दोनों पैरों मोड़कर पालथी मार लें। लेटे २ पालथी मारना जरा मुश्किल होता है। अतः पहले बैठकर पालथी मार लें और फिर धीरे २ कमर को झुकाकर सिर पृथ्वी पर लेटने की अवस्था में रखलें।

मत्स्यासन

चित्र ४३.

३—घुटनों को पृथ्वी पर समतल रहना आवश्यक है। सारा शरीर अच्छी तरह कड़ा रखें। यदि शरीर का कोई भी भाग ढीला हो गया तो हानि हो जाने की सम्भावना होती है।

४—साँस को जल्दी २ निकालें और फिर जल्दी २ साँस को खींचना चाहिये। साँस को जल्दी २ खींचने और निकालने से खासी कसरत हो जाती है।

लाभः—

(१) इस तरह लेटने से शरीर निरोगी होता है। रीढ़ की हड्डी जो कि शरीर को साधे रखे रहने का कार्य करती है अधिक मजबूत होती है। और कमर से लगाकर सिर तक के सारे अङ्गों मे शक्ति अधिक बढ़ती है।

२—मस्तिष्क की शक्ति बढ़ाने के लिये यह आसन अधिक लाभदायक सिद्ध हुआ है।

३—तैरने वालों के लिये लिये यह आसन अधिक लाभदायक है। अक्सर अधिक दक्ष तैराक इस तरह पानी पर भी तैरते हैं। मछली इसी तरह तैरती है, इससे अजीर्ण का पूर्ण नाश होजाता है। थकावट को दूर करने के लिये यह आसन श्रेष्ठ है।

स्त्री—पुरुष इसे समान रूप से कर सकते हैं।

सर्पासन

विधिः—

१—प्रथम आसन पर उल्टे लेट जाइये। पश्चात् दोनों हाथों की हथेलियों को पृथ्वी पर जमा दो।

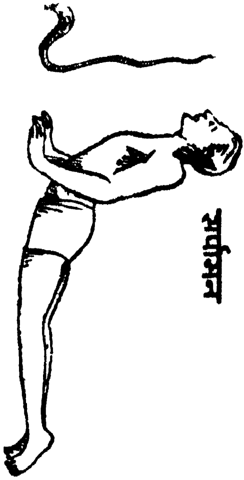

२–हथेलियां पेट के पास रखनी चाहिये। शरीर के नीचे का भाग अर्थात् घुटने, पाँव तथा पेट बिल्कुल पृथ्वी से सटा रहे।

३–तत्पश्चात् धीरे २ शरीर को उठाना प्रारम्भ कीजिये। प्रथम सिर फिर गर्दन. सीना तथा पेट को उठाइये।

४–शरीर कड़ा रखिये तथा सर्प के फन की तरह तना हुआ रखना चाहिये। सिर से लेकर पेट तक का भाग ऊपर उठा रखिये।

५–नेत्रों को ठीक सामने रखो, और

चित्र ४४.

देखते रहो। साँस बराबर रोके रहो। यदि साँस न रोकी जा सके तो धीरे २ साँस लें और निकालते रहें।

लाभः–

१–यह आसन आमाशय के सारे विकारों को जड़ से खोता है। भुजायें शक्तिशाली होती हैं। सीना आगे की तरफ तनता है और गर्दन में बल आता है।

२–जाघें सुडौल होती है। कमर में बल बढ़ता है और शरीर में पूर्ण फुर्ती आती है, नाक से साँस निकाल कर सारे शरीर में फैल जाती है और सारे वातावरण को शुद्ध कर देती है।

३–सीना बनता है, फेफड़े शक्तिशाली होते हैं। दिल में बल आता हैं, और रक्त तेजी से साफ होता है, बगलें बलशाली होती हैं। रीढ़ की हड्डी के विकार दूर होते हैं। इसे "नागासन" भी कहते हैं।

स्त्री पुरुष दोनों समान रूप से कर सकते हैं।

वृश्चिकासन

विधिः—

१—पहले पृथ्वी पर लेटें।

२—कोहनी से हाथों के पंजे तक के भाग को पृथ्वी पर सम रेखा में जमा कर रखलें।

३—शरीर को धीरे २ उठाना शुरू करें, सीने को गर्दन के साथ आगे की तरफ ही बढ़ाये हुए रखे। पहले पैरों को धीरे २ उठा कर उल्टा करें और कमान की तरह की शक्ल बना कर पैर के पञ्जों को सिर पर रखलें।

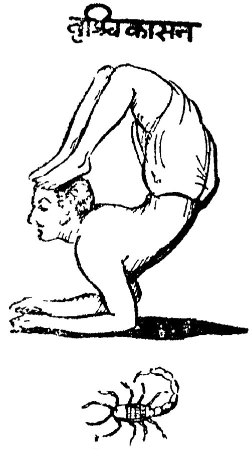

चित्र ४५

४—इस आसन को करते समय चित्र का पूरा २ ध्यान रखे। और जिस तरह का चित्र दिया हुआ है उसी तरह से काम करें।

५—साँस बिल्कुल भी न लें। अगर साँस ली जायेगी तो हानि होने का बहुत डर है।

लाभः—

१—इस आसन से गर्दन, सीना और भुजायें पुष्ठ होती हैं। पैरों की रक्त सञ्चालन गति उल्टी होती है और इसी तरह रक्त विकार दूर हो जाते हैं।

२—पीठ के लिये बहुत ही उत्तम आसन है। रीढ़ की हालत ठीक हो जाती है। किसी तरह की कोई बीमारी पैदा नहीं होती है।

३—गर्दन तोड़ बुखार, कार्बन्किल, आदि सारे रोगों का नाश हो जाता है।

४—बाहुओं और हाथों में बल बढ़ाता है।

५—आँतों का भाग निर्दोष होता है।

६—शरीर मे स्फूर्ति का सञ्चार होता है।

यह आसन कड़ा है, अतः जितनी देर तक आसानी से यह आसन किया जा सके उतनी ही देर करना ठीक है वरना शरीर के साथ ज्यादती करने से शरीर को हानि होगी। यदि अपने आप यह आसन न होसके तो पहले अपने मित्रों की सहायता ले सकते हैं या दीवार के सहारे शरीर को टिका कर इसको करें और जब शरीर इसका अभ्यस्त हो जाये तो स्वतंत्र रूप से कर सकते हैं।

स्त्रियाँ इस आसन को कदापि न करें।

उष्ट्रासन

उष्ट्रासन (अ) उष्ट्रासन (ब)

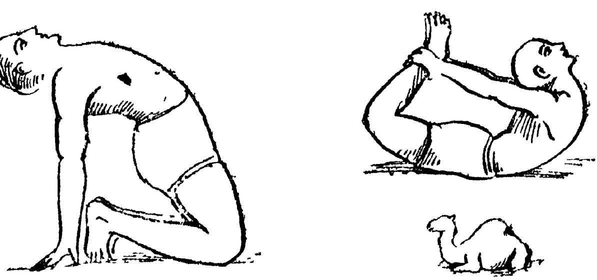

चित्र ४८

विधि— (अ)

१—पहले पृथ्वी पर कुछ बिछाकर उल्टे लेट जाइये। पावों को सीधा फैलाये रखें, दोनों पैर के पञ्जों व एड़ियों को आपस मे मिलाये रखे और पृथ्वी पर पैर की उङ्गलियों के सहारे पैर को टिकालें।

२—घुटनों को सम-रेखा में रखें और सम्पूर्ण शरीर को सीधा उठा कर बैठने की अवस्था में कर लीजिये। अपना सम्पूर्ण शरीर—केवल पैर के घुटनों से लेकर पञ्जों तक के भाग को छोड़ कर—सीधा करलें।

३—इसके पश्चात् धीरे २ शरीर को पीछे की तरफ करते जाइये. और इतना झुकिये कि दोनों हाथों की अंगुलियाँ उल्टी होकर पृथ्वी पर जाकर टिक जांय। हाथ सीधे और कड़े रखने चाहिये।

४—सीना तथा सिर सीधा रखना चाहिये। ध्यान रहे कि सिर नीचे को न झुक जाय। पैर प्रथम की ही तरह मिले रहने चाहिये। दृष्टि सीधी ऊपर को रहे तथा श्वॉस रोक लेनी चहिये।

लाभः—

१—यह आसन बहुत ही लाभदायक है और विशेषकर उन मनुष्यों के लिये जो सदैव पीठ झुकाये काम किया करते हैं।

२—इससे बाहे बलवान होती है और उनका टेढ़ापन इत्यादि अनेक दोष दूर हो जाते है।

३—गर्दन और सीने मे कड़ापन आने से स्नायु खिचते हैं, जिससे उनमे मजबूती आती है और और शरीर में रक्त प्रवाह तीव्रता से होने लगता है।

४—पेट के अनेक रोग नाश को प्राप्त होते है। भोजन पचाने की शक्ति बढ़ती है। कमर और पीठ के दोष दूर हो जाते हैं। और झुकने का भी डर नहीं रहता।

विधिः— (ब)

१—पृथ्वी पर उल्टे लेटें।

२—हाथों को कंधों के पास से घुमाकर पैरों को ऊपर उल्टा उठायें और पिंडलिया को पकड़ कर खींच लें।

३—नाभि के पास का चार पाँच इञ्च का भाग ही पृथ्वी पर टिकायें और समस्त शरीर को कड़ा करके ऊपर उठालें। इस क्रिया से शरीर का सारा भार हाथ और पैरों पर सध कर नाभि के ऊपर आ जायेगा।

४—हाथों को आगे की तरफ़ और पैरों को पीछे की तरफ़ खीचने से दोनों अङ्गों पर समान खिचाव पड़ता है। इस तरह शरीर

का आकार धनुष के समान हो जाता है । अतः "धनुरासन" भी कहते हैं।

लाभः—

१—इसके अभ्यास से यकृत और प्लीहा के रोग दूर होते है।

१--आम, बात के सारे रोगों का नाश होता है।

३—पेट के सारे रोगों के साथ २ रीढ़ की हड्डी तथा पीठ की अन्य हड्डियों को भी पूर्ण लाभ होता है।

स्त्री पुरुष इन्हे समान रूप से कर सकते है।

वज्रासन और सुप्त वज्रासन

विधिः—

१—प्रथम उल्टे पेट के सहारे लेट जाइये, बाद को सिर की ओर से उठना आरम्भ कीजिये। धीरे २ उठ कर घुटनों तक के शरीर को उठा लीजिये।

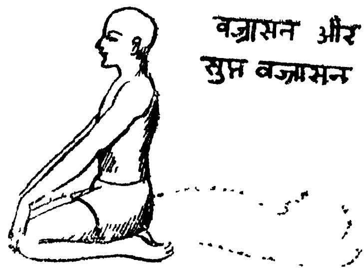

चित्र ४७

२—घुटनों के नीचे की टाँगे उल्टी रहनी चाहिये, और पीछे के पञ्जों पर बैठ जाना चाहिये, ताकि एड़ियां गुदा के नीचे जमी रहे।

३—दोनों हाथ घुटनों पर रख लेना चाहिये, बांहे सीधी और कड़ी रहनी चाहिये।

४—शरीर सीधा रखना चाहिये और दृष्टि ठीक सामने की ओर रहे। ध्यान रहे सिर दांये बांये न मुड़े और होसके तो आज्ञा चक्र को दृष्टि पर केन्द्रित किया जाय।

५- सुप्त वज्रासन के लिए कोई और क्रिया अधिक आवश्यक नही होती है। केवल उसमे अन्तर इतना ही होता है कि वज्रासन की क्रिया में बैठकर ही आसन किया जाता है और सुप्त क्रिया करते

समय उस अवस्था ही में पृथ्वी पर लेटकर आसन किया जाता है।

६ – लेटते समय शरीर की स्थिति जैसी की तैसी ही रहती है, केवल अन्तर इतना ही होता है कि हाथ सिर के नीचे तकिये की तरह आ जाते हैं।

लाभः–

१ – इस आसन से कई लाभ हैं। शरीर वज्र की तरह कठोर और सारे शरीर की माँस पेशियाँ सुव्यव स्थित हो जाती हैं। श्वाँसों के उतार चढ़ाव तथा वायु वेग के कारण शरीर कड़ा हो जाता है।

२ – इसका विशेष परिणाम पाँवों और पेट पर अच्छा होता है

३ – इस आसन को करते समय ठोड़ी को कंठ के दंठ मूल में लगाने से बहुत लाभ होता है। अतः इस आसन को करते समय इस बात का विशेष ध्यान रखना अति आवश्यक है।

स्त्रियों को यह आसन करना वर्जित है।

मयूरासन और हंसासन

मयूरासन और हंसासन

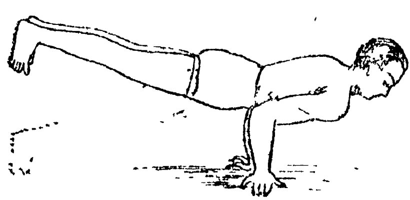

चित्र ४८

विधिः—

१—चित्र ३२ में हम मयूरासन को सविस्तार वर्णन कर चुके हैं। इस चित्र को देखने से आपको ज्ञात होगा कि पहला आसन तो खड़े होकर बताया गया था मगर यह आसन लेठी हुई अवस्था में

२—हंसासन के समिश्रण से इसमें केवल इतना अन्तर है कि पृथ्वी पर रखी हथेलियों पर ही शरीर का सारा वजन है। बताया जा चुका है कि पृथ्वी पर रक्खे हुये पैरों को धीरे २ उठाकर शरीर की सीध में सीधा कर लेना चाहिये।

लाभः—

१—इस आसन के भी सब वही लाभ होते है जो पिछले मयूरासन मे बताये जा चुके है।

शलभासन

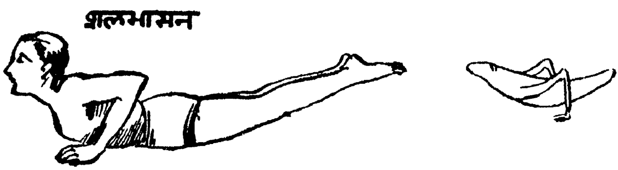

चित्र ४९.

विधिः—

१—पहले विस्तरे पर पेट होकर लेट जाइये। शरीर को अच्छी तरह सीधा रखें और कड़ा बनाये रखें।

२—फिर धीरे २ दोनों हथेलियों को पसलियों के नीचे लाकर पृथ्वी पर टिका लें। गर्दन को सीधा रखें। पैरों को कड़ा करले और धीरे २ उन्हें थोड़ा २ ऊपर की तरफ उठाले।

३—इस आसन को करने वाले की अवस्था तैराक की सी हो जायेगी तब श्वास को दीर्घ और कभी लघु करके लेने से विशेष लाभ होता है।

लाभः—

१—आमाशय रोगों के लिये यह आसन उत्तम है।

२—जङ्घा, बाहु, पेट, पीठ पर इसका अच्छा प्रभाव पडता है।

३ शरीर में स्फुर्ति आती है और बुद्धि का विकास होता है।
४—रीढ़ की हड्डी की थकावट दूर होती है।
यह स्त्री पुरुष दोनों के लिये समान है।

तोलांगुलासन

विधिः—

१—पहले पृथ्वी पर चित्त होकर लेट जाइये। दोनों पैरों के घुटनों को मोड़कर पैर के पञ्जों को जाँघों के पास लगालें।

२—हाथ की हथेलियों को चूतड के नीचे लगालें। गर्दन को थोड़ा सा उठालें और सारे शरीर का भार सीने पर रखे रहें।

तोलागुलासन

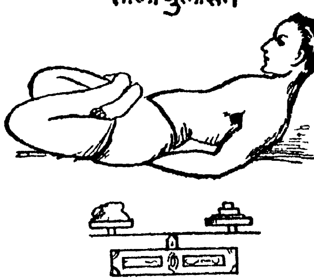

चित्र नं०

३—साँस को धीरे २ बाहर निकालें और गर्दन को विशेष रूप से कड़ा रखें। गर्दन को और जाँघ को कड़ा रखना ठीक है और इस तरह शरीर में नवीन शक्ति का सञ्चार होता है।

लाभः—

१—रीढ़ की हड्डी को यह आसन विशेष लाभ देता है। तथा रीढ़ की हड्डी से पैदा होने वाले तमाम रोगों को यह दूर करता है।

२—इस आसन के करने वाले को कारबंकिल फोड़ा आदि कभी नहीं होते। यदि कभी पीठ में या कमर में दर्द मालुम हो तो यह आसन करना चाहिये, शर्तिया लाभ होगा।

यह स्त्रियों को वर्जित है।

उत्तानपादासन

चित्र ५१

विधिः—

१—पृथ्वी पर सीधे होकर लेट जाइये।

२—शरीर को ढीला छोड़ दीजिये। गहरी श्वास लेकर शरीर को कडा कर लें।

३—धीरे २ दोनों पांवों को ऊपर उठायें। वेग से उठाने से कोई लाभ नहीं होगा अतः ध्यान रखें कि शरीर कड़ा रहे और धीरे २ ही दोनों पांव ऊपर की तरफ उठाये जांय।

४—जितनी दूर तक आप पांवों को उठा सकें उठायें। और जब ऊपर की तरफ उठाने में असफल रहें तो कुछ देर के लिये पैरों को वहीं रोक दें।

५—प्राणायाम करना लाभदायक है। ऐसी अवस्था में प्राणायाम करने से आपको आराम मिलेगा।

६—जब पैरों को रोक सकने की सामर्थ न रहे तो पुनः धीरे २ पैरों को नीचे लाने की कोशिश करें।

लाभः—

१—इस आसन के करने से कमर में ताकत आती है और रीढ़ की हड्डी मजबूत होती है।

२—अजीर्ण का नाश होता है और शौच शुद्धि में सहायता मिलती है।

३—भूख खुलती है, आमाशय के विकारों का नाश होता है।

४—पेट का आकार ठीक रहता है और कमर भी शेर की कमर की तरह फुर्तीली होती है।

स्त्री पुरुष समान रूप से इसे कर सकते हैं।

पवनमुक्तासन

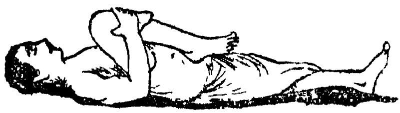

चित्र ५२

१—उत्तानपादासन की तरह ही इस आसन की सारी क्रिया हैं। शरीर को कड़ा करके लेटी हुई अवस्था में कर लेना चाहिये। फिर एक घुटना उठाकर दोनों हाथों से घुटने को पकड़ कर सीने के पास ले आना चाहिये। इसी तरह दूसरे पैर के घुटने को भी ले आना चाहिये।

१—साँस को या तो धीरे २ लेना और निकालना चाहिये वरना प्राणायाम कर लेना ही उत्तम है। शरीर को थकावट के बाद सामान्य अवस्थामें लाने के लिये इससे अच्छा आसन और नहीं।

२—इसका लाभ पेट की निचली आंतों पर अच्छा होता है।

३—पांव धीरे उठाने की क्रिया करते रहने के कारण उत्तान पादासन के सारे लाभ इसके करने से प्राप्त हो जाते हैं।

स्त्रियां गर्भधारण हो जाने के बाद कदापि न करें।

समस्त सामान्य आसनों द्वारा

शरीर को लाभ

साधारण मनुष्य गृहस्थ धर्म पालन करते समय अपने शरीर की साधना के लिये इन आसनों का प्रयोग करने से आरोग्यता लाभ करने के साथ ही साथ दीर्घ आयु भी प्राप्त कर सकता है। सबसे

पहली बात जो योगासनों के विषयमें खटकतीहै वह यह है कि मनुष्य योगासन के नाम से ही चौंक जाता है और समझता है कि यह क्रियायें संसार के विरक्तों को लिये ही हैं। मगर वह लोग यदि इन आसनों को ध्यान से पढ़कर सोचने की चेष्टा करेंगे तो अवश्य ही यह जान लेंगे कि इनके साधनों से जो लाभ होगा वह शरीर के सारे अङ्गों को लाभ करेगा।

सिर, कन्धों, गर्दन, फेफड़ों, भुजाओं, आंतों, आमाशय, तिल्ली कमर, जांघे, पिंडलियां, पैर के पंजे, रीढ़ की हड्डियां, आदि अङ्गों को पुष्ट करने के लिये तथा समस्त शरीर को आरोग्य करने तथा इन अङ्गों से रोग विकारों को दूर करने के लिये आसनों का करना जितना लाभदायक है उतनी और क्रियायें नहीं हैं।

योगासन क्रियाओं के लिये किसी विशिष्ट समय, वस्त्र, स्थान आदि की कोई आवश्यकता नहीं है। सामान्य गृहस्थ–धर्म को पालन करते समय ही इन समस्त आसनों को किया जा सकता है।

इस आसनों को करने में किसी विशेष भोजन या पौष्टिक पदार्थ की आवश्यकता नहीं होती है। जो कुछ भी आप भोजन करते हैं अपना सामान्य जीवन व्यतीत करते समय वही यथेष्ट होगा। उसी से आपका कार्य चल सकता है क्योंकि संसार में जितने भी खाद्य हैं उन सब में वह समस्त रस है जो पोष्टिक से पौष्टिक पदार्थ मे पाये जाते है। उनका पूरा लाभ उठाने का ही प्रश्न है। सो आसनों की क्रिया से जब वह अच्छी तरह पच जाते हैं तब उनका जीवन को दीर्घ करने वाला रस प्राप्त हो जाता है।

शरीर एक मशीन की भाति है और भोजन मशीन को चलाने के लिये तेल की भांति है। जब मशीन ठीक तरह रहती है तो वह कार्य ठीक तरह करती है। अतः जब शरीर की

अवस्था ठीक रहती है तो भोजन का पाचन भी ठीक रहता है और इस कारण शरीर के समस्त अंगों को लाभ होता है।

रक्त के प्रवाह के कारण शरीर मे आरोग्यता और आयु की दीर्घावस्था प्राप्त होती है। इनके समस्त लाभ शरीर, मस्तिष्क, बुद्धि, चेतना, स्फुर्ति पर चमत्कारी होते हैं।

अतः हर मनुष्य मात्र का धर्म है कि वह अपने जीवन सुखों की साधना के लिये शरीर को निरोगी बनाये और दीर्घ आयु प्राप्त करने के लिये योगासनों का अभ्यास करता रहे।

क्लिष्ट आसन और उनकी क्रिया

अब तक पिछले परिच्छेद में हमने सामान्य आसनों का वर्णन किया है जिन्हे सामान्य जीवन व्यतीत करने वाला मनुष्य आसानी से कर सकता है। अब हम उन आसनों का वर्णन करंगे जो किसी लक्ष्य प्राप्ति के लिये किये जाते हैं। इन आसनों से शरीर को लाभ होता है। मगर उन सबका प्रभाव किसी अंग विशेष पर ही सबसे अधिक पड़ता है।

इन आसनों में सबसे अधिक ध्यान रखने की बात यह है कि इन क्रियाओं को सामान्य रीति से ही किया जाना चाहिये मगर जिस लक्ष्य की प्राप्ति के लिये आसन नियुक्त हैं उनको पालन करने के लिये अच्छी तरह से उन बातों का ध्यान रखना चाहिये जिनका ध्यान रखना आवश्यक है। गृहस्थ जीवन पालन करने वाले पुरुष कदापि न करें अन्यथा वह स्त्री के योग्य न रहेंगे। क्योंकि इनकी क्रियाओं से वीर्यपात रुक जाता है। सन्तान कदापि

नहीं हो सकती। स्त्रियां तो इन आसनों को कर ही नहीं सकतीं। यदि करने में समर्थ भी हों तो उनको करना विशेष रूप से वर्जित है। अतः वह भूलकर भी क्लिष्ट आसन पर ध्यान न रखें।

प्राणायामिक क्रियाओं द्वारा किये जाने वाले आसन

योगिक

चित्र ५३.

संसार से विरक्त होकर जो मनुष्य वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण कर लेते हैं वह भगवत् भक्ति की कामनो करने हुये अपने जीवन की साधना को पूर्ण बनाना चाहते हैं। संसार को त्यागकर उन्हें केवल मुक्ति की ही कामना होती है और यही उनका ध्येय होता है।

पद्मासन से बैठकर प्राणायाम करते हुये भगवत भजन में संलग्न होना ही योगिक आसन की क्रिया है। इस आसन द्वारा शरीर को आरोग्यता प्राप्त होती है तथा प्राणायाम द्वारा हृदय की चञ्चलता का नाश होता है और मन एकाग्र होकर भगवत चरणों में रत होने की क्षमता प्राप्त करता है।

एकाग्र चित्त द्वारा भगवत् साधना के लिये इससे अधिक उपयुक्त आसन और कोई नहीं है।

इस आसन से वीर्य का लोप होता है। वह शरीर में खप जाता है। मनुष्य की भोग-विलास की इच्छायें दमन हो जाती हैं और उसकी भोग इन्द्रियों से काम शक्ति का नाश हो जाता है। काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि के नाश हो जाने पर ही मनुष्य एकाग्र चित्त से अपने इष्ट का मनन कर सकने में समर्थ हो सकता है। इस आसन के लिये नदी का किनारा या जंगल ही उपयुक्त हैं ताकि प्राणायाम के लिये स्वच्छ वायु प्राप्त हो सके।

राजसी

पुरातन समय में राजाओं का भी योग साधन में चित्त रहता था और जब तक उनका युवराज राज्य सम्भालने के योग्य नहीं हो जाता था तब तक वह अपने राज्य कार्य के साथ ही भगवत् ध्यान करते रहते थे। राजा जनक इस तरह के राजाओं में श्रेष्ठ थे। उनका ध्यान हमेशा भगवत् भजन में रहता था। राज सिंहासन, शयन आदि के लिये लेटे हुये सेजों पर भी उनका शरीर तो यथा स्थान पर स्थिर रहता था मगर हृदय भगवत् ध्यान मे ही उलझा रहता था। इसी कारण उनका नाम विदेह पड़ गया था।

चित्र ५४.

इस आसन को करते समय अर्ध पद्मासन से बैठने से और प्राणायाम करने से शारीरिक आरोग्यता के साथ ही इष्ट की साधना में काफी सहायता प्राप्त होती है।

इस आसन के करने से वह तमाम लाभ प्राप्त होते हैं जो यौगिक द्वारा प्राप्त होते है। मगर इसकी साधना के लिये राज महलों की ही आवश्यकता हे न कि नदी तट, जंगल की जैसी कि योगिक के लिये है।

सांध्यप्राण

गृहस्थ जीवन त्यागने के बाद भी जो मनुष्य घर ही मे रहते हैं। मगर योग साधना करने के लिये तत्पर रहते है वह इस आसन का प्रयोग करते है।

इस आसन की क्रिया को करते हुये पद्मासन से बैठकर प्राणायाम करते हुये अपने इष्ट का मनन करते हैं।

इस अवस्था मे ही वह जप करते है, ध्यान तन्द्रा में अपने हृदय को लगा लेते हैं।

चित्र ५५.

इस आसन के करने से शरीर के विकारों का नाश होता हैं। आरोग्यता प्राप्ति के साथ २ उनके शरीर मे शक्ति का सञ्चार होता हे और प्राणायाम करने से हृदय शान्त होता है और चेतना आती है।

यह आसन प्रातः या संध्या समय शहर मे या शहर से दूर किया जा सकता है। इसके लिये किसी स्थान विशेष की आवश्यकता नहीं। घर की छत, आंगन आदि खुले स्थानों मे भी किया जा सकता है। मगर वहाँ कोलाहल नहीं होना चाहिये ताकि तन्द्रा न टूटने पाये। शुद्ध वायु का आवागमन भी होता हो ऐसा स्थान ही चुनना श्रेयस्कर है।

मौना

जो मनुष्य संसार जीवन मे रहकर अनेकों दुःखने भोग के कारण कुछ उदासीन से हो जाते हैं जिनका हृदय संसार के दुःखों से टूट जाता है या जिनका जीवन स्वयम् उनके लिये नीरस हो जाता है वह अपने को कुछ खोया २ सा प्रतीत करने लगते हैं। संसार का कोई आकर्षण उन्हे नहीं मोह सकता और न वह स्वयम् ही किसी की तरफ प्रभावित ही होना चाहते है। मगर इसके साथ ही साथ वह संसार से बिलकुल विरक्त होकर उसे छोड़ भी नहीं सकते। अतः सांसारिक जीवन को व्यतीत करते हुए ब्रह्मावस्था का चिन्तन करने का आदेश इस आसन मे है।

चित्र ५६.

पहले चूतरों के बल बैठें और दोनों अपने हाथों से घुटनों को आमाशय के ऊपर कस लें। ऐसा करने से शरीर का सारा भार चूतरों पर आ जायेगा और घुटनों के कसे रहने के कारण उन्हे आराम भी मिलता रहेगा। तब प्राणायाम साधन करें और अपने मन को आज्ञा चक्र पर केन्द्रित करें ताकि चेतना मे वृद्धि हो।

जब भी बैठना हो इस अवस्था ही में बैठें और अपना ध्यान अध्यात्मिक चक्रों पर ही केन्द्रित करें। इस आसन को करने वाले सदैव ही इस अवस्था मे बैठते है। वह इसे अपनी आदत बना लेते हैं और ऐसी अवस्था में मौन रहना ही पड़ता है क्योंकि आमाशय पर दबाव रहता है और चक्रों पर ध्यान

केन्द्रित होता है अतः बोलने की भी इच्छा नहीं होती इसी कारण इस आसन को मौना कहा गया है।

मानसी

जिनका ध्येय प्राणायाम को अधिक देर तक साधने का व्यसन होता है और वह अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करके अपना प्रभुत्व जमाना चाहते है वह इस आसन को ग्रहण करते है। वह गृहस्थ-धर्म का पालन करते ही इस आसन द्वारा प्राणायाम क्रिया का योग प्रारम्भ कर देते है।

इस आसन का करने में पहले सिद्धासन या पद्मासन ग्रहण करके बैठना पड़ता है और फिर धीरे २ श्वांस को खींचने तथा निकालने की क्रिया करने की आवश्यकता होती है ताकि नस नाड़ियों को शक्ति मिल जाये तब प्राणायाम साधा जाता है।

चित्र ५७.

धीरे २ प्राणायाम को बढ़ाया जाता है। इस आसन के द्वारा सारे शरीर को यथेष्ट बल मिलता है और प्राणायाम साधन में सुगमता रहती है। यह आसन ऐसा है जिससे कि आप चाहें जितनी देर बिना थकावट महसूस किये बैठे रह सकते हैं और आप की प्राणायाम क्रिया मे भी सहायता मिलती है।

प्राणायाम के लिए शान्त वातावरण और स्वच्छ वायु की आवश्यकता है अतः इसका विचार स्थान चयन करते समय अवश्य रखना चाहिये।

आध्यात्मिक

प्राचीन समय में जब ऋषिकुलों की परम्परा थी तब हर विद्यार्थी को अपने गुरू के आश्रम में विद्याध्ययन के लिये रहना पड़ता था। उस समय उन्हे विद्याध्ययन करने के साथ ही साथ आध्यात्मिक उन्नति भी करनी पड़ती थी। मनन, जप, तप, ज्ञान तन्द्रा आदि पर सिद्धि प्राप्त करने के लिये प्राणायाम का अपना विशिष्ट स्थान है। वीर्य रक्षा तथा कामेच्छाओं पर विजय पाने के लिये गुरू उन्हे इस आसन को सिखाते थे तथा उन्हें मनन करते समय इसी आसन पर बैठने का आदेश देते थे।

चित्र ५८.

उर्ध्व पद्मासन पर बैठकर अपनी ज्ञानेन्द्रियों को किसी एक स्थान पर खींचकर उन्हे अपने हृदयाधीन रखना ही इस आसन का उद्देश्य है। प्राणायाम से शरीर आरोग्य होता है, आसन से बल बढ़ता है और इन्द्रियों को केन्द्रीभूत करने से हृदय शक्तिशाली होता है तथा इन्द्रियों पर विजय प्राप्त होती है। इन्द्रियों को बस मे रखना अध्यात्मिक उन्नति का द्योतक है।

अतः परम्परा की आवश्यकतानुसार ही इस आसन का जन्म हुआ और उसके गुणों द्वारा उसका प्रचार हुआ। मगर क्योंकि वह शिक्षा प्रणाली नहीं है अतः केवल अध्यात्मिक उन्नति ही चाहने वाले प्राणी इसका व्यवहार करते है।

चक्रपाणि

स्वास्थ्य प्रकरण में आपको चक्रों का महत्व बताया जा चुका है। अतः जो मनुष्य युवावस्था ही में घर बार त्यागकर वैराग्य

ले लेते हैं उनके सामने सबसे बड़ी जटिल समस्या होती है इन्द्रियों को बस में करने की। वह वैराग्य तो ले लेते हैं मगर उनका शरीर भोग-विलास आदि कामेच्छाओं से मुक्त नहीं हो पाता। ऐसी दशा ने उन्हें आवश्यकता होती है कि वह पहले इन्द्रियों को जीतें ताकि वे एकाग्र चित्त होकर अपनी योग साधना में दत्त-चित्त हो सकें। सामर्थ पाने के लिये ही वह ऐसा करते हैं। पूर्ण पद्मासन पर बैठकर वह प्राणायाम साधते

चित्र ५६.

हैं और फिर दोनों भौंहों के मध्य स्थित, कण्ठ स्थित, हृदय स्थित, पेट स्थित, नाभि स्थित तथा लिग के ऊपर स्थित चक्रों पर अपना ध्यान केन्द्रीभूत करते हैं। प्राणायाम के साथ केन्द्रीकरण करने से उनमें सामर्थ पैदा हो जाती है कि वह अपने स्वास्थ्य लाभ के साथ ही अपनी शारीरिक इन्द्रियों पर भी विजय प्राप्त कर सकें।

इस आसन द्वारा ही उनका लक्ष्य उन्हें प्राप्त होता है।

व्यायामिक क्रियाओं द्वारा किये जाने वाले आसन

लिङ्गादेशिक

चित्र ६०

वीर्य ही शरीर का राजा है। यही शक्ति का द्योतक और योगिक क्रियाओं में बल देने वाला है। अतः जो मनुष्य अपने शरीर को अति शक्तिशाली बनाने का लक्ष्य करते है वह इस आसन का प्रयोग करते हैं। वीर्य का स्राव अधिकतर लिंग से होता है और जब उस वहां से निकलने का स्थान नहीं मिलता तो गुदा से निकलता है। अतः इस आसन की क्रिया से वीर्य न तो लिंग से निकल पाता है और न गुदा से ही और साथ ही साथ शरीर का कुछ ऐसा ढांचा बन जाता है कि वीर्य को स्नायुओं को पुष्ट करने में ही काम आना पड़ता है।

दोनों पैरों को मिलाकर घुटनों के बल बैठने से एड़ियां गुदा पर अड़ जाती हैं और हाथ आगे बढ़कर घुटनों की समरेखा में रहकर शरीर का सारा भार साधने में सहायता देते हैं। शरीर का सारा भार चूतरों और घुटनों पर ही होता है और इस क्रिया से शरीर को बल तो मिलता ही है और निरन्तर करते रहने के कारण वीर्य स्राव लिंग तथा गुदा की ओर न होकर शरीर के अन्य अंगों की ओर होता है।

ऐसा करने से मनुष्य निश्चिन्त होकर व्यायाम कर सकता है क्योंकि वीर्य पतन होने का डर उसे नहीं रहता और वह निरंतर शक्ति प्राप्त करके उसको उपयोग करने में समर्थ हो जाता है।

सांख्यिक

बहुत काफी व्यायाम करने के बाद जब शरीर बेहद थक जाता है तो आराम की आवश्यकता होती है। उस समय साधारणावस्था में लेटकर शरीर को आराम दिया जा सकता है मगर ऐसा करने से अंगों की सुडौलता नष्ट हो जाने की सम्भावना होती है और व्यायांम करने के बाद एकदम अंगों को ढीला छोड़ देने से वीर्य भी एकत्रित होकर शरीर से बाहर निकलने का मार्ग खोजता है अतः अंगों की सुडौलता तथा वीर्य रक्षा के लिए इस आसन का प्रयोग होता है।

चित्र ६१.

घुटने मोड़कर पैरों की एड़ियों को गुदा पर रखकर बैठा जाता है और दोनों हाथों को घुमाकर पीछे कर लेने के बाद एक हाथ से दूसरे की कलाई पकड़ लेते है। प्राणायाम की साधना भी करते है।

ऐसा करने से व्यायाम द्वारा किया हुआ परिश्रम व्यर्थ नहीं जाता। मांस पेशियां यथास्थान जड़ हो जाती हैं। शरीर को आराम मिलता है। शरीर की गठन को लाभ होते समय वीर्य रक्षा भी स्वतः ही होती है।

साम्यत्व

व्यायाम भी कई तरह के होते है। जैसे कुछ धड़ पर जोर डालने वाले और कुछ पैरों पर जोर डालने वाले। व्यायाम सारे अंगों को लाभदायक होते हुये भी विशेष अंगों को विशेष रूप से पुष्ट करते हैं। जो लोग धड का व्यायाम अधिक करते है उन्हे बैठकर आराम करने से शान्ति प्राप्त नहीं होती अतः वह ताड़ासन द्वारा खड़े होकर दोनों हाथों को समरेखा में रखते हुये आगे बढ़ाकर खड़े-खड़े ही प्राणायाम करते है।

चित्र ६२.

ऐसा करने से जो सांख्यिक आसन से लाभ होते है वह सारे लाभ प्राप्त होते है।

शयंक्रिया

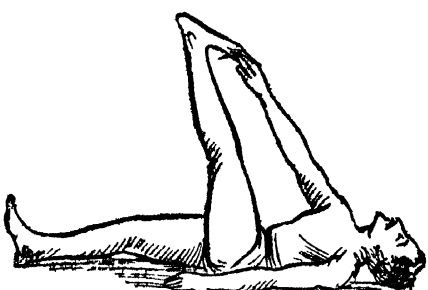

चित्र ६३

जो शक्ति से बहुत्त अधिक व्यायाम कर लेते हैं और इस कारण वह न तो बैठकर और न खड़े होकर आराम करने के

योग्य रह पाते हैं उन्हें लेटकर आराम करना पड़ता है। मगर लेटकर आराम करने वाले दोषों का वर्णन सांख्यिक में किया जा चुका है। अतः केवल लेटकर आराम करना कोई व्यायामिक पसन्द नहीं करता अतः दोषों से मुक्ति पाने के लिये लेटकर यह आसन किया जाता है।

हस्त पादांगुष्ठासन तो खड़े होकर किया जाता है मगर यह आसन लेटकर किया जाता है। दोनों की क्रियायें एकसी हैं अन्तर केवल इतना है कि हस्त पादांगुष्ठासन तो खड़े २ होता है और यह लेटकर। इस कारण यह आसन अधिक कठिन है और इसका करना बहुत क्लिष्ट है। मगर इसके लाभ सांख्यिक, और साम्यव्य से कम नहीं।

सूरा

गायन विद्या भी एक तरह का व्यायाम है। वीणा बजाना, गाना और साथ २ खड़ताल बजाना गान विद्या की सबसे अधिक कठिन साधना है। गाने से फैफड़ों पर असर पड़ता है और खडताल बजाने से हाथकी उँगलियों तथा नस नाड़ियों पर बहुत काफी असर पड़ता है। पद्मासन से बैठने पर शरीर पर भी अधिक लाभ होता है।

चित्र ६४.

महाकवि सूरदास इस कला में निपुण थे अतः व्यायाम शास्त्रियों ने इस प्रकार के व्यायाम को उन्हीं के नाम पर नामकरण कर दिया है और तब ही से इसका नाम सूरा पड़ गया है।

कीर्तन आदि करते समय इस आसन का प्रयोग होता है।

पादमत्स्यक

जिस प्रकार मत्स्येन्द्रासन का प्रयोग किया जाता है उसी तरह इस आसन की क्रिया विधि है। इन दोनों आसनों में केवल इतना अन्तर है कि मत्स्येंद्रासन की क्रिया करते समय एक पांव को फैलाया जाता है और उसके अँगूठे को पकड़ कर खींचते हैं और दूसरे पांव को पहले पांव की जङ्घा पर जमाकर रख लेते हैं ताकि उसकी ऐड़ी नाभि स्थान पर लगकर दवाब दे सके। मगर इस आसन में पहले पांव की स्थिति तो ठीक मत्स्येन्द्रासन के समान ही रहती है और दूसरा पांव चूतर के नीचे आराम से फस जाता है।

चित्र ६५

तैरने का व्यायाय बहुत श्रेष्ठ है क्योंकि इससे सारे शरीर को काफी कसरत मिलती है अतः शरीर तैरने में काफी थक भी जाता है मगर इतनी थकान के बाद आराम की समस्या सुलझाने के लिये तथा साथ ही साथ शरीर को बलशाली बनाने के लिये इस आसन का जन्म हुआ है। यह आसन बहुत लाभदायक है और विशेष ध्यान से करना चाहिये।

हठ योगिक क्रियाओं द्वारा किये जाने वाले आसन

भेखामक

प्राकृतिक नियमानुसार शरीर को सीधा खड़े करके हाथों को सम्मुख करके जोड़ने की प्रथा है। मगर हठ योगियों को सदा से प्राकृतिक नियमों के उलङ्घन हीं में आनन्द प्राप्त होता है और वह उन सारी क्रियाओं को अनूठे आसनों द्वारा पूर्ण करते हैं।

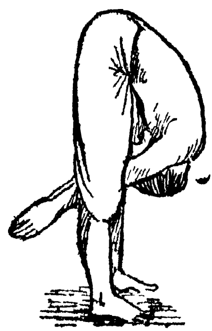

चित्र ६६

इस आसन की क्रिया सरल है। दोनों पैरों को थोड़ी दूरी पर रखकर शरीर को कड़ा रखने के बाद धीरे २ हाथों और सिर को दोनों पांवों के मध्य से निकाला जाता है और फिर गुदा के नीचे कोहनियां ले जाकर पीछे तरफ हाथ जोड़े जाते हैं।

इस तरह के आसन से शरीर पर अच्छा असर पड़ता है। रक्त का दौरा अर्धचन्द्राकर अवस्था में होता है। शरीर के हर अंग पर उसका दवाब पड़ता है और विशेष असर पेट पर होता है जिसके कारण जठराग्नि मन्द होती है, भूख कम लगती है, मगर शरीर की शक्ति का ह्रास आसन की क्रियाओं के कारण नहीं होता।

हठ साधक

[अ]

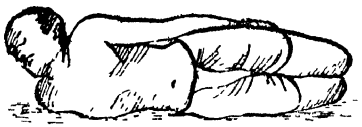

चित्र नम्बर ६७.

हठ योगियों की भी अजब समझ है । वह अपने समस्त शरीर को गठरी की तरह कड़ा करके घुटनों को पीछे की तरफ मोड़कर पिंडलियों को हाथों द्वारा पकड़ लें तथा किसी एक करवट द्वारा लेटकर प्राणायाम क्रिया की जाय ।

इस तरह से आसन करने से शरीर का रक्त एक ही तरफ चलता है । अधिक देर तक एक करवट पड़े रहने के कारण शरीर का रक्त प्रवाह एक ही तरफ हो जाता है और उसके कारण उस अंग पर विशेषतः प्रभाव पडता है ।

हठ साधक

[ब]

यह आसन उत्थित पद्मासन की अवस्था में रह कर किया जाता है । उत्थित पद्मासन से शरीर का सारा भार हाथों पर ही पड़ता है और सामान्य मनुष्य इसे आसानी से अधिक देर तक नहीं कर सकता । मगर हठ योगी इस आसन को इस अवस्था में ही बहुत देर तक करते हैं और

चित्र नम्बर ६८.

उस पर आश्चर्य यह है कि वह प्राणायाम भी करते रहते हैं। प्राणायाम करने में हठ योगियों की तुलना नहीं की जा सकती। यहां तक देखा गया है कि हठ योगी कई २ घंटों तक एक ही आसन पर जमकर बैठे हुये प्राणायाम करते रहते हैं।

इसके प्रयोग से उन्हें बल, शक्ति तथा चेतना का विकास होता है और उनकी अपनी क्रिया से मन को चैन मिलता है ।

हठ साधक

[स]

चित्र नम्बर ६६.

पृथ्वी पर लेटकर दोनों घुटनों को ऊपर उठा कर ताकि जाँघों से आमाशय पर पूरा दबाब पड़ता रहे और हाथों से घुटनों को पेट के उपर दबाने की क्रिया से ही यह आसन किया जाता है। कंधो पर जोर पड़ने के कारण और घुटनों को अत्याधिक दबाने की गरज से गर्दन कुछ ऊँची उठ जाती है और सारे शरीर पर उसका असर पड़ता है।

प्राणायाम ऐसी अवस्था में साधना टेढ़ा है मगर हठ योगियों को तो अपनी ही बातों में लाभ प्रतीत होता है अतः वह अपने ही मन के अनुसार हेर फेर वाले आसनों से सन्तुष्ट रहते हैं।

कापालिक

चित्र नम्बर ७०.

पृथ्वी के बल चित्त लेटकर घुटनों को मोड़ लेने के बाद पांवों की एड़ियों को गुदा के नीचे स्थिर करने से यह आसन बनता है। शरीर को ढाला करके गर्दन को

पीछे की तरफ ढलका देते हैं ताकि सिर पृथ्वी पर टिका जाये और श्वास की नली को ढीला छोड़कर दीर्घ श्वास लेना और निकालना प्रारम्भ करते हैं।

इस क्रिया से तमाम शरीर का रक्त मस्तिष्क पर हीं केन्द्रित होता है। क्यों कि इस आसन का विशेष असर कपाल पर पड़ता है इस कारण इसे कापालिक कहते हैं।

वैतालिक

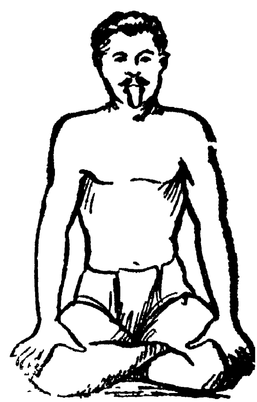

चित्र नम्बर ७१.

पहले ही कहा जा चुका है कि हठ योगियों की अपनी ही विशेषतायें होती है। दोनों पावों के घुटनों को दोनों जांघों से दाब रखकर पहले बैठा जाता है और फिर प्राणायाम साध कर मन को एकाग्र करके जिह्वा बाहर निकाल लेते हैं। चन्द्रमा का स्थान तालु में है और जीभ के स्पर्श से अमृत टपककर पेट मे जाता है अतः वह जीभ को ही निकाल कर बिना शीर्षासन किये ही अमृत बिन्दु टपकना बन्द करने में समर्थ हो जाते है।

नाट्य

समस्त आसनों के उलट फेर से हठ यागियों ने जिन आसनों का निर्माण किया और जिनको देखकर सामान्य मनुष्य हैरत में आ सकता है उन आसनों को पेशेवर लोगों ने सीखा और जनता को दिखा २ कर उनमे पैसे मांगना प्रारम्भ कर दिया जिन लोगों ने पेसे मांगना और इन आसनों को दिखाना ही व्यवसाय बना लिया वह नट कहलाये। इसी कारण इनका नाम भी नाट्य पड़ गया।

यह आसन शरीर को तोड़-फोड़ के अलावा और कोई लाभ नहीं करते। इन्हे करने से अंग २ खुल जाता है और

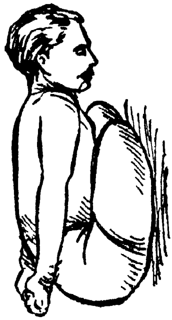

चित्र ७३

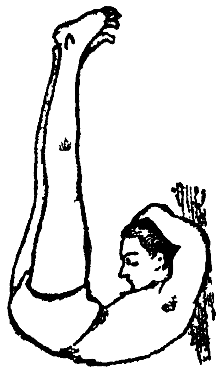

चित्र ७४

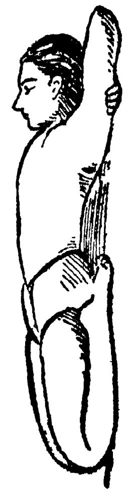

चित्र ७२

चित्र ७५

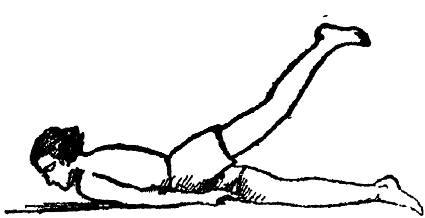

चित्र ७६

मन चाहे ढंग पर अंग चलाने की क्षमता प्राप्त होती है। अतः इन आसनों को देखकर ही सीखा जा सकता है। अगर सिखाने वाला कोई मिले तब ही सीखने की चेष्टा करें। अन्यथा लाभ के स्थान पर हानि की सम्भावना है।

चित्र ७६

चित्र ७७

चित्र ७८

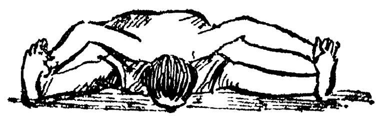

चित्र ७६

सोलहवां सर्ग
रोग चिकित्सा

पहले ही कहा जा चुका है कि आसनों द्वारा शरीर निरोगी होता है और रोगों का नाश भी आसनों से किया जाता है। आसनों की क्रिया समझते समय भी हमने रोगों पर आसनों के

प्रभाव का उल्लेख किया है और इस परिच्छेद में हम रोगों का उपचार आसनों द्वारा बता रहे हैं।

आसनों द्वारा उपचार

अजीर्ण—

शीर्षासन, जानुशिरासन, उष्ट्रासन, सर्पासन, बद्ध पद्मासन, मयूरासन, मत्स्येन्द्रासन, चक्रासन, सर्वांगासन, कर्ण पीड़ासन, वृश्चिकासन, गर्भासन, पश्चिमोत्तानासनों के नित्य करने से होता है।

अग्निमांद्य—

गर्भासन, सर्पासन, मयूर और हंसासन, शीर्षासन नित्य करने चाहिये।

आंतों के रोगों पर—

वृक्षासन, शीर्षासन, पद्मासन, गर्भासन, पवन मुक्तासन, सर्पासन, चक्रासन, मयूरासन पद्मासन, जानुशिरासग, मत्स्येन्द्रासन, जानि शिरासन, आदि करने से होता है।

आंव वात—

मत्स्येन्द्रासन, वद्ध पद्मासन, पश्चिमोतानासन, चक्रासन, उष्ट्रासन तथा वृश्चिकासन।

उदर शूल—

शीर्षासन, विशेष लाभकारी हैं।

कमर दर्द—

जानुशिरासन, वृश्चिकासन, कोनासन, हस्त पादांगुष्ठासन, चक्रासन से लाभ होता है।

कण्ठ दोष--

शीर्षासन विशेष लाभकारी हैं।

खांसी--

शीर्षासन तथा जानुशिरासन विशेष हितकर सिद्ध हुये हैं। दमा तक शीर्षासन करने से चला गया।

उदर दोष-

गर्भासन, जानुशिरासन, चक्रासन, मत्स्येन्द्रासन, उष्ट्रासन, शीर्षासन वृश्चिकासन लाभकारी हैं।

कण्ठमाला-

शीर्षासन से इसका इलाज शीघ्र होता है।

गुल्म रोगों पर-

शीर्षासन विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है।

घुटने का दर्द-

शीर्षासन करने से ठीक होता है।

जङ्घा दोषों पर-

मत्स्येन्द्रासन, जानुशिरासन, हस्तपादांगुष्ठासन, एक हस्त भुजासन, वातायनासन उपयोगी है।

श्लेषमा अर्थात् जुकाम-

शीर्षासन से एकदम ठीक होता है।

ज्वर-

शीर्षासन, मयूरासन, मत्स्येन्द्रासन, जानुशिरासन. चक्रासन, लाभकारी हैं।

तिल्ली तथा प्लीहा-

मत्स्येन्द्रासन, उष्ट्रासन, शीर्षासन, चक्रासन, जानुशिरासन, तथा वृश्चिकासन विशेष हितकर है।

नेत्र रोगों–

शीर्षासन हितकर है।

पाण्डुरोग–

शीर्षासन, बद्ध पद्मासन, सर्पासन, मयूरासन, पक्रासन, जानुशिरासन सिद्धासन उपयोगी है।

मानसिक विकारों पर–

शीर्षासन विशेष लाभकारी है।

वीर्य दोषों–

शीर्षासन, पद्मासन, सिध्द्रासन विशेष लाभकारी हैं।

यहाँ पर हमने रोगों के उपचार के लिये आपको जानकारी देने के लिये ही तालिका दी है अतः आपको उचित है कि अपनी बीमारी का इलाज करने के विचार से इस पुस्तक के स्वास्थ्य प्रकरण को पढ़कर यह विचारिये कि आपके रोग का मूल कारण क्या है और जब आप मूल तत्व तक पहुंच जायें तो फिर आसनों को इस तालिका के देखने के बाद पढ़ें और लिखे अनुसार आसनों की क्रिया को करें निश्चय ही आपको आरोग्यता प्राप्त होगी।

यदि आप सिंह की तरह बलशाली और निर्भय होकर विचरण करने की कामना करते हैं तो इस पुस्तक का लाभ अवश्य उठायें।

—: इति :—

पं० पुरुषोत्तमदास के–
हरीहर इलैक्ट्रिक मशीन प्रेस, मथुरा में शत्रुनलाल द्वारा मुद्रित।